“MARANKALAA (MARATHI AATMAKATHA) KA ANUVAAD AUR VESHLESHAN”

(A dissertation submitted to the University of Hyderabad in partial fulfilment of degree.)

MASTER OF PHILOSPHY IN HINDI

2022

ANGULWAR AKSHAY **PROF. VISHNU SARWADE**

(19HHHL07) **(SUPERVISIOR)**

PROF. GAJENDRA PATHAK

(HEAD OF DEPARTMENT)

Department of Hindi

School of humanities

University of Hyderabad

Hyderabad- 500046

Telangana

INDIA

“मरणकळा(मराठी आत्मकथा) का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण”

(हैदराबाद विश्वविद्यालय में एम.फिल.(हिंदी) की उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध)

2022

अनगुलवार अक्षय **(शोध-निर्देशक)**

(19HHHL07) **प्रो. विष्णु सरवदे**

प्रो. गजेन्द्र पाठक

(विभागाध्यक्ष)

हिंदी विभाग

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हैदराबाद- 500046

तेलंगाना

भारत

DECLARATION

I,**ANGULWAR AKSHAY**, hereby declare that this dissertation entitled **"MARANKALAA (MARATHI AATMAKATHA) KA ANUVAAD AUR VESHLESHAN" ("मरणकला (मराठी आत्मकथा) का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण")** submitted by me under the guidance and supervision of **Prof.VISHNU SARWADE**is a bonafide research work which is also free from plagiarism. I also declare that it has not been submitted previously in part or full to this or any other university or institution for the award of any degree or diploma. I hereby agree that my dissertation can be deposited in shodhganga/ INFLIBNET.

DATE: NAME: **ANGULWAR AKSHAY**

PLACE: Reg.no. : 19HHHL07

CERTIFICATE

This is to certify that the dissertation entitled **'MARANKALAA (AATMAKATHA) KAANUVAAD AUR VESHLESHAN'** **(मरणकला (मराठी आत्मकथा) का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण)** submitted by **ANGULWAR AKSHAY** bearing reg.no. 19HHHL07 in partial fulfilment of the requirements for the award of master of philosophy in HINDI as a BONAFIDE work carried out by him under my supervision and guidance which is a plagiarism free dissertation as far as i know.

As far as I know the dissertation has not been submitted previously in part or full to this or any other university or institution for the award of any degree or diploma.

Signature of supervisor

Head of department

Dean of the school

<u>अनुक्रमाणिक</u>

पृ.संख्या

भूमिका

प्रथम अध्याय:- जनाबाई गिरहे: व्यक्तित्व एवं कृतित्व' 01- 08

1.1 जीवन परिचय
1.2 बाल्यकाल एवं शैक्षिक जीवन
1.3 कृतित्व
1.4 पुरस्कार
1.5 समाज सुधारक के रूप में

1.6 लेखिका का साक्षात्कार

द्वितीय अध्याय:- 09- 88

2.1 मराठी आत्मकथा '''मरणकला' " का हिंदी में अनुवाद

तृतीय अध्याय :- अनूदित पाठ का विश्लेषण 89- 93

- 3.1 आत्मकथा का महत्व
- 3.2 सामाजिक स्तर पर शोषण
- 3.3 धार्मिक स्तर पर शोषण
- 3.4 आर्थिक समस्या
- 3.5 असमानता की समस्या

- **3.6 स्त्री के प्रति हीन भावना**
- **3.7 अंधविश्वास**
- **3.8 भाषा-शैली**

चतुर्थ अध्याय : अनुवाद का महत्व एवं अनुवाद की समस्याएं 94- 98

- **4.1 व्याकरण संबंधी समस्याएँ**
- **4.2 लिंगगत समस्याएँ**
- **4.3 वचनगत समस्याएँ**
- **4.4 कारकगत समस्याएँ**
- **4.5 शब्द एवं अर्थ-भिन्नता**
- **4.6 लिप्यांतरण की समस्या**
- **4.7 वाक्यगत समस्याएँ**
- **4.8 सांस्कृतिक समस्याएँ**
- **4.9 मुहावरों का प्रयोग**

उपसंहार 99- 101

संदर्भ-ग्रंथ सूची 102

भूमिका

हिंदी साहित्य में आत्मकथा एक लोकप्रिय विधा है। इसमें जीवन का यथार्थ होता है, काल्पनिकता नहीं होती है । इस विधा का विकास आधुनिक युग में हुआ है । स्वजीवन के सभी पहलुओं को उजागर करने के लिए आत्मबल की आवश्यकता होती है । आज की समाजशास्त्रीय आलोचना के दौर में आत्मकथा की विधा आलोचकों और पाठकों, दोनों के लिए महत्वपूर्ण हो गई है । ईमानदारी से लिखी गई आत्मकथाएं सामाजिक-व्यवहार के अनेक तथ्य और ब्यौरे उपलब्ध कराती हैं । रचनाकार आत्मकथा के माध्यम से अपने जीवन का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है । जिसमें जीवन की सच्चाई होती है । हिंदी साहित्य में आत्मकथा साहित्य की काव्य परंपरा रही है । हिंदी में श्रेष्ठ आत्मकथाएं लिखी गई हैं, कुछ आत्मकथाएं अन्य भाषाओं से हिंदी में अनूदित होकर आई हैं । इस प्रकार हिंदी आत्मकथा साहित्य का विकास दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है ।सन् 1960 के बाद मराठी भाषा में दलित एवं आदिवासी साहित्य का विकास हुआ है । मराठी दलित साहित्य के प्रभाव से हिंदी में दलित साहित्य का निर्माण हुआ है । इसमें स्वकथन साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है ।दलित घुमन्तू स्वकथनों में लेखक के जीवन के साथ-साथ समाज विशेष का भी चित्र हमें देखने को मिलता है । इसमें समाज-जीवन के विविध पहलू अभिव्यक्त हुए हैं ।इससे समाज जीवन की वास्तविकता दुनिया के सामने उजागर हुई है ।इसलिए इस तरह के स्वकथन सामाजिक दस्तावेज बन गए हैं।

भारत एक विशाल देश है ।जिसके सभी राज्यों में कम और ज्यादा मात्रा में आदिवासी पाए जाते हैं ।उनमें से एक है महाराष्ट्र । भारतीय संस्कृति विश्व की प्रधान संस्कृति है ।हजारों वर्षों की सांस्कृतिक प्रथाओं, भाषाओं, रीति-रिवाजों आदि में विविधता बनी रही है ।जो कि आज भी विद्यमान है, और यही अनेकता में एकता भारतीय संस्कृति की विशेषता है ।जिसके कारण भारत जैसे बहु-सांस्कृतिक देश में अनुवाद का बहुत महत्व है । मराठी से हिंदी में अनूदित घुमन्तू जनजातियों के स्वकथनों में महाराष्ट्र की अलग-अलग घुमन्तू जनजातियों का जनजीवन चित्रित हुआ है । इसमें घुमन्तू समाज के पारिवारिक, वैवाहिक, संस्कार, वेशभूषा, रीति-रिवाज, रूढ़ि-परंपरा, लोक-जीवन, त्यौहार, देवी-देवता, अंधश्रद्धा, लोक-भाषा आदि का चित्रण हमें देखने को मिलता है । अपने अभाव-ग्रस्त जीवन में भूख मिटाने के लिए इन्हें कभी चोरी करनी पड़ती है, तो कभी किसी और की गुलामी करनी पड़ती है । फिर समाज-व्यवस्था और पुलिस प्रशासन व्यवस्था इन्हें हमेशा शंकाकी दृष्टि से देखती है तो कभी-कभी बिना वजह इन्हें हिरासत में लेती है । इन पर हमेशा कहीं ना कहीं, किसी ना किसी बिना वजह अत्याचार होते रहते हैं ।इस दयनीय स्थिति का वर्णन घुमन्तू लेखकों के स्वकथनों में अभिव्यक्त हुई है । इस परिप्रेक्ष्य में घुमन्तू जनजातियों के स्वकथनोंका अनुवाद और विश्लेषण करना आवश्यक है ।

इस तरह के विचारशील और संवेदना से पूर्ण आत्मकथा को दूसरी भाषाओं के साथ जोड़ना मुझे जरूरी लगा । दूसरी भाषाओं से जोड़ने के लिए इस कृति का अनुवाद जरूरी था । इसलिए घुमन्तू समाज के सांस्कृतिक परिवेश, उनकी जीवन-शैली और उनके विविध समस्याओं का अध्ययन प्रस्तुत करना मेरे इस लघु-शोध कार्य का उद्देश्य है ।आज अनुवाद का विकास उपनिवेशीकरण के साधन के रूप में हो रहा है ।भारतइंग्लैंड का एक उपनिवेश था।इंग्लैंड ने भारत का आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक रूप से शोषण किया।शिक्षा एवम् आर्थिक क्षेत्रों में स्वाधीनता के बाद भी भारत को पाश्चात्य देशों पर निर्भर रहना पड़ रहा है ।आज हम

अपने पड़ोसी भाषा-भाषी राज्यों- तेलुगु, मराठी या ओडिया आदि के बारे में, उनकी समस्याओं के बारे में कम जानते हैं;लेकिन अमेरिका या इंग्लैंड के बारे में अधिक जानते हैं जो उपनिवेशवाद की त्रासदीहै ।आज भारत में उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया शुरू हो गयी है ।उपनिवेशवाद के नियंत्रण से बचने का एक ही रास्ता है-भारतीय संस्कृति को समझाना तथा उसकी समस्याओं को सुलझाना।भारतीय संस्कृति के शक्तिशाली केन्द्रों का अन्वेषणअनुवाद द्वारा संभव है ।

आज हर विकसित देश ने यह स्वीकार किया है कि उसके विकास में अनुवाद एक विलक्षण उपकरण रहा है ।देश-विदेश की में भाषाओँ में जो विचार-मूल्य उपलब्ध हैं,वे समग्र मानव-सृष्टि के कल्याण हेतु प्रस्तुत होते हैं।वास्तव में आज अनुवाद सूचना-प्रौद्योगिकी तथा राष्ट्रीय उन्नयन की रीढ़ है ।जिस अनुवाद में निष्ठा और स्वछंदता दोनों ही होते हैं, वही अनुवाद सर्वश्रेष्ट होता है ।

आधुनिक युग में समूचे विश्व की जनता में समकालीन साहित्य को पढ़ने की रुचि औरअन्य भाषाओं के साहित्य के प्रति जिज्ञासा का भाव जागृत हो रहा है । विश्व-मानव के विश्व-साहित्य की कल्पना साकार होने का स्वप्न मनुष्य देख रहा है । इसी कारण आज विश्व भर में अनुवाद की संभावनाएं बढ़ रही हैं । इस दौर में मानव जीवन के लिए अनुवाद की उपयोगिता अत्यधिक बढ़ गई है । सभी देशों की विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध उत्कृष्ट साहित्य को जन-सामान्य तक पहुँचाने का एक ही माध्यम है- अनुवाद। आज का मानव किसी भी देश, काल और भाषा विशेष की रचना को अल्प-समय में पढ़ने का आकांक्षी हो गया है । इसलिए अनुवाद को आज दोयमदर्जे का नहीं बल्कि उसे प्राथमिक एवं महत्वपूर्ण कर्म के रूप में स्वीकार किया जा रहा है । भारत जैसे बहु-भाषी देश में अनुवाद की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है । भारत जैसे बहु-सांस्कृतिक देश में अनुवाद का काफी महत्व है । इसका महत्व और भी बढ़ जाता है, जब इसको दलित और आदिवासी जैसे हासिए के साहित्य से जोड़ा जाता है ।

मेरे लघु-शोधकार्य का विषय है -“मरणकला (मराठी आत्मकथा) का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण” । यह लघु-शोधप्रबंध का कार्य प्रोफेसर विष्णु सर्वदे के दिशा-निर्देश में किया गया है । इस लघु-शोधप्रबंध का कार्य अनुवाद कर्म द्वारा ही सम्भव हुआ है, इसलिए यह जानना पहले जरूरी है कि इस शोध कार्य में किस प्रविधि को अंगीकार किया गया है। अनुवाद की अनेक पद्धतियाँहैं, पर इस लघु-शोधप्रबंध में शब्दानुवाद के साथ-साथ भावानुवाद की पद्धति अपनाई गई है । अनुवाद करते समय अर्थ की संप्रेषणीयता और मूल पाठ के भाव को ध्यान में रखा गया है। इस लघु-शोधप्रबंध का उद्देश्य दोनों भाषाओं की संस्कृति और साहित्य को एक साथ जोड़ना है, साथ ही साथ मराठी आदिवासी साहित्य को हिंदी पाठकों के सामने लाना भी शोध का एक उद्देश्य रहा है । हिंदी और भारतीय भाषाओं के मध्य सांस्कृतिक संबंधों के विकास में अनुवाद एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

प्रस्तुत लघु-शोधप्रबंध को मैंने चार भागों में बाँटा है । प्रथम अध्याय है- "जनाबाई गिरहे का व्यक्तित्व एवं कृतित्व" इस अध्याय में रचनाकार का जीवन-परिचय, उनके सामाजिक-कार्यएवं साहित्यिक परिचय दिया गया है। द्वितीय अध्याय में - "मरणकळा" आत्मकथा का अनुवाद किया गया है । इस अध्याय के अंतर्गत मूल पाठ को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित किया गया है । तृतीय अध्याय है- अनूदित पाठ का विश्लेषण। इसके अंतर्गत अनूदित पाठ का विश्लेषण किया गया है। चतुर्थ अध्याय है- इसके अंतर्गत मूल पाठ से हिंदी में रूपांतरित करते समय व्याकरणगत जैसे- लिंग, वचन, कारक, शब्दगत समस्याएं, लिप्यांतरण की समस्याएं, वाक्यगत समस्याएं, पारिभाषिक समस्याएं मुहावरों का प्रयोग आदि समस्याओं को ध्यान में रखते हुए इस अध्याय का विश्लेषण किया गया है।

प्रथम अध्याय

जनाबाई गिरहे ;- व्यक्तित्व एवं कृतित्व’

- 1.1 जीवन-परिचय
- 1.2 बाल्यकाल एवं शैक्षिक जीवन
- 1.3 कृतित्व
- 1.4 पुरस्कार
- 1.5 समाज सुधारक के रूप में
- 1.6 लेखिका का साक्षात्कार

1.1 जीवन-परिचय

जनाबाई गिरहे मराठी दलित महिला साहित्यकारों में से हैं । वे मराठी के प्रतिभा-सम्पन्न दलित साहित्यकारों में से एक हैं।उन्होंने अपनी ओर से मराठी साहित्य में योगदान देने का संपूर्ण प्रयास किया है । इनका जन्म 14 जुलाई 1955 में महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिलेके पाथर्डी नामक गाँव में हुआ था ।

जनाबाई गिरहे जी का जन्म एक आदिवासी (अनुसूचित जनजाति) परिवार में हुआ । उनके परिवार की स्थिति बहुत ही दयनीय थी । इनके रहने का कोई ठिकाना नहीं था । इनके परिवार 'गोपाल' समाज का होने के कारण इनको सभी लोग चोरी करनेवाले समझते थे । इसलिए इनको कोई काम नहीं मिलता था । काम ना मिलने का कारण इनको भीखमाँग कर ही खाना पड़ता था ।

1.2 बाल्यकाल एवं शैक्षिक जीवन

एक घुमन्तू समाज में जन्म के कारण इनका कोई गाँव तय नहीं था।जहाँ भी जाते थे उस गाँव में केवल दो-चार दिन के मेहमान । इस कारण से इनके परिवार में कोई पढ़ा-लिखा नहीं था।लेकिन इनके पिताजी का सपना था की बेटी को पढ़ा-लिखाकर मास्टर बनाना है । पिताजी के हठ के कारण इनको शुरूआती दौर में स्कूल जाना पड़ा । उसके बाद धीरे-धीरे इनको पिताजी के बातों से पढाई में मन लगने लगा।पिताजी ने इनका दाख़िला पास के पाथर्डी नामक गाँव के एक स्कूल में करा दिया । जब इन्होंने स्कूल जाना शुरू किया तो परिवार में खाने-पीने की बहुत परेशानी होने लगी ।

जनाबाई गिरहे जब स्कूल जाती थीं तब उनके पास पढ़ने के लिए न किताब थी, नही लिखने के लिए पटिया थी । वे सुबह-सुबह गाँव में जाकर भीख माँगकर लाती थीं, और उसे खाकर स्कूल जाती थीं । उनका हाल देखकर कक्षा में उनसे कोई बात नहीं करता था । सब साथी चोर की बेटी कहकर मज़ाक उड़ाते थे । स्कूल के बच्चों के अलावा इनके बिरादरी के लोग भी इन्हें भला-बुरा कहना शुरू करने लगे थे, इनके पढ़ाई के चलते माता-पिता को भी सजा भुगतनी पड़ी । कारण यही है कि गोपाल समाज के लड़कियाँ पढ़ाई नहीं करती हैं इसी कारण इनके परिवार को जाति से बाहर करदिया गया । तब उनके पिताजी ने ठान ही लिया की बेटी को पढ़ाना है और मास्टरनी बनाकर इन लोगो को दिखाना है।लेकिन तब भी इनका मन गरीबी के कारण पढाई में नहीं लग रहा था । पिताजी के समझाने और घर की स्थिति देखकर उन्होंने पढ़ाईकर अध्यापक बनना है ऐसा निश्चय किया किया । जब वे डी.एड. की पढाई कर रहीं थीं तभी उनका विवाह ओंकार कचरू गिरहे के साथ हो गया ।

1.3 कृतित्व

जनाबाई गिरहे मराठी आदिवासी के साहित्य के प्रतिष्ठित लोगों में से एक हैं । इन्होंने मराठी साहित्य में शोषित, गोपाल समाज, घुमन्तू, झोपड़-पट्टियों, और गाँव के किनारे रहते हुए हर दो-तीन दिन को जगह बदलने जनजातियों के लोगों का यथार्थ चित्रण कियाहै ।

जनाबाई का जन्म एक घुमंतू आदिवासी समाज में होने के कारण जातीय भेदभाव को बचपन से ही देखा है और अनुभव भी किया है।हर भाषा में आदिवासी साहित्य देखने को मिलता है । हमारा भारत भिन्नता में एकता कहलाने वाला देश है । किंतु देश में जाति और वर्ण-व्यवस्था ने एक ऐसे समाज व्यवस्था को जन्म दिया जिसकी गतिशीलता ने निरंतर जाति के शोषण तंत्र को विकसित किया ।

गोपाल समाज (आदिवासी) को उनके अधिकार मिलना चाहिए, उन्हें समाज में समान दर्जा मिले, जल-जंगल-जमीन पर इनको भी अधिकार मिलना चाहिए।इन भावनाओं को उजागर करना ही आदिवासी लेखन का उद्देश्य रहा है।मरणकला आत्मकथा द्वारा लेखिका ने अपने समाज की पीड़ा को और दूसरे समाज की उनके प्रति नकारात्मक सोच का वर्णन देखा जा सकता है ।

1.4 अन्य रचनाओं का विवरण

अ. कहानी संग्रह :- उघड्यावरचं जगणं

'उघड्यावरचं जगणं' यह एक कहानी संग्रह है । उघड्यावरचं का हिंदी पर्याय खुले आसमान के नीचे जीना । इस कहानी संग्रह के अंतर्गत १४ कहानियाँ संग्रहीत है । जैसे पालावरचं जग, पारधी, जन्मा आधि मरण, चोर, दोषी कोण ?, वैदू, बगायतदार अणि भटका, हूँडा, आई, कंजार भाट (बल्लो) मुलाखत, स्वाभिमान दिवस (31 अगस्त), म्हसनजोगी, स्त्री ही भटक्यांची।इस कहानी संग्रह में लेखिका ने गोपाल के लोगों का सामाजिक जीवन, जन्म-मरण का सघर्ष, गोपाल समाज की महिलाओं की समस्या आदि का वर्णन किया है ।

आ.कविता संग्रह :- पहाटगाणी

पहाटगाणीयह एक कविता संग्रह है।पहाटगाणीइसका हिंदी पर्याय सुबह के गीतइस कविता संग्रह के अंतर्गत १६ कवितायें संग्रहित है । मोल,भरतर, मांगणं, माहेर, साय, कुटन, उपकार, भवंडं, लगीन, वनवास, चूड़ा, सून, लक्ष्मी, मुलगा, दळन । इस कविता संग्रह में गोपाल समाज में प्रचलित परंपरा और शादी में होने वाले रीति-रिवाजों का पद्यमय वर्णन किया है ।

1.5 पुरस्कार

आपको 'मरणकला' आत्मकथा के लिए 'अण्णाभाऊ साठे पुरस्कार','गाडगे बाबा सामाजिक समरसता पुरस्कार' द्वारा नवाजा गया है । इसी तरह कोल्हापुर के प्रचार प्रकाशन की ओर से शिवाजी महाविद्यालय विद्यालय के प्राचार्य द्वारा भी आपको सम्मानित किया गया है ।

1.6 समाज सुधारक के रूप में

जनाबाई गिरहे ने अपने अध्यापक के जीवन काल तथा उसके बाद भी उन्होंने समाज में बहुत से बदलाव लाने के कोशिश की है ख़ास कर घुमन्तू समाज में उन्होंने जागृति लाने का बहुत प्रयास किया है । गिरहे जी ने अपने समाज के अलावा परिवार नियोजन, आपने आस-पास के गाँवों में उन्होंने शिक्षा का महत्व समझाते हुए अशिक्षा निर्मूलन का भी उन्होंने जटिल प्रयत्न किया हैं । इसके अलावा समाज में प्रचालित, अंधविश्वास, नारी अशिक्षा, दहेज़ प्रथा जैसे कई समस्याओं को लेकर उन्होंने समाज में बदलाव लाने के प्रयास किया है ।

1.7 लेखिका का साक्षात्कार

साक्षात्कार

(दिनांक: ०८-०५-२०२२ को लेखिका जनाबाई गिरहे जी से फोन पर मैंने उनके साक्षात्कार रिकॉर्ड किया है । लेखिका के उस साक्षात्कार को यहाँ पर लिखित रूप में प्रस्तुत किया है।)

प्रश्न- 1) आपके मन में आत्मकथा लेखन का विचार कैसे पनपा?

उत्तर-जब मेरा एक्सीडेंट हुआ और मेरे पैर की हड्डी टूट गई।मैं आस्पताल में भर्ती थी । मुझे देखने मेरे कई शिक्षक मित्र आते थे । उनमें से एक युवराज सर थे जो मेरे घर के पास ही थोड़ी दूर पर रहते थे । उन्होंनें मुझसे एक दिन कहा की क्यों न मैं अपने इन खाली दिनों में, जब मैं ऑपरेशन के कारण कुछ भी करने में सक्षम नहीं थी, कुछ लिखूँ । उन्होंने कहा कि तुम अपने जीवन की आपबीती ही लिखो, जिससे समाज के लोग प्रेरित हो सकें । तब तक मेरे पति ने भी एम.फिल कर लिया था । उन्होंने भी मुझे इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया । उन सबके उत्साहवर्धन के फ़लस्वरुप मैंने अपनी आत्मकथा का लेखन शुरू किया । लिखने के बाद मैंने युवराज सर को अपना लिखा दिखाया । उन्होंने तथा मेरे पति ने मेरे लेखन में कुछ परिमार्जन का सुझाव दिया । उसे मानकर मैंने कुछ सुधार किये । इस प्रकार मेरी आत्मकथा आयी ।

प्रश्न- 2) **जैसा की आपने आपकी आत्मकथा में लिखा है कि आपके परिवार विशेषतया आपके पिताजी को आपकी पढ़ाई को लेकर बहुत संघर्ष करना पड़ा ।बहुत सारे सामजिक दबाओं को झेलना पड़ा । वर्तमान समय में लड़कियों के शिक्षा को लेकर आपके समाज की मनोदशा मे कुछ परिवर्तन हुआ है ?**

उत्तर- मुझे पढ़ाने के लिए मेरे परिवार को बहुत ज्यादा संघर्ष करना पड़ा ।मुझे भी अपनी पढ़ाई के लिए बहुत ज्यादा मुश्किलों का सामना करना पड़ा । अपने समाज की मैं अकेली लड़की थी जो स्कूल जा रही थी ।मेरे गाँव के स्कूल में चौथी कक्षा तक ही पढ़ाई होती थी ।आगे के पढ़ाई के लिए गाँव से छः किलोमीटर दूर पाथर्डी के स्कूल जाना पड़ता था । मेरे गाँव की अन्य 5-6 लड़कियाँ थीं (अन्य बिरादरी की) जो मेरे साथ गाँव के स्कूल में पढ़ती थी ।मगर उन्होंने पाँचवी की पढ़ाई के लिए गाँव से दूर के स्कूल में अपना नाम नहीं लिखवाया था । मैं अपने गाँव से अकेली स्कूल जाती थी ।

मेरे स्कूल जाने को लेकर मेरे परिवार पर और मुझे मेरे बिरादरी के लोगों की फब्तियों को सुनना पड़ता था ।वे मुझे गालियाँ देते थे ।वे मेरे चरित्र पर लांछन लगाते थे । एक घटना जिसका जिक्र मैंने अपनी आत्मकथा 'मरणकला' में भी किया है कि- मैं दसवी कक्षा की छात्रा थी । मेरी परीक्षा नजदीक थी । घरपर मेरी पढ़ाई ठीक से नहीं हो पाती थी । इसीलिए पढ़ाई करने के लिए मैं घर से दूर खेत के पास पढ़ाई करने के लिए एक आम के पेड़ के निचे एकांत में अध्ययन करने के लिए चली जाती थी । एक दिन मेरे चाचा का लड़का मेरा पीछा करते हुए बकरियां चराते हुए वहीं पर आया और आते ही उसने मुझे गालियाँ देनी शुरू कर दी।उसने मेरे चरित्र पर लांछन लगानेवाले आरोप लगाए कि- मैं यहाँ किसी लड़के से मिलने आती हूँ । उसने मुझे बहुत अपशब्द कहे । मैं वहाँ से रोती हुई अपने घर आ गई ।

मेरे पिताजी मुझे पढ़ाने के लिए बाहर भेजते थे । इसीलिए मेरी बिरादरी के लोगों ने उनको अपने यहाँ किसी भी कार्यक्रम में आमंत्रित करना बंद कर दिया । मेरे पिताजी ने भी किसी के घर आना-जाना बंद करना मंजूर किया । मगर उन्हें मेरी पढ़ाई छोड़ना मंजूर नहीं था । वे थे तो अनपढ़ मगर उनके विचार बहुत ही अच्छे थे । वे जाति-पाति को नहीं मानते थे । वे जीवन में शिक्षा के महत्व को जानते थे । बिरादरी के लोग जब उनसे कहते की बेटी को ज्यादा पढाओ नहीं । किसी दिन किसी लड़के के साथ भाग जाएगी । तब मेरे पिताजी कहते कि- ब्राह्मणों, मारवाड़ियों, ठाकुरों की लडकियाँ पढ़ने जाती है । वे कहाँ किसी के साथ भाग जाती हैं।वे मेरे खिलाफ उठने वाली हर आवाज़ का मुँह तोड़ जवाब देते थे । उसके बावजूद मेरे बिरादरी के लोग जब भी मुझे अकेली देखते मुझे गंदी-गंदी गालियाँ देते थे ।मै जब पिताजी से उनकी शिकायत करती तो वे कहते- बेटी तू अपनी पढ़ाई पर ध्यान दे । वे कुत्ते है उनका काम ही है भौंकना । तुम्हें उनकी तरफ ध्यान भी नहीं देना है । बिरादरी के लोग मेरे पिताजी को बहकाने के लिए कहते थे कि बेटी को इतना पढ़ाओगे तो उसके योग्य लड़का भी तुम्हे अपनी

बिरादरी में नहीं मिलेगा । पिताजी उनको कहते मैं अपनी लड़की का विवाह गोपाल समाज में करूँगा ही नहीं ।

मैट्रिक के बाद मेरी शादी गिरहें जी से तय हुई तो सगाई होने के चार साल बाद तक बिरादरी के लोगों ने तरह-तरह की अडचनें डालकर हमारे ब्याह को रोके रखा कि किसी भी तरह मेरा विवाह न होन पाये ।वे मेरे खिलाफ बहुत सारी गंदी बाते लिखकरमेरे पति के पास पत्र भेजते थे । मेरे पति मेरे पिताजी को उन पत्रों के बारे में सूचित करते थे । मेरे पति भी समझ रहे थे की बिरादरी के लोग मेरे शिक्षित होने के वजह से मुझसे जलते है । इसीलिए वे भी उन बातों पर ज्यादा ध्यान नहीं देते थे । वे पिताजी से एक ही बात कहते थे कि किसी तरह मेरा एडमिशन डी.एड, के लिए जरुर करवा दें ।

वर्तमान समय में हमारी बिरादरी के लोगों के दृष्टिकोण में अब बहुत ज्यादा परिवर्तन आया है । वे लोग अब शिक्षा के महत्व को समझ रहे है । स्वयं मेरे परिवार में मेरे बेटे, बेटियाँ और बहू उच्चे शिक्षित है । मेरे बिरादरी के मेरे साथ के जो लड़के पढ़ रहे थे उनकी शादी भले ही किसी अनपढ़ लड़की के साथ हो गयी हो मगर उनके बच्चे अच्छी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। कइयों की स्थिति तो बहुत बेहतर है । समाज के लोग की अपने लड़के-लड़कियों को शिक्षा के प्रति जागरूकता में बहुत ज्यादा वृद्धि हुई है । मेरे समय में भले ही मेरी बिरादरी के लोगों की मानसिकता लड़कियों की शिक्षा के प्रति संकीर्ण थी मगर अब ऐसा नहीं है । जो भी सक्षम है वे अपने पाल्यों को स्कूल भेज रहे है ।

प्रश्न- 3) क्या आपके समाज की लड़कियों की शिक्षा को लेकर सरकार से अपेक्षित सहायता प्राप्त हो रही है ?

उत्तर-सरकार की योजना के अनुसार हमारे समाज के छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्ति देने का प्रावधान है मगर अधिकतर विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति दो-दो साल तक मिलती नहीं है । जिनको मिलती भी है उनको समय से नही मिलती है । सरकार को इनमे सुधार लाने की आवश्यकता है, ताकी बच्चे अपनी छात्रवृत्ति का सदुपयोग अपनी पढ़ाई में कर सकें।

प्रश्न- 4) जैसा कि अन्य विमुक्त एवं घुमंतू जन समुदाय में हम देखते है कि लग-भग हर समुदाय का अपना पैतृक व्यवसाय होता है । जैसे आपने आत्मकथा में अपने समुदाय के व्यवसाय के बारे में लिखा है की उनका कोई निश्चित पैतृक व्यवसाय नहीं था । वर्तमान समय में आपके समुदाय के लोग किन कार्यो में संलग्न है ?

उत्तर- मेरी जो गोपाल बिरादरी है आजादी के पूर्व उसका काम शिकार करना, चोरी करना आदि था । जिसके माध्यम से वे अपने गुजारा करते थे । मगर आजादी के बाद धीरे-धीरे हमारी बिरादरी के लोगों ने समाज के मुख्यधारा के लोगों को देखकर उनका अनुसरण करना प्रारंभ किया । उन्होंने धीरे-धीरे अपने बच्चों को शिक्षित करने की ओर ध्यान दिया । अब हमारी बिरादरी के बहुत से लोग अच्छी जगहों पर नौकरी करके सुखमय जीवन व्यतीत कररहे हैं।यही स्थिति कमोबेश हर घुमन्तू समुदाय के लोगों की है ।पहले उनका रीति-रिवाज क्या था, पेशा क्या था उसे छोडकर अब वे शिक्षित होकर समाज की मुख्यधारा में शामिल हो रहे हैं।लेकिन अभी भी कुछ घुमन्तू जनजातियाँ है जिनके लोग बहुत ही नारकीय जीवन जीने को अभिशप्त हैं।उनकी स्थिति बहुत ही खराब है । सरकार द्वारा घुमन्तू लोगों की स्थिति में सुधार हेतु ठोस, धरातल पर दिखने वाले कदम उठाने की आवश्यकता है ।जिससे ये लोग भी समाज की मुख्यधारा में आकर देश की उन्नति में भागीदार बन सकें।

हमारे समाज का मुख्य व्यवसाय पशुपालन है । पशुओं से प्राप्त दूध आदि का बेचना जीविकोपार्जनहेतु भेड़, बकरी, गाय भैंस आदि पालना, बेचना यही हमारी बिरादरी का मुख्य काम था । समाज में हमारी बिरादरी के लोगों के प्रति अविश्वास थाक्योंकि घुमन्तू समाज के लोगों को तथाकथित मुख्यधारा के समाज के लोग अपराधी वृत्ति का मानते थे । इसी कारण वे हमारी बिरादरी के लोगों को काम पर रखने से परहेज करते थे । हालाकि अब धीरे-धीरे समाज के लोगों का दृष्टीकोण हमारे बिरादरी के प्रति बदला है । सरकार का हमारी घुमन्तू बिरादरी के उत्थान के प्रति दृष्टिकोण संतोषजनक नहीं है। हमारे समाज की ओर विभिन्न सामाजिक संगटन भी उपेक्षा का भाव ही रखते है । सरकार से सिर्फ बैंक के सामान्य कर्ज की व्यवस्था है, बाकी कोई विशेष योजना सरकार की हमारे समाज के उत्थान की नहीं है । सरकार में भी हमारे समाज के लोगों की भागीदारी लगभग नगण्य ही होती है ।

प्रश्न- 5) आपके समाज की सबसे प्रमुख समस्याओं में से एक है बसने के निश्चित स्थान का न होना था ।जिसके कारण उन्हेंकुछ-कुछ दिनों पर अपना निवास स्थान बदलना पड़ता था । क्या आपका समाज इस समस्या से उबर पाया है ?

उत्तर- लगभग २१ वीं सदी के प्रथम दशक तक हमारे समाज के बहुत से लोगों के पास बसने के लिए कोई निश्चित स्थान नहीं था । वे किसी गाँव के बाहर अपना डेरा लगते थे । कुछ दिन बाद गाँव वाले उन्हें वहाँ से भगा देते थे और उन्हें अपना डेरा उठाना पड़ता था । और बसने योग्य स्थान की खोज में निकलना पड़ता था । लोगों के मरने के बाद दाह संस्कार करने भर की भी जमीन हमारे पास नहीं होती थी ।जिस गाँव से निकल कर हम बसते थे वहाँ के निवासी भी अपने श्मशान की भूमि पर हमारे लोगों का दाह संस्कार नहीं करने देते थे । किसी तरह हमारे बिरादरी केलोग मृतक को चुपके से किसी स्थान पर दफना देते थे या जला देते थे । बाद में हमारे समाज के कुछ लोगों ने समाज की इस समस्या के बारे में लोगों को जागरूक करने का

प्रयास किया । धीरे-धीरे जब बिरादरी के लोगों के पास थोड़ा धन हुआ तो सबसे पहले उन्होंने आपने रहने के लिए घर ख़रीदा । आज बसने की समस्या लगभग हमारे समाज से ख़त्म हो गयी है । हमारे समाज के लोग विभिन्न जगहों पर जमीन लेकर अपने घर बनाकर रह रहे हैं। यहाँ पर मैं और एक बात कहना चाहती हूँ कि इस समस्या के समाधान का सारा प्रयास हमारे समाज के लोगों ने व्यक्तिगत स्तर पर ही किया है । सरकार की ओर से (न राज्य, न केंद्र) पाँच पैसे की भी सहायता हमें नही प्राप्त हुई है ।

प्रश्न- 6) जहाँ पर यह आत्मकथा मरणकला समाप्त होती है, उसके बाद की अपनी जीवन यात्रा के बारे में कुछ बताइये ?

उत्तर-जबतक मैं नौकरी में थी परिवार के लोगों की रुचि सिर्फ मेरी तनख्वाह में होती थी । मेरे बच्चे छोटे थे मैंने उनको अच्छे से पढ़ाया- लिखाया । मैंने नौकरी के दौरान ही स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की ।वर्ष2012 में मैं अपनी नौकरी से सेवानिवृत्त हुई । अब मैं अपने परिवार के साथ अपने जीवन के सुखमय समय का आनंद ले रही हूँ ।

प्रश्न- 7) अपने समाज के उत्थान के लिए आपके द्वारा की गयी अपनी सक्रिय भागीदारी के बारे में कुछ बताइये?

उत्तर-अपने समाज की और अपनी जिंदगी की दुश्वारियों से लोगों को परिचित कराने के लिए मैंने अपनी आत्मकथा ‘मरणकला’ का सृजन किया । मेरी आत्मकथा के प्रकशन के बाद मुझे और मेरे पति को समाज के लोगों द्वारा वक्तव्य देने के लिए आमंत्रित किया जाता था । मैं अपने समाज के लोगों के बीच जाकर उन्हें शिक्षा के प्रति जागरूक करती थी । स्त्री शिक्षा के प्रति लोगों को विशेष रूप से प्रोत्साहित करती थी ।

प्रश्न- 8) **१८६१ में ब्रिटिश शासन द्वारा बनाये गए 'गुनहगार जनजाति कानून को स्वतंत्र भारत की सरकार ने बदलकर १९५२ में इस कानून को एक नया नाम दिया गया - 'आदतन अपराधी अधिनियम इस कानून के दुष्प्रभावों का सामना आपकी जनजाति के लोगों ने किया है ।यह कानून इनके उत्पीड़न का हथियार बन गया है ।आपके समुदाय के लोगों ने भी इसके दुष्परिणामों को भोग होगा ।आपकी जानकारी में कोई घटना है जिसमे इस कानून द्वारा आपकी बिरादरी के लोगों का उत्पीडन हुआ हो ?**

उत्तर- देश के आजादी के बाद भी घुमन्तू लोग गुलामी की बेड़ियों में जकड़े हुए थे ।उनकी स्थिति में आजादी के बाद भी कोई सुधार नहीं हुआ । उन्हें तो आजादी का अर्थ भी नहीं पता । १९५२ में नेहरु सरकार ने घुमन्तू लोगों पर अंग्रेजों द्वारा थोपे गए कानून (गुनहगार जनजाति कानून) को तो ख़त्म कर दिया मगर बदले में उन पर नया कानून (आदतन अपराधी कानून १९५२) लगा दिया गया ।

उस क़ानून के द्वारा हमारे समाज के लोगों का बहुत ज्यादा उत्पीड़न हुआ । लोग हमारे समाज के लोगों को अपराधी मानते थे । एक बार की एक घटना है- मेरे पिताजी और मेरे दादा-दादी तथा मेरी माँ के पिताजी (नाना) सब मिलकर कहीं जा रहे थे । रास्ते में एक प्याज का खेत था ।मेरी दादी ने कहा की प्याज की पत्तियों की चटनी के साथ रोटी बड़ी अच्छी लगती है । उन्होंने खेत में से प्याज की कुछ पत्तियाँ तोड़ लीं।उन पत्तियों को तोड़ते हुए खेत के मालिक ने देख लिया और सब लोगों को उसने खूब मारा । उसका आरोप था कि ये घुमन्तू लोग आज पत्तियाँ तोड़े हैं कल प्याज चुरायेंगे । तो ऐसी तथाकथित मुख्यधारा केसमाज के लोगों की हमारे प्रति मनोवृत्ति थी । जिसमें अपराध करने के पूर्व ही अनुमान लगाकर हमारे समाज के लोगों का उत्पीड़न किया जाता था । आज के समय भी हमारे समाज के प्रति मनोवृत्ति में बहुत ज्यादा

सुधार नहीं आ पाया है । वे लोग अभी भी हमारे समाज के लोगों को संदेह कीदृष्टि से ही देखते हैं।

मरणकला

प्रकरण-1. ढोल बजाते बजाते!

दादा जी अक्सर भीड़ वाली जगह पर घूमा करते थे । वहां आठ-दस परिवार के लोग भी एक-जुट होकर घूमते थे । और यह सब एक दूसरे के रिश्तेदार थे । ऐसे गाँव-गाँव घूमते देख मुझे शंका होती थी।और मैं दादी से बार-बार सवाल पूछा करतीथी । दादी कहती थीकि, हमारे जैसी परेशानी शायद किसी को नहीं हुई होगी । सुन बेटी जब तेरे पिताजी छोटे थे। बड़ा रंगनाथ, दूसरा काशीनाथ, रामभाऊ, बापू और देवराव ऐसे पाँच बच्चे और हमारे साथ तुम्हारे दादाजी के रिश्तेदार भी थे । जो रिश्तेदार सालों-साल मिल नहीं पाते थे । तेरे दादाजी को ढोल बजाने का बहुत शौक था । घर में पाँच बच्चें और हम दोनों थे, उस समय खाने की बहुत परेशानी होती थी। तेरे दादाजी बहुत तोल-मोल कर बात करते थे, और वे काम के मामले में बहुत आलसी थे, लेकिन स्वभावके बहुत अच्छे आदमी थे ।

बेटी हम तीन दिन से ज्यादा एक ही गाँव में रह नहीं सकते थे । जिस गाँव में भैंस के लिए चारा-पानी दिखा और हमारे लिए रोटी मिलने लायक गाँव मिलता वही हम उस गाँव में सामानों का गट्ठर उतारते थे । डेरा निकालना, डेरा लगाना दादाजी को बहुत झमेला वाला काम लगता था । जिस गाँव में हम जाते थे । वहाँ पर दो रात गुजारते और तीसरे दिन हमें दूसरे गाँव चले जाना पड़ता था ।

ऐसाही एक प्रसंग है । सब बच्चे छोटे थे, सिर्फ रंगनाथ ही थोड़ा बड़ा और चतुर था । दादा रोटी मांगने रंगनाथ को साथ लेकर जाते थे । वहाँ रंगनाथ के पैरों में घुंघरू बांधते और वह उसकी आवाज़ पर नाचता था गाना गाता हुए “बालेबा बा बाटेबा” ये गाते हुए रोटियाँ मांगता था । वह

छोटा था इसलिए उसे दूसरा कुछ पतानहीं था । लेकिन दादा थोड़ी दूरी पर खड़े-खड़े उस पर नज़र टिकाए उसी को देखते थे और यह ऐसे ही चलता था ।एक दिन एक गाँव में डेरा लेकर पहुंचे । रात हो चुकी थी ।खाने के लिए पास में कुछ भी नहीं था, बच्चों को भूख लगी थी । बच्चे सब दादी रोटी दो रोटी दो माँग-माँगकर पागल बना रहे थे । गुस्से में दादी दादा को गालियाँ देने लगी । अरे ओ गोपाल अब मैं क्या करूँ तुम्ही बोलो ? मैं खुद बच्चों के सामने बिछ जाऊँ क्या?तब भी दादा चुप थे । दादी छाती पीट-पीट कर रोने लगी और बड़बड़ा रही थी । गोपाल जगह देखने में व्यस्त थे और कुछ लोग तंबूलगा रहे थे । लेकिन दादा के मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला । दादा ने गट्ठर से झोला निकाला और गाँव में मांगने चले गये । अंधेरा हुआ था, गाँव में औरतें रसोई में चूल्हा जलाकर खाना बना रही थी । दादाजी गाँव में जाते ही रोटी मांगने लगे । उस जगह से वो हिल नहीं रहे थे, वही गूंगापन वही ढीठपन देखकर गाँव की औरतें गालियाँ दे रही थी।कुछ भी बोलते नहीं और वही वैसे ही खड़े हो जाते थे । उसकी आवाज़ से सारे मराठी लोग एकत्रित हो गये और दादा को पकड़कर वहीं बिठा दिया और वेभी वहीं बैठ गये । वह अपने बच्चों के बारे में सोचकर बस एक ही रट लगा रहे थे कि, “साहब मुझे छोड़ो, मुझे मेरी रोटी दे दो” पर उसके पास ज्यादा रोटी होने के कारण उसे लोग चोर समझकर छोड़ नहीं रहे थे ।

दादा अभी तक क्यों नहीं आये यह सोचकर दादी परेशान होकर उनका इंतजार कर रही थी । रात हो चुकी थी । फिर भी अभी तक वो वापस नहीं आये । दिन भर चल-चलकर बच्चे थक गये थे और अपने बाबा के इंतजार में अपने माँ की गोद में सो गये ।

दादा कह रहे थे,‘ डेरे पर मेरे बच्चे रोटी के लिए रोएंगे, मुझे जाने दो !’ वह उन से विनंती कर रहे थे । लोग उन्हें ‘चोर है तू झूठ बोल रहा है सच बता’ ऐसे कहने लगे । अंत में दादा के चाचा और चाची गाँव में आवाज़ देते हुए आगए ।दादा को पंचायत के आगे बिठा रखा था ।दोनों

घुटनों में सिर लगाकर दादाजी बैठे हुए थे । उनके पास कोई इलाज ना था । चाचा-चाची सब मिलकर गाँव वालों से विनती करके और उनके पैर पड़के दादाजी को वहाँ से लेकर आगये । वही खाली हाथ, खाली झोली लेकर आये थे । इसलिए सारी रात हम सब बच्चों ने फटे हुए चादर में भूखे पेट रात निकाली ।

इस प्रकार जीने-मरने के दिनों में खाने-पीने की भी समस्याएं सताये जारही थी ।भीड़ जिले के पास एक गाँव में मेला था ।हमें कहीं से पता चला था इसलिए दादा अगले दिन ढोल बजाने मेले मेंचलेगए । उन्हें वही दो दिन रुकना पड़ा था । अगले दिन अमावस्या थी ।दादा मेले से होकर डेरे के तरफ़ निकले । यहाँ पर डेरा लगाकर तीन दिन हो चुके थे । उनका सारा ध्यान डेरे के तरफ ही था । कोलिया के रास्ते से वह डेरे के ओर निकले । उन्हें एक आदमी दिखा और उसके हाथ टोकरी थी और उसमें टोटका का समान था । शाम होचुकी थी । दादा ने रास्ता छोड़ा था । ओझाके पीछे पीछे गए । उसने वह तोटका वहाँ रखा, दादा ने कुछ सोचा नहीं वह उसे लेकर अपने घरकी ओर निकले । वह टोटका किसी महिला से उतारा गया था । उस पर किसी बड़े भूत का साया था । उस में रखे सभी प्रकार की वस्तु को देखकर दादा के मुँह में पानी आगया, उसमें तली हुई पुड़िया, सब्जी और बहुत कुछ था । दादा टोली के जगह पर पहुंचे लेकिन वहाँतो डेरे नहीं थे, सुबह ही कोतवाल ने सारे डेरों को निकलवा दिया था । अब दादा को कुछ समझ में नहीं आ रहा था । कहाँजानाहै ? और क्या करना है ? रात बहुत हुई थी । दूर-दूर तक कुछ दिखाई नहीं दे रहा था । कोई सहारा नहीं था । दादाने वहीं पर टोटका खोला और खाना शुरू किया । बचा हुआ पोटली में बाँधकर उसे सर के पास रखकर वही सो गये ।

दादाजी ने भूत को चढ़ाने का खाना खुद खाया इसलिए खाने के कुछदेर बाद उनके छाती में घुटनसी होने लगी ।दादा यहाँ-वहाँ तिल-मिला रहेथे । वहीं पर वह यहाँ वहाँ उलट-पुलट हो रहे थे । उनकी हालत कुत्ते की तरह हो चुकी थी, आँखों के सामने मौत दिख रही थी । उस जंगल में

नतो कहीं आस-पास पानी था, ना ही कोई लोग थे । जब सुबह हुई तो गाँव के लोग आकर देखने लगे । रात में उन्होंने कुछ आवाजें सुनी थी, लेकिन गाँव वाले कोई नहीं आए । दादाजी की मौत हो गई इस बात की ख़बर कोतवाल के जरिये हमें पता चली ।

दादी यह बात सुनते ही वह जोर-जोर से चिल्लाने लगी, खुद की छाती पीट-पीट कर रोने लगीं । सब छोटे-छोटे बच्चे, उसमें सबसे बड़ा रंगनाथ नाम का बेटा था । जो की आठ-दस साल का था, बाकी सब छोटे देवराव और मेरे पिता । दादी ने देवराव को बगल में बिठाया, रंगनाथ माँ के पीछे-पीछे रोते हुए भागने लगा । “माँ पिताजी को क्या हुआ? बाबा मर गए क्या ? ”ऐसे कहकर रोता था और भागता था । डेरे पर मेरे पिता, काशीनाथ और रामभाऊ थे । दादी के साथ चार-पाँच समझदार लोग भी गए थे । डेरे पर एक ही बात चल रही थी । दादी को बस एक ही चिंता सताए जा रही थी की, अब उनका गुजारा कैसे होगा, इस संसार में हमें किसी का आसरा नहीं था ।

दादी और उस के साथी गोपाल दादा केशव के पास पहुंचे । गाँव के लोग कहने लगे इसे यहाँ से दूर लेकर जाना यहाँ नहीं दफ़ना सकते । दादी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था, कि इस शव का मैं अब क्या करूँ? कहाँ लेकर जाऊँ? गाँव वालों से हाथ जोड़कर विनती करते हुए रोने लगी, लेकिन सुनने को कोई तैयार ही नहीं था । बस एक ही बात कहते “यहाँ दफ़नाना नहीं” अंत में दादा के भाई ने धोती निकाल कर लंगोटी लगाई इस धोती में दादा को रखा और दोनों लोग मिलकर उसे गाँव से दूर लेकर आगए इसी हेर-फेर में शाम हो चुकी थी । दादी का रोना रुका नहीं था । साथ में दो बच्चे थे । वे घबराने लगे । और कहने लगे माँ तू हमारे पिता को ऐसे क्यों कर रही है ? उसे डेरे पर लेकर चलना ? लेकिन वह जीवित थोड़ी थे ?

एक खेत के किनारे बरगद का पेड़ था । दादी ने कहा था अब इस शव का क्या करे ? यहीं पर पेड़ के नीचे दफ़ना देते हैं । पर उसके पास कुदार-फावड़ा नही था । वही पास केखे तमें उन्हें कुछ मिला था जिससे खुदाई हो सके । और वहीं पर गड्ढा करके उनको दफना ने की प्रक्रिया शुरू हो गई । तभी दादी ढ़ोल को अपने सीने से लगाकर रोने लगी, और कहने लगी इसका मैं क्या करूँ ? अब इसे कौन बजाएगा । ऐसे कहते हुए रोने लगी । अंत में पेड़ के नीचे गड्ढे में दादा को सुला दिया और ऊपर से मिट्टी और छोटे-छोटे पत्थर पेड़के पत्ते डालकर दादा को ढक दिया, लेकिन उनका शरीर पूरी तरह ढका नहीं था । दादा शरीर से हट्टे-कट्टे थे । उनका आधा शरीर ढका हुआ और आधा दिखाई देरहाथा । दादी यह सोच रही थी कि 'कुत्ते बिल्ली ना जाए और वहाँ पर खुदाई ना करे । 'अगर वहा खुदाई करते तो 'मरे हुए शव को साथ में लेकर चलना पड़ता । क्योंकि गाँव के लोग यह शव देखते तो उसकी खुदाई हमें वहाँपर नहीं करने देते इसलिए यह बात किसी को पता ना चले उनको वहीं पर चुपचाप दफ़नाकर हम निकल गये ।

दादी के साथ दो बच्चे थे । वे डर के मारे कांप रहे थे । घबरा गए थे । वे कह रहे थे "माँ पिता घर कब आएंगे ?" रंगनाथ कह रहा था 'माँ मैं अब किसके साथ मांगने जाऊंगा ? हमारे लिए रोटी कौन लेकर आएगा ? कुछ देर बाद रोते-रोते हम सब डेरे की ओर चलने लगे । साथ में चार गोपाल भी थे । अब दादी का रोना बंद हो चुका था । दुःख के कारण ऐसा लगता था की आंखों का सारा पानी सूख गया था।

अब रात में डेरा उठाई अगर कोई दादा को दफ़नाते हुए देखा तो गोपाल को मारते और शव को बाहर निकालने को कहते । इसी वजह से सब गोपाल डेरा लेकर आगेवाले गाँव की ओर चलने लगे । लेकिन दादा का भाई खुद की छाती पर मारते हुए कहने लगा कि, 'ऐसा कैसे हो गया, ढोल बजाने गया और गाँव के आखिरी छोर पर मरा पड़ा मिला । ऐसा कैसे हुआ? भगवान

हमसे नाराज है क्या ? हमनें भगवान का क्या बिगाड़ा है । रात हो चुकी थी फिर भी उनका चलना बंद नहीं हुआ था । वनवास की ओर गोपाल आगे बढ़रहे थे । अपने सुख और दुःख को साथलेकर ।

दादी से पिता पूछते थे । “माँ पिता कब आयेंगे हमारे पिता दिख नहीं रहे हैं ! हमारा मन नहीं लग रहा है ! तू पिता को बहुत डांटती हो !” यह सब बच्चों के बातें सुन-सुनकर दादी मुँह फेर लेती और रोना चालू कर देती ।

दादा को गुजरे हुए तीन दिन हो चुके थे । दादी को जन्म का वनवास आया । अब खाने-पीने की चिंता थी पाँच बच्चों का पेट भर पाना कठिन था । घूमते-घूमते वहाँ जिले के नगर पहुँच गये । रंगनाथ, रामभाऊ और काशीनाथ ये सब रोटी माँगते और माँ को लाकर देते ।

बच्चों को पिता का सुख नहीं मिला था, बचपन से ही खुद का पेट खुद मांग कर भरते थे । जूठा-मूठा, सड़ा-गला खाकर ऐसे ही पिताजी के दिन गुजर गये । पिताजी के भाई थोड़े बड़े हो चुके थे काम करने लायक इसलिए अब दादी को उनके बच्चे अच्छे से रहेंगे इसकी तसल्ली होने लगी थी । दादी ने गरीबी की अवस्था में ही पाँचों बच्चों को शादी करवाई, शादी के कुछ दिनों बाद देवराव घर से अलग हो गया और आज तक उसने कभी अपना मुँह भी नहीं दिखाया ।

नगर जिला पाथर्डी तालुका सांगली नामक गाँव में मेरा जन्म हुआ, वह भी कथरियों के डेरे में । पिता को बहुत खुशी हुई । जब मैं थोड़ी बड़ी हुई समझने लायक तब पिताजी मुझे भी अपने साथ माँगने ले जाते थे और कहते ‘बच्ची बहुत भूखी है, उसके लिए थोड़ी रोटी और सब्जी दे देना’ । मुझे वहाँ की लड़कियाँ और महिलाएँ देखती और कहती “बच्ची बहुत छोटी है” इसलिए वह मेरे लिए रोटी और सब्जी ले आते ऐसे ही चार घरों की सब्जी मिलाकर एक जगह करते ।

कभी सड़ा हुआ तो कभी पानी छूटा हुआ रहता था वह सब लेकर घर जाते और तीनों मिलकर उसे खाने लगते ।

ऐसे ही एक बार नानी बीमार पड़ी थीं । वह नाना से कह रहींथीं, 'गोपाल आज मेरा मन कुछ अच्छा नहीं लग रह है मेरा दिलकर रहा है कि, मैं आज कबूतर का रस पीऊँ । यहाँ कहीं पर कुआँ हैतो वहाँ से एक कबूतर लेकर आना । तभी नाना के पास उनके दामाद आए, उनका नाम भी सूर्य भान और नाना का नाम भी सूर्यभान था । दोनों मिलकर शामको साढ़े तीनबजे पिंपलगाँव के कुएँ के तरफ निकले । वहाँ पर एक खेत में कुआँ था और वह से कोई आता-जाता नहीं था । क्योंकि वहां की जगह को अशुभ माना जाता था, लेकिन यह बात नाना को पता नहीं थी।अब नाना और चाचा ने कुएँ को जाल से ढक दिया, कुएँ के अंदर दामाद नीचे की ओर उतर रहे थे, और ऊपर नानाजी अकेले थे । जैसे ही दामाद कबूतरो को पकड़ने के लिए आगे बढ़ते, सारे कबूतर फड़-फड़ाकर उड़ जातेथे । एक भी कबूतर जाल में नहीं फंस पाता ।अंतमें जमाई थक कर ऊपर आ गये । वहीं पर कुएँ के बगल में एक सफेद बैल था, जो जोर-जोर से चिल्लाने लगा और पैरों से जमीन खोदने लगा । और थोड़ी देर बाद नाना की ओर बैल बढ़ने लगा, अब नाना घबरा गए ।नाना समझ गए , कुआं पानी से भरा हुआ और जाल में एक भी कबूतर नही फंसा और दूसरी ओर बैल पीछे पड़ा गया इसका मतलब यहाँ पर ख़तरा है । नाना ने फटाक से जाल को बाहर निकाला उसे में गाँठ बाँधी और डेरे के ओर निकल पड़े, अब बैल का घूमना बंद हो चुका था ।

नाना ने एक भेड़ देखा वह बहुत खुश हुए और कहने लगे जमाईजी अच्छा हुआ अब लक्ष्मी भी खुश होगी । ऐसे कहते हुए उस भेड़ को उठाया और अपने कंधो पर रख लिया । आगे-आगे नाना पीछे-पीछे जमाई, बड़े-बड़े कदमो से डेरे के ओर बढ़ने लगे । पर आगे जैसे-जैसे चलने लगे भेड़ के पैर धीरे-धीरे बड़े होते गए । जमाई 'मामा भेड़ को छोड़ दो वह भूत है । यह सुनते ही

नाना ने तुरंत भेड को छोड़ दिया और घबरा कर तुरंत डेरे की ओर भागे । राम-राम कहते हुए अपने हाथों में जान लेकर डेरे पर पहुँचे और आराम की सांसली ।

नाना ने यह सारी हकीकत नानी को बताया । तब वह बोली अच्छा हुआ सही सलामत घर पहुंचे । खाने-पीने के चक्कर में फ़ालतू कुछ हो जाता तो अलग की परेशानी झेलनी पड़ती' और यह कहकर चादर ओढ कर सो गयी । फिर कहने लगी कबूतर खाने की इच्छा पूरी ना हुई।

अगले दिन सुबह डेरा निकाला गया और दूहम सरे गाँव में गए । अब हिंदू नव वर्ष यानी गुड़ी पाड़वा का त्यौहार आया । पर हमारे पास कुछ भी नथा । त्यौहार मनाने के लिए सारे लोगों ने डेरे लगाये । हमारे पास खाने के लिए कुछ नाथा, पेट में चूहे दौड़ रहे थे । पिताजी और मैं माँगने निकले थे, चलते-चलते पिता कहने लगे बच्ची आज गुड़ी पाड़वा का त्यौहार है इसलिए आज मीठी रोटी खाने को मिलेगी जल्दी चल । पिताजी की ऊँगली पकड़कर मैं अपने छोटे-छोटे कदमों से दौड़ने लगी।बाबा के मीठी रोटी और सब्जियों का नाम लेते ही मेरे मुँह में पानी आने लगा था । खुद को रोकते हुए आगेकी ओर चल रहे थे । मेरे पैर में कुछ भी पहनने को नही था । दोपहर का समय था पैर रोटी की तरह सेक रहे थे पेट में कुछ भी नथा पर पूरा ध्यान उस मीठी रोटी और सब्जी के ऊपर था ।

बदन पर फटा हुआ लहंगा और चोली जिसमें से जोर से धुप लगरहीथी । जिसके कारण पूरा बदन पसीने से भीग चुका था, ज्यादा गर्मी के कारण पैरों में छाले पड़ गये जिसके वजह से चलने में मुश्किल होरहाथा । अब जलगाँव में पहुँच गयें । गाँव देखने में छोटा था लेकिन भरा-भरा सा लग रहा था । पिताने कहा की बेटी अब मैं अंधा बनता हूँ और तुम मेरे उंगली पकड़ लो । सही में बाबाने अपने आँखे बंदकी, मैंने पिता का हाथ अपने हाथों से पकड़ कर चलने लगी और पिताजी गीत गाने लगे ।

“अंधल्याला कुटका देरे राम-रघुपति राघव राजा राम”

(अर्थात- इस अंधेको भी टुकड़ा दे दे राम -रघुपति राघव राजाराम)

इस तरह वह गीत गाते हुए हर किसी के दरवाजे पर जाने लगे और मैं कहतीघर पर माँ भी अपंग पड़ी है उसे खाने के लिए घर में कुछ भी नही है और साथ में मेरी दो छोटी-छोटी बहने है जो भूखी हैं । उनके लिए कुछ खाने को देदो माँ ऐसा कहते हुए सारा गाँव घूमते थे । झोली में जैसे-तैसे थोड़ी बहुत रोटी मिल जाती थी । तब तक पिताजी अंधे ही थे, बारह घरों की रोटी और सब्जी अलग-अलग तरीकों की थी ।उन सब से पिताजी की झोली भर चुकी थी ।हमारा टूटा-फूटा बर्तन जो की जरमल का था।वह बरतन भर दाल मिली थी ।अब दो दिन खाने को मिलेगा । इसकी ज्यादा ख़ुशी थी और मैं बीच-बीच में एक-एक मिर्च-पाकौड़ा या मीठी-रोटी का निवाला खा लेती थी । अब पिताजी और मैं गाँव के बाहर आ गये थे।इसलिए पिताजी आँख खोल चुके थे दोपहर के समय धूप भी बहुत हो चुकी थी ।

अब पिताजी को बहुत भूख लगी थी । पिताजी ने एक कुआँ देखा । कुएँ की ओर हम दोनों जा रहे थे । वहाँ पर एक पुरानी झोपड़ी थी । उस झोपड़ी के अंदर एक कुत्ता था । वह बहुत जल्लाद था । उस कुत्ते ने पिता को देखा और भागते हुए आया और उनके पैर को काट लिया । मैं बहुत घबरा गयी और जोर-जोर से चिल्लाने लगी । पिता के बदन पर फटी-फटी धोती थी और पिता का पैर नंगा था । पिता के पैर से खून बहुत बह रहा था । उन्होंने अपने को बहुत संभाल रखा था पर कुत्ते के काटने की वजह से बाबा ने जो खाने से भरा झोला लिया था उस में में थोडा खाना कुत्ते को डाल दिया, खाना दिखते ही कुत्ते ने बाबा का पैर अपने मुँह से निकाला । कुत्ते ने पूरा खाना जमीन पर फैला दिया । मेरे हाथ में जो दाल से भरा कटोरा था वह कब मेरे हाथ से छूट गया मुझे पता भी नहीं चला । माँगकर जो खाना मिला था वह सारा

बर्बाद हो गया था शायद भगवान को मंजूर ही नहीं था कि वह खाना हमारे पेट में जाये।और सब खाना मिट्टी में मिल चुका था ।

पिताजी को बहुत भूख लगी हुई थी पर हमारा पूरा खाना बर्बाद हो चुका था । साल के शुरुआत में ही बाबा को कुत्ते ने काट लिया था । मैं बहुत घबरा गई थी और बाबा के पैर के बहते हुए खून को रोकने की कोशिश कर रही थी । अब बाबा और मैं क्या करूँ ? माँ भी घर पर हमारा रास्ता देख रहीं थीं ।

अब हम बिना खाने के खाली हाथ लिए डेरे की ओर चलने लगे थोड़ी देर बाद मैं और पिता डेरे पर पहुँच गये । माँ को सब हकीकत कह दिया । माँ ने मुझे अपने सीने से लगा लिया।बाद में मेरे गले लगकर जोर-जोर से रोने लगी और बोली अच्छा हुआ बेटी तुम बच गई, नहीं तो कुत्ते मेरे बेटी को रोटी की तरह नोचकर खा लेते । ऐसे कहकर माँ जोर-जोर से रोने लगी । सारे डेरों के गोपाल-गोपलिनियाँ हमारे डेरे पर इकठ्ठा हो चुके थे । और कहने लगे, " अरे बेटा तूने यह क्या किया है, नए वर्ष का यह क्या नयी आफत आ पड़ी ?

माँ ने रोते हुए पिता के पैर के घाव में चूना लगाया और उसे कुछ पेड़ों के पत्तों से बाँध दिया । इस तरह हमारा गुडी पाडवा का त्यौहार न खाना न पीना भूखे पेट गुजर गया ।

पिताजी के पास किसी की भैंस थी।पिताजी, मैं और बच्चे सब मिलकर चराने के लिए ले जाते थे । ऐसे ही एक दिन मैं और मेरी चचेरी बहन सरसा दोनों भैंस चराने गए । चराते चराते एक खेत में पहुंचे गर्मियों का समय था, खेत में जानवरों के लिए कुछ भी नहीं था । मेरे पैर में चप्पल नहीं थी, शरीर पर चिंदी जैसे फटे हुए कपड़े थे पहनने के लिए दूसरे और कपड़े नहीं थे । मैं वैसे ही एक खेत से घास चुराकर कर भागने लगी तभी नौकर ने मुझे देखा लिया, देखते ही मेरी ओर दौड़ के आया और कहने लगा रुक चोरनी कहीं की भिखारी की बच्ची, ऐसे गालियां

देते हुए मेरे पास आया ।आते ही मेरी चोटी पकड़ ली और आगे पीछे ना देखते हुए मेरे पीठ पर मारने लगा । मैं उसकी मार से मुँह के बल गिर गई । मेरे नाक और मुँह में मिट्टी चली गई। उनके मार से पीठ पर दर्द होने लगा पीठ पर पाँच उंगलियों के निशान पड़े थे।वैसे ही मैं रोते चिल्लाते हुए डेरे पर पहुंच गई । माँ ने भी देखा और वह भी रोने लगी औरउस नौकर को गलियाँ देने लगी । बाद में माँ ने पीठ पर हल्दी लगाया और कह रही थी कि एक तो कमजोर बच्ची है और उसको इस तरह मारा है, ऐसा कौन करता है ? उसका हाथ टूट जाये, उसका सत्यानाश हो, उसको भगवन का खौफ़ नहीं हुआ क्या ऐसा करते हुए, माँ गाली देते-देते रोने लगी ।

वे मेरी पीठ को सेंकने लगी और अपने माथे पर हाथ से मारने लगीं । मैं रात भर सो नहीं पा रही थी ,पीठ पर दर्द होने के कारण सारी रात करवट बदल-बदल कर गुजारना पड़ा ।

ऐसे ही हमे खाने के लिए जान देने की नौबत आती ही रहती थी । हमारी जिंदगी तो कुत्ते के जीवन की तरह हो गई थी । ऐसे ही सुसन्यात गाँव में पाटिल के बेटे की शादी थी । हमें ऐसे पता चला । हमलोग बाद में वहाँ पर सुसन्यात गाँव के किनारे अपने डेरे लगाये । शादी सुबह थी, हम मांगने नहीं गए क्योंकि शादी है तो कुछ ना कुछ तो जरुर मिलेगा । यह सोचकर टूटे-फूटे बर्तन लेकर वहाँ जाकर एक बगल में बैठे गये । सारे बराती पंक्ति में बैठे थे वे कुछ देर में उठ गए । उनके बाद गाँव के लोग बैठे वह उठगए ,जो जो आता था वह पंक्ति में बैठता और खाना खाता था और चली जाती थी । ऐसे ही पंक्तियां बैठती थी और उठती थी पर हम लोगो को कोई नहीं देखता था,हम ऐसे ही देखते रहते थे और हमारे मुंह में पानी आता था और उसको हम निगलते हुए धूप में बैठे रहते थे । शादी में बहुत सारे पकवान बने थे जिनकी खुशबु लेकर हम पंक्तियों की ओर देखते बैठे रहे । बीच-बीच में हम पंक्तियों की ओर जाते थे, मांगते थे लेकिन हमारी ओर कोई ध्यान नहीं देता था ।और ऐसे कहते थे कि “भिखारी के बच्चों भागो

यहाँ से” और हमें धक्का देते थे । पेट में सुबह से एक निवाला तक नहीं गया, और शाम के चारबजने वाले थे । खाए हुए ढेर पत्तली का कूड़े के पर फेंका गया तभी हम उसकी ओर दौड़े, और हमारे साथ कुत्ते भी दौड़ते थे । हम एक तरफ से दूसरी तरफ से कुत्ते खींचते थे । वैसे जूठा-मूठा सारा मिलाकर अपने बर्तनों में डालते थे, और अपने डेरे पर आ जाते । लेकिन हमे शादी के घर पर कुछ नहीं मिला । वह झूठा-मुठा खाकर हमने अपने मन को बहला लिया ।

लेकीन आज जूठा-मूठा ही सही खाने को मीठा मिला,शादी में लोगों के साथ पंक्तियों में ना हीं सही लेकिन कुत्तों की पंक्तियों में बैठकर कम से कम मीठा तो खाने को मिला ।

मेरे एक चाचा थे । उनका नाम काशीनाथ था । उनको एक बेटा था उसका नाम इशीनाथ था, काशीनाथ चाचा बहुत आलसी थे।अगर वह कही बैठ जातेथे, वहा पिछवाड़े में पसीने छूटने तकनहीं उठतेथे,चाहे कोई चिल्ला -चिल्लाकर मर ही क्यों ना जाये । उनका को इन सब बातों का ना तो गम होता था और ना ही कुछ पछतावा । लेकिन उनकी पत्नी बहुत ही चालक थी । वह कभी-कभी चिल्लातीं और कहती थीं अरे सुनते हो तुमको कुछ समझ आता है बच्चा भूखा जमीन पर लोट रहा है उसके लिए कुछ माँग कर लाओगे कहीं से ? पर काशीनाथ चाचा भैंस की तरह वही का वही बैठा रहा । अंत में गुस्सा होकर चाची ममाँगने चली जाती थी।वह दिखने में अच्छी थीं और शरीर से भी तंदुरुस्त थी ।

ऐसे ही एक बार एक गाँव में गये पर गाँव का नाम पता नहीं ,उस गाँव में मैं और चाची भीख मांगने के लिए गए भीख माँगकर वहां से डेरे की ओर लौट ही रही थे की आते-आते रास्ते में एक खेत था जिसमें से चाची ने एक लकड़ी खींची ली और आगे चल पड़ी ।लकड़ी को निकालते हुए खेत के नौकर ने देख लिया । जैसे ही देखा वह दौड़ते हुए हमारी ओर आने लगा ,आकर उसके सिर पर रखा लकडियों के गट्ठर को खींचने लगा । तभी उसी समय चाची जोर-

जोर से चिल्लाने लगी । उसकी आवाज डेरे तक आ रही थी आवाज सुनकर हम सारे बच्चे घबरा गए और डेरे के सभी बड़े लोग मांगने गए थे । डेरे पर सिर्फ काशीनाथ चाचा अकेले ही थे । गोपालों की पत्नियाँ चीखते-चिल्लाते हुए गए और उनके पीछे मेरे चाचा काशीनाथ चलते चलते रास्ते में से एक हरी लकड़ी निकाली । उनके पहुंचने तक बूढ़ी महिलाएं उस नौकर के हाथ-पैर जोड़ने लगे, कह रहे थे पाटिल उसको छोड़ दो उसके पति बहुत खराब आदमी है।उसके घर पर चार-चार बच्चे हैं ।उसका पति बहुत मारेगा । हमें माफ कर दो हमें छोड़ दो तुम्हारे हम पैर पढ़ते हैं।

इसी बीच काशीनाथ चाचा आ गए वहां आगे पीछे ना देखते हुए वह नौकर के पीठ पर अपनी पूरी ताकत से छड़ी से उनको मारा, नौकर नीचे गिरा और जोर-जोर से चिल्लानें लगा 'मैं मर गया मैं मर गया' और कहने लगा इन गोपालों ने सारी लकड़ियां चुरा ली और मुझे बहुत मारा यह कहकर वह गाँव की ओर भागने लगा ।

गोपाल समाज की सारी महिलाएं एकजुट होकर एक ही राग में कहने लगी, काशीनाथ तूने यह क्या किया ? अब हम लोगों पर सारा गाँव टूट पड़ेगा, अब यह सारा गाँव मिलकर लाठी-डंडा लेकर हमें मारने डेरे की ओर गालियां देते हुए भागते हुए आ रहे थे हम सारे लोग घबरा गए थे।वे लोग कहने लगे मारो-मारो इन भिखारियों को बहुत चर्बी चढ़ गई, और कोई कहने लगा जला दो उनके डेरों को और बहुत सारी गालियां देने लगे ।

लेकिन मेरे पिता बहुत दमदार और थोड़े बहुत चालाक थे । वे डेरों से थोडे दूर आगे गए और गाँव वालों से विनती करने लगे उनके हाथ जोड़ने लगे और कहने लगे क्या कहूँ पाटिल काशीनाथ मेरा भाई है । वो दिमाग से थोडा सनकी है अगर वो सनक जाता हैं तो किसी की नहीं सुनता । आपके आगे मैं खड़ा हूँ अगर मारना है तो मुझे मारो, लेकिन डेरों की तरफ मत

जाओ । मैं आपके आगे झुकता हूँ आप जैसा चाहेंगे मैं वैसे ही करूँगा । अगर कोई बच्चा गलती करता है तो क्या उसे मार ही डालोगे? ऐसे कहीं-कहीं दाल में कंकड़ सा होता ही है ।

इसी बीच एक मराठी पाटिल साहब आया, और काशीनाथ चाचा की ओर दौड़ने लगा और कह रहा था मैं निकालूंगा इसका भूत और उसे धड़ाधड़ मारने लगा वैसे ही बच्चे महिलाएं रोने चिल्लाने लगी । देखते ही देखते मार पीट शुरू हो गई सभी डेरे वालों को सब गाँव वालों ने बहुत पीटा किया और किसी को डेरे की ओर भागने का मौका नहीं मिला किसी के हाथ को चोट लगी तो किसी के पैर को चोट लगी इस चक्कर में हम सारे बच्चे भयभीत हो चुके थे मुर्गी के बच्चों की तरह डेरों के बाजू में कूड़े-कचरे में मुँह घुसाकर छुप गए ।

गाँव में से एक पाटिल साहब आए । यह सारा मामला देखा । उन्होंने वह रुकवाया तब जाकर हम लोगों ने चैन की सांस ली।उन्होंने तुरंत डेरे उठाने को कहा, नहीं तो मैं मेरे हाथों से सारे डेरे को जला दूँगा ऐसे कहते हुए निकल गए । अब आधी रात हो चुकी थी, हम सारे रो रहे थे किसी ने भी रोटियों को कोई हाथ नहीं लगाया था पेट में चूहे दौड़ रहे थे।पीठ पर मार की वजह से दर्द हो रहा था और एक तरफ भूख से पेट में दर्द हो रहा था ।

अब दूसरा कोई इलाज ना था । भूखे पेट गोपालो नें अपने-अपने डेरे को निकाला और अंधेरे में ही रास्ता पकड़नेलगे, रास्ते में बच्चे रोना रोते हुए कहने लगे भूख लगे है हम चलते-चलते ही खायेंगे ।ऐसे ही उनके साथ एक गोपालन भी रोने लगी वह माँ बनने वाली थी । उसका पेट दुखने लगा उसे बैलगाड़ी पर बिठाया गया । उसे समझ आ रहा था कि उसका बच्चा होने वाला है वह जोर से चिल्लाती और खामोश होती थी । अब हम पाथर्डी गाँव और डांग्याची वाडी दोनों गांवों के बीच में उसे एक पेड़ के नीचे बिठाए थे, वहीं पर डेरे लगाए गये । उसके आगे पीछे सब गोपलिनियाँ बैठी हुई थीं । वह उसी पल उसी मिट्टी और पत्तों में और खुले जंगल में जानवरों

की तरह उसने एक कमजोर बच्चे को जन्म दिया और सब लोग वहीं ठहरे और उसी जंगल में तीन दिन गुज़रे गए ।

अब चौथे दिन आगे केगाँव चले गए ।पां चवें दिन की रस्मकरनी थी मतलब रस्म के लिए भीड़ के बिना काम नहीं चलता अब सोचने लगे भीड़ कहां से लाएंगे ? खाने के लिए पास में रोटी का टुकड़ा नहीं और पास में एक कौड़ी पैसा भी नहीं था । अब सारे गोपाल एकत्रित होकर विचार करने लगे यह तय हुआ, कि गड़रियों के भेड़ों की भीड़से एक भेड़ को चोरी किया जाए अब और रस्मनिभाया जाए इस बात पर सबकी सहमति बनी ।

जैसे सहमति बनी उस हिसाब से साधु की वेशभूषा और हाथ में शंख लेकर मांगने निकले थे ।एक खेत में गए वहां पर चार गडरिये आम के पेड़ के नीचे बैठे हुए थे । और उनकी बकरियाँ चरते-चरते दूर-दूर तितर-बितर हो गई थी दो गोपाल भेड़ों वाले गड़रियों उनके पास गए । पिता और नाना दोनों ने भेड़ों के भीड़ में घुसे । नाना ने चालाकी से भेड़ी की कान को घुमाया और उसे अपनी झोली में डाल लिया वह हिलता ना डोलता ना आवाज करता उसका मुंह जाल में फस गया और इस तरह वह दो गोपाल गडरियों को ज्योतिष और भविष्य के नाम से उनका ध्यान भटकाने में लगे थे और कह रहे थे साहब अब बहुत भाग्यशाली हो आपके घर में भगवान की कृपा बनी रहती है, साहब आप कहां रहते हो ? ऐसे बोलते रहते हैं।वहां डेरे पहुंच गए ।भेड़ी वालों ने भेड़ों को घर साथ ले गए ।सूरज ढल चूका था । अंधेरा होने लगा गोपालों का सारा ध्यान उस भेड़े के तरफ ही था शाम को चार लोग भेड़ की तरफ गए नाना और पिता ने उस भेड़ को उठाया और अपनी पीठ पर लादकर डेरे के पास ले गए।

वैसे ही थोड़ी देर बाद गाँव में यहाँ बात फैल गई । गड़रियों भेड़ों को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते डेरे पर पहुंच गया ।पहुंचते हि उस ने डेरे पर भेड़ के चार पैर और उसका सर देख लिया ।

डेरों के आगे कुछ लोग मसाला बना रहे थे, और कुछ लोग रोटियाँ बनाने लगे और कुछ गोपाल डेरों के आगे गप्पे मारते बैठे थे, गड़रियों ने गोपालों को पीटना शुरू किया । वे किसी के चूल्हे में पानी डालते तो किसी के रोटियां फेंक रहे थे, और जो मुंह में आए वैसे गालियाँ दे रहे थे । गड़रियों ने हमारे सारे के सारे रस्म पर पानी फेर दिया और थोड़ी देर बाद गड़रियों के पीछे-पीछे सारा गाँव इकट्ठा हुआ था । उनको देख कर मुझे पिछले गाँव की घटना याद आ गई और मुझे डर लगने लगा । गाँव वालों ने हमारे भैंस, घोड़ों को छोड़ दिया था।मुर्गियों की टोकरी फेंक दी सब कुछ चकनाचूर कर दिया था ।

डेरे पर रोने की आवाज़ सुनकर पिता ने पेड़ पर भेड़ टांगा हुआ था । उन्होंने उस भेड़ को छोड़ दिया । कुछ भेड़ का माँस धोती पर जो कुछ बाकी था सबको मिलाकर बालू के अंदर छुपा दिए । और डेरे का रास्ता पकड़कर आगे बढने लगे । इन सबको देखकर गाँव के लोग उनकी ओर दौड़ने लगे, और कहने लगे " बाकी माँस कहा है ? भेड़ को कहा छुपाया ? और उनको भी बहुत पीटा गया । अंत में पिताजी को नाना को और दूसरे दो गोपालों को गाँव के लोग लेकर चले गए । और उनको माडव से बांध दिया।

मेरी माँ, नानी और बाकी सारे गोपाल रोने लगे ।साहब के पैर पड़ने लगे उनकी दाढ़ी पकड़ने लगे।पिताजी और नानाजी को बहुत मारा गया था। मार का दर्द सह-सहकर थक गये थे ।जिसके हाथ में जो आया वह मारता था ।चिकोटी काट रहे थे, गंदी-गंदी गालियां देते थे लेकिन वह सब सुनकर खामोश रहना पड़ता था ।

मेरी बड़ी चाची और नानी दोनों थोड़े चालाक और दिखने में थोड़े ठीक-ठाक थे । यह दोनों मिलकर पाटिल साहब के घर पहुंचे और कहने लगे हम दोनों भी बूढ़े हैं हमारे आदमियों को छोड़ दीजिए नहीं तो हम दोनों सास-बहू आपके कुएं में कूद जाएंगे । ऐसे कहते हुए दोनों

कुएँ की ओर दौड़ने लगी । उन दोनों को देखते ही पाटिल साहब घबरा गए और पिता को और नाना को छोड़ दिए । अब हमें ऐसे लग रहा था कि शेर के मुंह से तो हमें छुटकारा मिल गया । आधी रात हो चुकी थी, गोपाल डेरे पर आ गए । नानी, माँ, और चाची गाँव के लोगों को गालियाँ देने लगी थी । भेड़ का माँस तो खाने को मिला ही नहीं, और बदले में हम सबको परेशान किया उन मराठियों ने ।

अब सारी रात गोपालिनियाँ, गोपालों के शरीर पर लगे घाव पर मरहम पट्टी कर रही थीं।उनको नींद नहीं आ रही थी । सारी रात यूँ ही करवट बदलते-बदलते ही निकल गई, और मुझे अंदर ही अंदर डर लग रहा था, कि कहीं गाँव में से मराठी लोग और आएंगे क्या? सारे बच्चों औरतों को मार देंगे क्या ? ऐसे मुझे बार-बार लगने लगा ।

अब मैं चार-पाँच साल की हो चुकी थी । अभी तक मेरे पीछे कोई बच्चा नहीं हुआ।तब दादी, चाचा, और खानदान के सारे लोग पिता को कहने लगे, अब तुम्हारी बच्ची बड़ी हो चुकी है ।अब तुम्हें दूसरा बच्चा होने से रहा है, अब इसके पीछे कब तक पड़ेगा, अब तेरी हम दूसरी शादी करवाते हैं । अब मेरी माँ से घर में कोई ठीक से बात नहीं करते थे । और मुझसे भी नहीं, और मुझे अभागन कहते थे । और पिता कहने लगे हमारी गृहस्थी कौन सी अच्छी है, हम चार घर मांगते तब जाकर पेट को रोटी मिलती मुझे नहीं चाहिए अपनी पीठ पर दो पत्नियों का बोझ । तब से इसी बात को लेकर हमारे समाज के सारे लोग हमारी ओर तिरछी नजर से देखने लगे, और कहते सुबह-सुबह बाँझ का मुँह नहीं देखना चाहिए, नहीं तो दिन पूरा अशुभ जाता हैं । और कभी-कभी कुछ लोग कहने लगते थे, बेटे दो-चार दिन बाद बेटी अपने ससुराल जाएगी पति के घर जाएगी बुढ़ापे में किसके सहारे जिएगा कौन तुम्हारी देखभाल करेगा ।ऐसे हमेशा कहने लगे और तब से हमा तीनों को वे लोग भला-बुरा कहते थे ।

ऐसे ही एक बार ‘जामली’ नामक एक गाँव था गाँव के बाहर नदी और नदी के तट पर पाँच छः बरगद के पेड़ थे । पिता ने कहायहाँ पर अच्छी सुविधा है । अब हम लोग डेरे यही उतारेंगे कहकर सब ने डेरे वही लगाएं पानी भी है और जो भी है गाँव के लोगों ने इन्हें देख लिया वैसे ही चार-पांच लोग आकर कहने लगे अरे वहां मत रुको इस पेड़ पर भूत है । वह इंसानों का सिरमोड़कर मार देता है । यहाँ पर मत रुको यहाँ से निकलो तुम लोग !

यह सब सुनकर दादी कहने लगी ठीक है साहब घबराइए मत इस भूत की व्यवस्था हम करेंगे और सारे गोपाल सतर्क हो गए होशियार हो गए ।

अब रात हो चुकी थी दादी ने बड़े-बड़े लकड़ी इकट्ठा कर चूल्हे में आग लगाया और चूल्हे के पास बैठ गई चूल्हे में आग जल रही थी । ठीक रात के करीब बारह के समय में भूत ऊपर से नीचे उतर कर आग के पास बैठ गया । गाँव के लोगों ने कहा था कि उस भूत को नीचे का दिखता नहीं ऊपर ही देख सकता है। दादी ने आगे पीछे ना देखते हुए धीरे चूल्हे में से जलती हुई लकड़ी निकाली और भूत के निचले जगह पर लगा दी तभी भूत चिरमिरी आवाज करते हुए भागने लगा उसकी आवाज सुनकर घोड़े सारे रस्सियाँ तोड़कर तितिर-बितिर हो गए । डेरे के आगे एक भी जानवर नहीं था । हम सारे बच्चे और बड़े बहुत घबरा गए थे हमारे कान आवाज़ से फट चुके थे । पीछे मुड़कर देखने की कोशिश भी नहीं किया उस भूत ने ।

रात को इस भूत की आवाज सुनकर गाँव के सारे लोग घबरा गए और गाँव से आवाज देने लगे सारा गाँव स्कूल के आगे इकट्ठा हुआ था । गाँव के लोगों को लगा की भूत ने गोपालों का सर मरोड दिया । और कोई कहने लगा गोपालों को मार दिया इस भूत के डर से हमारे डेरे की ओर कोई गाँव वाले नहीं आ पाए ।

सुबह गाँव के लोग डेरे के पास आकर एकत्रित हो गए और पूछने लगे, अरे गोपालों उस भूत ने तुम लोगों को क्या किया ? और गोपाल रात की घटी सारी घटना उनको बोल दिए गाँव के सारे लोग हैरान हो गए और सोचने लगे इन गोपालों ने हमारी बड़ी समस्या का हल निकाल दिया है । और कहने लगे चालीस वर्षों से यह खेत जोता नहीं जा रहा था । और हमें इस बुढ़िया को देखकर लगा ही नहीं था कि यह इतनी ढीठ और हिम्मतवाली है।

देखते ही देखते यह सारी बात गाँव में फैल गई और गाँव के लोग कहने लगे गोपालों के डेरे पर एक बुढ़िया है । वह बहुत जल्लाद और चालाक है । भूत भी उतारती है उसने हमारे गाँव के पास वाले पेड़ पर के भूत का उसने बेड़ा पार कर दिया है ।

यह सुनकर गाँव के सारे लोग इस बुढ़िया के पास आ गए । कुछ लोग कभी अपनी पत्नी को लाते तो कभी-कभी कुछ लोग अपने बच्चों को लेकर आ रहे थे । और कहने लगे दादी इसको भूत ने पकड़ा है और कोई कहता था । बच्चे को देवी जी निकली है । सही कहे तो यह जादू-टोना दादी को कुछ नहीं पता था । वह जानती तक नहीं थी । उसने अब एक चाल चली ।

एक महिला को खेत जाते समय भूत ने पकड़ा था वह इनके पास आए तब पिता को बीड़ी पीने का बहुत शौक था! मिस्त्री को दादी ने कहा उसे बीड़ी से दुआ देना होगा? यह सब सुनकर उस स्त्री का पति वह सारा सामान लाकर दादी को दे दिया उसने वहां महिला के ऊपर से उतार कर उसे दूर ले गई ।

वहां पिताजी पहले ही पहुंच चुके थे वहां सब सामान दादी ने पिताजी के हाथ में रख दिया । और दादी धीरे से डेरे में पहुंच गई वहां पर महिला और उसका पति, दादी का इंतजार करते हुए बैठ गए थे । अगले दिन सुबह गेहूं दिए गए और दादी को नई चोली का कपड़ा भेंट में दिया गया ।आज पहली बार हमारे घर में नया कपड़ा देखने को मिला खाने-पीने की चार दिन की

चिंता भी नहीं थी । अगले दिन वहां से डेरे उठाए गए ऐसे घूमने फिरने का बहुत रात हो रहा था पर नसीब में तो यही लिखा है बदलने वाला थोड़ी है ।

अब हम पाथर्डी तालुका आ गए । वहाँ पास में खेड़ा नामक एक गाँव था । वहां पहुंचे और गाँव के बाहर डेरे लगाए । वह जमीन इशीनाथ शेळके नामक एक किसान की थी । नानी ने आगे के गाँव सांगवी में डेरा उतारा । हमारे डेरे से पास में ही था । वहाँ भिखारियों का देवस्थान कह जाता था । होली का त्यौहार पास आ चुका था । उसी बहाने यहाँ डेरे उतारे गए । अब अगले दिन होली का त्यौहार था ।

सुबह पिता, दादा, चाचा, अब डेरे पर हम छोटे-छोटे बच्चे और दो तीन महिलाएं थे । हम सारे बच्चे मिलकर मांगने गाँव में गए । गाँव में स्कूल का समय हो चुकाथा, वह शुरू हुई थी । पाठशाला में तीस-चालीस बच्चे थे । पहली कक्षा में तीन-चार लड़कियां भी थी । मुझे उन लड़कियों को देखकर अजीब सा लगा । हमें तो चार घर मांग कर खाने को भी मिलता नहीं है । वहीं भैंस के पीछे यह सब छोड़कर कैसे स्कूल जाना ?

मैं बारह घर की कढ़ी, दाल रोटी और बहुत कुछ लेकर माँ के पास पहुंची । अगले दिन पिताजी और दूसरे गोपाल डेरे पर आ गए । रास्ते से आते आते पिताजी और अन्य गोपाल ने पाथर्डी के किसी खेत में से ज्वार काट कर झोली भर के ले आए । तभी आते-आते उन्हें एक खेत मालिक ने देख लिया और उन्होंने सारे गोपालों को पुलिस के हवाले कर दिया । वैसे ही पुलिसवालों ने सब लोगों पर डंडे बरसाए । यह सब डेरे पर आकर किसी आदमी ने आकर कह दिया । हम सब बच्चों को डेरे पर ही छोड़ कर माँ, दादी और चाची पाथर्डी की ओर दौड़ते हुए गए । और रास्ते में भागते हुए चिल्ला-चिल्ला रोते हुए जाने लगी । लेकिन हम जैसे भिखारियों पर कौन अधिकारि दया करने वाला है ? यह सब देख कर माँ डेरे पर आई । गाँव में दगडु

सांगलिया नामों के किसान था । वह बहुत भला आदमी था । और उस के पास हम लोग गए हम लोग उस के हाथ पर जोड़ने लगे । तभी वह उठ कर हमारे साथ चला आया, और वहां गोपाल लोगों को जमानत पर पुलिस के पास से छुड़वाया । सारे गोपाल दगडु सांगलिया के हाथ पैर जोड़कर शुक्रिया अदा करने लगे और कहने लगे समय पर आप ही हमारे लिए भगवान की तरह मदद किए ।

अगले दिन पुलिस डेरे पर आ गई और धमकी देने लगी । कहने लगे 'एक गाँव में पेट नहीं भरता क्या तुम्हारा ? अब जिस गाँव में रुके हो वही रहना, वह से डेरों को उठाना नहीं, अगर हमें पता चला कि तुम ऐसे कहीं गए हो तब तुम्हारा ठिकाना लगा दूंगा । गाँव के पाटिल साहब दगडू सांगले कहने लगे की 'गोपालों पर नजर रखें' अब हम वहीं पर रहने के लिये मजबूर हो गए ।

अब पहली बार एक ही गाँव में हमारे पंद्रह दिन बीत चुके थे । पिता अकेले भीख मांगने दूर-दूर के गांवों तक जाने लगे और मैं भैंस चराने के लिए जाने लगे । एक दिन पिता जी के मन में ख्याल आया की बेटी को स्कूल भेजना है । चाचा ने भी इस्नु नाम का एक बेटे को पाठशाला में दाखिला करवा दिया । मैं जब विष्णु के साथ स्कूल जाने लगी, घर के लोग यानी चाचा, चाची, दादी कहने लगे वह लड़का थोड़ी है उसके स्कूल भेज रहा है ? तुझे क्या हुआ है तू सही तो है ना ? यह सब कहने पर पिताजी गुस्से में डेरे पर जाकर बैठ गए ।

अब गाँव का स्कूल देख चुकी थी । भैंसों को चराने छोड़कर गाँव में आती थी । स्कूल के पास जाकर बच्चों का खेल-कूद देखती थी ।

पांडुरंग नामक एक पाटिल साहब थे । उनके बेटे सकूं और आसाराम, उनकी बेटी भीमा । यह तीनों पहली कक्षा में थे । शाम को पाटिल साहब आए, और कहने लगे अरे गोपाल ! तेरे बेटी को स्कूल भेजना रे ! उसे तो अच्छे संस्कार मिलने दे !

पिताजी ने मुझे बुलाया, हाथ पकड़ कर स्कूल ले गए । पिताजी ने मास्टर जी को बाहर से आवाज़ लगाई और मास्टर जी राम-राम कहते हुए स्कूल के बाहर आ गए । और पिताजी कहने लगे 'मास्टर जी मेरी बेटी को स्कूल में दाखिला करना है ? मास्टर जी बार-बार मेरे और पिताजी की ओर देखने लगे । थोड़ी देर बाद मास्टर जी पूचे की जन्म तारीख क्या है ? तब पिताजी कहने लगे मास्टर जी हमारे पास कहाँ से जन्म तारीख मिलेगी ? "हमारे पास इसका कोई प्रमाण पत्र भी नहीं है मास्टर जी हमारी बेटी पाँचसाल की हो चुकी है मुझे ठीक से याद है!''

पिताजी केमुँह से स्कूल में बेटी का दाखिला करना है यह बात सुनते ही मैं अचंभित हो गयी और मन ही मन उत्साहित होने लगी । शाम को बारिश की बुँदे में अँधेरा छाते ही मुझे मोर जैसे फूलकर नाचना है, ऐसे बहुत कुछ लगने लगा । स्कूल का दरवाजा सोचते ही अंधेरे में दीपक की तरह मेरी जींदगी में रौशनी की तरह लगने लगा, साथ में ही मेरे मन में दादाजी के ढोल की आवाज गजगे के पेड़ के नीचे दूर-दूर तक ढोलबजने की आवाजे आने लगी थी ।

प्रकरण-०२

टूटी पाटी, फटे फुस्तक

मुझे ठीक से तारीख याद नहीं है । पिताजी ने रात में क्या सोचा था उनको ही पता है । पिताजी ने सुबह जल्दी ही मुझे जगाया और कहने लगे बेटी उठ मुँह हाथ धो ले, चाय पीकर चल मेरे साथ तेरा पाठशाला में में दाख़िला करवाना है । पिताजी के कहते ही मैं चूल्हे से एक कोयला लेकर दाँत साफ करने लगी । मुँह धोना होते ही चाय पीकर, पिताजी के साथ पाठशाला कि ओर जाने लगी थी । तभी रास्ते में दादी ने रोका, और पूछने लगी - 'अरे गोपाल यह सब क्या है ? बेटी भैंस चराती है, भीख माँगकर लाती है, यह भूल कर तू पागलों जैसी हरकतें क्यों करने लगा है । ज्यादा समझदार बन रहा है क्या ? तभी मेरी माँ आ गई । उसने आते ही मेरा हाथ पिताजी के हाथ से छुड़वाकर अपने पास ले लिया । पिताजी गुस्से में लाल हो गए थे, पिताजी ने डेरे के बाहर के चूल्हे से जलती हुई लकड़ी निकाली, और जानवरों की तरह माँ को पीटना शुरू कर दिया । माँ जोर-जोर से रोते हुए कहने लगी - मर गई रे भगवान । मैं पिताजी की फटी हुई धोती पकड़ कर खींचने लगी और चिल्लाने लगी - पिताजी माँ को मत मारो । पिताजी किसी की सुनने को तैयार नहीं थे । कुछ ही देर में डेरो में से सारी गोपालिनियाँ भागती हुई हमारे डेरे के पास आ गयीं और पिताजी को माँ से अलग कर वहाँ से दूर लेकर गयीं ।

दादी गालियाँ देते हुए कहने लगीं - 'अरे बेटी के पढाई के लिए पत्नी को मार डालेगा क्या ?' इस तरह मारते हुए तेरे हाथ क्यों नहीं टूट गये । तेरे हाथों को कुछ काटा क्यों नहीं ? उसकी पीठ सूज गई है और उसका बदन पूरा लाल हो गया है । यह सब देख कर मैं भी घबरा गई, मुझे भी अब लग रहा था कि क्या सही में पढ़ाई बहुत बुरा काम है ? मै पिताजी से कहने

लगी पिताजी मैं स्कूल नहीं जाऊँगी । पहनने के लिए मेरे पास कपड़े भी नहीं हैं, मैं कैसे स्कूल जा सकती हूँ ? मुझे अपने पास कौन बैठने देगा ?

पिताजी की एक ही इच्छा थी कि किसी भी हालत में बेटी को पाठशाला भेजना है वे कहने लगे- 'हमें किसी नही बात के लिए शर्माना नहीं चाहिए,अच्छे लोगों के साथ रहना सीखो, ऐसे क्यों सोच रही हो ।'

उस वक्त पिताजी ने किसी की नहीं सुनी । पिताजी मेरा हाथ पकड़ कर पाठशाला के सामने लेकर आए । मेरे शरीर पर फटे कपड़े थे । मेरे सिर में इतने जूँ थे कि हाथ सिर से नीचे नहीं आता था, सिर खुजा-खुजा कर नाखून मैल से भर गए थे । सिर पर कभी कंघी नहीं की थी जिसके कारणबाल आपस में बुरी तरीके से उलझे हुए थे तथा हवा लगने से उड़ रहे थे । मैं हाथ से ही अपना नाक साफ कर रही थी । हाथ की उंगलियों का ऊपरी भाग मिट्टी की तरह हो गया था और नाक में बार-बार उंगली करने से थोड़ा नमकीन हो गया था।मैं पाठशाला के आगे खड़ी थी, इसलिए मुझे देखकर स्कूल के सारे बच्चे इकट्ठा हुए, गाँव के सारे लोग स्कूल के पास आ गए । हम दोनों बाप-बेटी उन सभी लोगों को पागलों की तरह दिख रहे थे ।

तभी उन्ही में से गाँव की एक महिला आई और कहने लगी- "क्या अब इस भिखारी की बेटी भी इस पाठशाला में बैठेगी ? यह तो अब नई बात है ! मास्टर जी, इसे हमारे बच्ची के पास नहीं बिठाना,या तो उसको यहाँ से भगा दो ।यह सब बातें सुनकर मैं रोने लगी थी और पिताजी से कहने लगी- 'पिताजी, मुझे पढ़ाई नहीं चाहिए चलो डेरे पर !' लेकिन पिताजी सुनने को तैयार ही नहीं थे । उसी पाठशाला में वाघमारे नाम के एक शिक्षक थे, तभी वे बाहर आए । उन्होंने मेरा नाम और अंदाजे से ही जन्म तारीख रजिस्टर में लिख लिया । मुझे कक्षा में सारे

बच्चों के पीछे बिठाया गया । पिताजी मुझे कक्षा में बिठा करडेरे की ओर निकल गए और इस प्रकार मेरी पढ़ाई की शुरुआत हो गयी ।

मैं रोज पाठशाला जाने लगी थी । मेरे पास स्लेट-पुस्तक कुछ नहीं था । करीब दस दिन बाद वाघमारे मास्टर जी ने एक टूटी हुई स्लेट और फटी हुई पुरानी प्रथम कक्षा की ख़िताब दी ।मैंने उस टूटी हुई स्लेट पर 1-2 लिखना शुरू किया ।

पिताजी भीख मांगने के लिए दूर-दूर के गाँवों तक जाने लगे । माँ को अभी तक कुछ मजदूरी के लिए काम नहीं मिला था, माँ भैंस चराने जाती थी । मैं भी कभी-कभी पाठशाला के बाद भैंस चराने जाती । हमें खाने पीने की बहुत परेशानी होने लगी, पिताजी जब भीख माँगकर लाते तभी हम लोगों को रोटीका टुकड़ा खाने को मिलता था ।

पाठशाला के छुट्टी वाले दिन मैं भी पिताजी के साथ भीख माँगने चली जाती थी । अगले दिन जब पाठशाला गयी तो मेरा मन नही लग रहा था । पाठशाला में बैठते ही मुझे बंदीखाना जैसे लगता था । मास्टर जी मुझे कलम देते थे, लेकिन मुझे यह भी नहीं पता था कि इसे कैसे पकड़ना है ? कैसे लिखना है ? मुझे केवल एक ही काम पता था - गाँव-गाँव में जाकर रोटियाँ माँगना । उन बासी रोटियों के लिए किस जगह, कैसे, कहाँ पर क्या बात करना है बस यही मुझे पता था ।

मैं फटी पुस्तक और स्लेट का टुकड़ा हाथों में लेकर पाठशाला जाने लगी, उसके अलावा मेरे पास और कुछ भी नहीं था । जब मास्टर जी पढ़ाने लगते थे तो सारे बच्चे मेरी ओर देखने लगते थे । मेरे सिर के बाल टोकरी की तरह फैले हुए रहते है और पहनने के लिए कपड़े भी नहीं थे । मेरा शरीर मैल के वजह से काला पड़ चुका था, उसे खुजाने वाले गंदे नाखून यह सब

बच्चे देख रहे थे । यह सब देखकर मुझे लगता था कि मैं भाग जाऊँ यहाँ से लेकिन मुझे पिताजी का डर था, जा भी नहीं सकती थी । भूख की वजह से पेट में चूहे दौड़ने लगते थे । तब चुपके से मास्टर जी से नजर चुराकर गाँव में भाग जाती थी और फटी हुई झोली में रोटी माँगने लगती थी । भीख माँगने के बाद गाँव के पास वाले नदी के तट पर जाकर खाने लगती थी ।

यह सब कुछ बच्चे देखते और मास्टर जी से शिकायत करने लगते थे । एक दिन मास्टरजी ने पिताजी को यह सब कुछ बता दिया । तब पिताजी ने मेरे बाल पकड़े और चूल्हे के पास की लकड़ी लेकर मुझे पीटने लगे, इसी बीच दादी दौड़ते हुए आई और पिता को डांटने लगी । मुझे पिताजी से छुड़ाया । तभी से मैने ठान लिया कि अगर भूखा रहने का समय आया तो भी स्कूल से नहीं भागूँगी ।

पिताजी को भी यह समझ आ गया था कि बच्ची अब भूख लगने पर भी स्कूल से नहीं भागेगी इसलिए पिताजी मुझे सुबह नींद से जागते ही भीख माँगने जाने के लिए कहते थे मैं तुरंत उठ कर चली जाती थी । किसी के भी घर से बचा हुआ रात का खाना माँगकर घर आकर खाने लगती और उसके बाद स्कूल चली जाती थी।

चाहे कुछ भी हो अब मुझे अच्छा लगने लगा । बेटी स्कूल जाने लगी यह देखकर पिताजी को भी अच्छा लगने लगा। माँ को भी गाँव में रोजी-रोटी लायक काम मिलने लगा था । किसी की गुदड़ी सिलना, किसी के घर पर साफ-सफाई करना यह सारा काम रोजी-रोटी के काम आने लगा । अब एक ही गाँव में दो महीने बीत चुके थे । काम नहीं मिल रहा था । इसलिए पिताजी ने सोंचा और कहने लगे - "माँ गोपालों की टोली अब यहाँ से उठने लगी है, हम भी जाते हैं । तुम और बच्ची यहीं पर रहना । जैसे ही हमें खाने के लिए कुछ मिले तो मैं आपको लाकर देता

हूँ ।" दादी ने मना किया, और दादी कहने लगी बच्ची को लेकर चलो, इसकी पढ़ाई छूट जाने दो, लेकिन मुझे पढ़ाई से दूर करने के लिए पिताजी का मन मानने को तैयार नहीं था ।

वे एक दिन स्कूल गए और मास्टर जी से पूछने लगेकि - 'मैं काम के लिए बेटी को भी साथ लेकर जा रहा हूँ । बेटी को किसी के पास रखने के लिए कोई नहीं है । मैं परीक्षा के लिए उसे लेकर आऊंगा । आप मुझे सूचित कर देना कि कब परीक्षा है ? मास्टर जी इसके लिए राजी हो गए । मास्टर जी कहने लगे दसहरे के आस-पास अर्धवार्षिक परीक्षा होगी । तब बेटी को लेकर आना । 'पिताजी ने इसके लिए हाँ कह दिया । मैंने वैसे ही वह टूटी हुई स्लेट और फटी हुई पुस्तक लेकर पिताजी के साथ गाँव-गाँव घूमना शुरू किया । अब मुझे भी यह सब घूमना अच्छा लगने लगा । हम सब लोग साथ में घूमते-फिरते थेऔर खाने को रोटी मिलती थी । यह सब मुझे अच्छा लगने लगा । भैंस चराते हुए घूमना भी अच्छा लगता था । मेरे साथ भैंस चराने मेरे भाई सस्सी, इस्नु, ईशा और दूसरे डेरों के बच्चे भी आते थे । उनके साथ मेरा खेलने-कूदने में मन लग जाता ।

अब कुछ दिनों बाद हम ने डेरों को 'मालेगाँव' नामक गाँव में उतारा । तभी भारी मूसलाधार बारिश शुरू हुई । बारिश में हवा पानी सारा एक हुआ था । मुर्गियों को एकत्रित करके ढका गया था । वह सब दूर-दूर तक तितर-बितर हो गयीं थीं । हम लोगों ने जलाने के लिए लकड़ी जमा की थी वह सब जमीन पर इधर-उधर बिखर गयी । हमारे डेरों के बीच में से पानी की बाढ़ जाने लगी और हमारे डेरों के अंदर ऊपर से पानी टपकने लगा । अब हमें भूख लग गई थी । भूख से पेट दुखने लगा था । बारिश बंद हो चुकी थी । बारिश बंद होते ही मैं और पिताजी दोनों गाँव में भीख माँगने निकले लेकिन हम लोगों को हर घर पर एक ही बात सुनने को मिलती थी- हवा, पानी की वजह से हमने चूल्हे नहीं जलाये तो तुम लोगों को क्या डालें ? यह सुनकर हम

लोग आगे बढ़ जाते थे । एक घर के आगे गाय रास्ते में थी । वह बच्चे को जन्म देने की अवस्था में थी । सारा दिन और दोपहर निकल गया लेकिन वह प्रसव् नहीं हुआ । गाय वहीं जमीन पर उलट-पुलट कर लोटने लगी । यह देखकर पिताजी वहाँ के पाटिल साहब के पास जाकर उनसे पूछने लगे- क्या हुआ पाटिल साहब ? उन्होंने कहा मेरी गाय को मरने से अगर तुमने बचाया तो तुझे दो सेर ज्वार दूँगा । मेरे पिताजी को प्रसव का कुछ पता नहीं था । बड़े पापा और रंगा चाचा को इसके बारे में सब पता था । पिताजी ने मुझे डेरे पर चाचा को बुलाने के लिए भेजा । मैं दौड़ते हुए गयी और चाचा को बुला लायी । चाचा ने बछड़े को निकाला । उस पाटिल ने दो सेर ज्वार दिया और हम उस ज्वार को लेकर घर चले गए ।

मैं मास्टरजी द्वारा दी गई पुस्तक कभी-कभी निकालकर देखा करती थी और उस टूटी हुई स्लेट पर लिखने बैठती थी । मैं क, ख से प, स तक लिखने लगी थी । कुछ दिनों में ही दसहरा पास आया और पिताजी मुझे परीक्षा दिलवाने के लिए गाँव लेकर आए । मास्टर जी ने एक घंटे में सभी के साथ मेरी भी परीक्षा ली । उन्होंने मुझसे स्लेट पर तीस तक गिनती लिखने के लिए कहा, मैंने गिनती लिखकर मास्टर जी को दिखा दिया । मास्टर जी ने मुझे शाबाशी दी । मास्टर जी ने पिताजी से कहा ''गोपाल छः महीनों की अर्धवार्षिक परीक्षा हो चुकी है, वार्षिक परीक्षा होली के बाद होगी । बच्ची को लेकर आ जाना । अब तुम लोग जा सकते हो ।पिताजी और मैं दोनों साथ में पीछे के रास्ते से डेरे पर पहुँच गए। मेरे मन में मास्टर जी की बात बार-बार घूमने लगी, मास्टर जी ने मुझे शाबाशी दी है ! मुझे और बहुत पढ़ाई करनी होगी मास्टर जी तब और ज्यादा शाबाशी देंगे ।

मैंने इसी तरह तीसरी कक्षा की परीक्षा भी दी । लेकिन चौथी कक्षा में मास्टर जी ने कहा, 'अब इस कक्षा में पहले जैसे नहीं चलेगा । अब रोज स्कूल आना होगा । यह सुनकर पिताजी

को जैसे झटका सा लग गया । अब बेटी को कहाँ रखा जाये ? घर नहीं है, कोई ठिकाना नहीं, किसी का सहारा नहीं । एक दिन आसाराम माली से पिताजी मिले और उनसे पूछा 'आसाराम, मेरी बच्ची और माँ को तुम्हारे पास रखना चाहता हूँ । उनका ख्याल रखना । मेरी माँ तुम्हारे खेत में काम करेंगी उन्हें तुम काम के बदले जो मजदूरी देना है देते रहना और मेरी बेटी पढ़ाई करेगी, अन्यथा उसकी पढ़ाई पूरी नहीं हो पायेगी । आसाराम माली इसके लिए राजी हो गए । खेत में ही एक झोपड़ी थी । उसी में हम लोग रहते थे । वहाँ भी हमारे डेरे की तरह ही चारों ओर अरहर कि टटिया लगी हुई थी । पास में ही जानवरों की गौढ़ी (जानवरों को बाँधने की जगह) थी, इसलिए आस-पास गन्दगी फैली हुई थी ।

दादी और मैंखेत मे काम करते थे । उसके बदले जो कुछ मिलता था उसे खाकर मैं पढ़ाई करने पाठशाला पढ़ने चली जाती थी । पिताजी ने मास्टरजी से कह दिया था कि- मास्टरजी आपके कहने पर मैंने मेरी बेटी को यहीं माँ के साथ रख दिया है । उसका ध्यान रखना आपकी ज़िम्मेदारी है । मैं अब काम के लिए जा रहा हूँ, ऐसा कहकर पिताजी रोने लगे । मास्टर जी ने पिताजी को समझाया कि- 'गोपालतुम इसकी चिंता मत करो मैं ध्यान रखूँगा । बेटी को किसी चीज की जरुरत पड़ेगी तो मैं ख्याल रखूँगा । बेटी पढ़ाई करेगी तो अच्छा होगा । तेरी एक ही बेटी है, पढ़ाई करेगी तो तेरा नसीब खुलेगा । उसके नसीब से तुम्हें दर-दर भटकने से छुटकारा मिलेगा । यह सब सुनकर पिताजी चुप रह गए और कहने लगे- 'बेटी, मास्टर जी का कहना अच्छे से सुनना और ध्यान देकर पढ़ाई करना । मास्टर जी के अनुसार मैं तुझे मास्टरनी बनाऊंगा, पढाई पर ध्यान देना बेटी ।' पिताजी यह सब कहते हुए निचले रास्ते से डेरे की ओर चले गए ।

अब माँ के पास कोई नहीं था । केवल नानी मनसाबाई थीं । दिन में मैं पढ़ाई करने जाती थी । दादी माली के खेत में सारा दिन काम करती थीं । उन्हें ढेर सारे जानवरों का गोबर-पानी और दूसरा काम भी करना पड़ता था ।लेकिन ताजी रोटी, सब्जी कभी नहीं दिया उन्हें शांताबाई ने (आसाराम माली की पत्नी) ।शांताबाई दिखने में बहुत काली, पतली-सी थी और उसकी एक बेटी थी ।

कभी-कभी पिताजी हमसे मिलने आते थे । एक बार बहुत दूर शेवगाँव तालुका, आखेगाँव में हमारे डेरे थे और वहाँ से पिताजी भीख में मिली हुई फ्रॉक, जर्सी, ज्वार, मिर्च और खाने का सामान लेकर आये थे । वह पुरानी फ्रॉक धोने के बाद नयी लगने लगी । यह देख कर मुझे बहुत ख़ुशी हुई । पिताजी, माँ कैसी है ? डेरे कहाँ पर हैं ? आप कैसे आए हो ? यह सब मैं उनसे पूछना ही भूल गई और उस फ्रॉक को पहनकर यहाँ-वहाँ घूमकर बाकी बच्चों को दिखाने लगी । 'मेरे पिताजी आए हैं और मेरे लिए नयी फ्रॉक लाये हैं ।' वहीं पर परिगा नाम की एक लड़की थी वह कहने लगी, 'यह तो धुला हुआ है क्या बंदर की तरह दिखा रही है !' मैं दौड़ते हुए पिताजी के पास आ गई ।

पिताजी और दादी दोनों यहाँ-वहाँ की बातें कर रहे थे । पिताजी कह रहे थे 'बेटी ! माँ को याद नहीं करती, तेरी माँ हमेशा रोती रहती है तेरे लिए - कि मेरी बेटी क्या खाती होगी, क्या करती होगी, उसके पास तो कपड़े भी नहीं हैं । जमीन पर बिछाने के लिए और ओढ़ने के लिए चादर भी नहीं है । हमेशा तुम्हारी चिंता करती रहती है । ये सब सुनकर मेरा गला भर आया और मेरी आँखों के सामने वह डेरा, माँ, शशी, ईशा और डेरे के बाकी सारे लोग दिखने लगे । मेरा मन उदास हो गया, लेकिन पिताजी मुझे अपने साथ ले जाने वाले नहीं थे । डेरे बहुत दूर

थे । वहाँ से पिताजी पैदल आते-आते थक गए थे और बिस्तर पर अधलेटे होकर बातें कर रहे थे ।

पिताजी बहुत सुबह ही जग गए । बाहर हल्का-हल्का अंधेरा ही था । उसी समय पिताजी घर की ओर निकलते हुए कहने लगे, 'बेटी, तेरी परीक्षा होने के बाद मैं तुझे लेने आऊंगा । अच्छे से पढाई करना और पास हो जाना । ऐसा कहते हुए पिताजी अंधेरे में ही डेरे की ओर चले गए ।

गर्मियों का समयआया परीक्षा का समय पास आ चुका था । मैं सोचने लगी डेरे कहाँ होंगें ? छुट्टियों में पिताजी मुझे लेने आएँगे ? परीक्षा हो चुकी थी । माँ, पिताजी, नानी, नाना, मामा, मासी और उनके छोटे-छोटे बच्चे सब मिलकर हमारे डेरे पर आ गए थे, सब को देख कर मुझें बहुत ख़ुशी हुई । उस वक्त नानी बीमार थीं । नानी ठीक हो 'इसलिए दादा ने माँ भवानी से मन्नत माँगी कि- 'देवीमाँ भवानी मैं तुम्हें बकरे के बलि चढाती हूँ, लेकिन उसकी बीमारी ठीक कर दे ! इसलिए दादा ने भीख माँगकर लायी हुई ज्वार और दूसरी वस्तुओं को बेंचकर नानी के लिए आयुर्वेदिक दवाइयाँ और दो बकरे लेकर आ गए । दवाईयाँ दो-तीन दिन चली' उसके बाद हम सारे गोपाल मिलकर 'मव्हटयाच्या देवी' (कुल देवी) के पास दो बकरे लेकर गए ।

हम रास्ते में चलते-चलते, भाग-दौड़ करते हुए जा रहे थे । रास्ते में नानी ने एक आम का एक बगीचा देखा और वहीं पर हम लोगों ने अपने डेरे उतारे । सारे गोपाल चल-चल कर थक चुके थे । हममें सबसे बड़ी मनसा नानी थी । वह बहुत साफ़-सुथरी, किसी के हाथ का पानी तक नहीं पीती थी । सभी को प्यास लगी थी, मामा पानी के लिए एक मटकी लेकर, बगल में ही बढ़ई वाले के कूएँ से पानी लाने गए । मुझसे नानी ने कहा - 'बेटी, मुझे बहुत प्यास लगी है

मुझे तू अपने साफ-सुथरे हाथों से पानी लाकर देना ! इसलिए मैं एक ओर से दबी हुई और थोड़ा कटा छोटा सा घड़ा लेकर मैं मामा के पीछे-पीछे गई और पानी लेकर अमराई वाले खेत के तरफ आने लगी थी, रास्ते से आते-आते मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा था । मैं जमीन पर गिर गई । मुझे अच्छी खासी चोट लगी और मैं बेहोश हो गई । सारे गोपाल आपस में बातें करने लगे थे परउस बकरे को काटने से पहले ही मेरा हाथ कट गया और सब कुछ बंद हो गया ।

पिताजी, चाचा, बड़े मामा, और कुछ लोग मिलकर मुझे एक लाश की तरह लेकर बैठे थे । पिताजी नानी को डांटने लगे -तुमने बेटी का सर्वनाश कर दिया हैं, अगर मामा का लाया हुआ पानी पी लेती तो क्या मर जाती ? मैं अब क्या करूँ ? हाथ की नस टूटी है और बहुत चोट भी लगी हैं । ऐसा कहते हुए पिता और माँ दोनों जोर-जोर से रोने लगे । माँ आम के पेड़ से अपना सिर मारने लगी और कहने लगी 'मेरी इकलौती बेटी पर यह क्या आपदा आयी है ?' ऐसा कहते हुए बड़बड़ाने लगी ।

थोड़ी देर बाद कुएँ के पास रहने वाला बढ़ई आया । वह अपने साथ मिट्टी का तेल लेकर आया था । मिट्टी के तेल को मेरे हाथ पर डालकर मेरें हाथ को एक कपड़े से बाँध दिया । मिट्टी के तेल के कारण मेरे हाथों में जलन होने लगी थी जिसके कारण मैं जोर-जोर से चिल्लाने लगी । मेरे पिताजी, मामा, और चाचा ये तीनों मिलकर अपने पीठ पर लादकरकड़ी धूप में चलते-चलते मुझे 'पाथर्डी' केदवाखाने पर लेकर आए । हमारे पास जो छोटा सा घड़ा था उसे पिताजी ने पाथर्डी में चार रुपयों में बेच दिया, उसी पैसों से मेरे हाथ के लिए औषधि वगैरह ख़रीद कर हम घर आ गए । बकरे का मांस खाने का मेरा बहुत मन था, इसलिए मैं चार कोस धूप में पैदल चलकर गयी थी ! लेकिन मुझे उसे खाने का मौका नहीं मिला और ऊपर से यह चोट मिल गई ।

पिताजी मुझे गाँव लेकर आ गए, मेरेहाथ में चोट लगी हुई थी । अगले दिन सारे गोपाल दूसरी जगह जाने के लिए डेरे निकाल चुके थे, पिताजी मुझे भैंस पर बिठाकर दूसरे डेरे पर ले गए । चौथी कक्षा के पास होते ही पाँचवी कक्षा के लिए कहाँ जाना है ? क्या करना है ? इस तरह की चिंता पिताजी को होने लगी । गाँव में भी एक पाठशाला थी । बच्ची को कहाँ और किसके पास रखना है ? कैसे रह पायेगी ? ऐसे सवाल पिताजी के मन में आने लगे ।

गर्मियों की छुट्टियाँ हो चुकी थी । डेढ़ महीने बाद स्कूल खुल गए थे । पिताजी मुझे लेकर गाँव के स्कूल आ गए । मास्टरजी ने कहा, 'गोपाल तुम्हारी बेटी पास हो गई है, अब उसे पाँचवी कक्षा के लिए पाथर्डी को जाना होगा । मास्टरजी ने मेरे प्रमाण पत्र दिए । मैं और पिताजी रात में उस 'खेडे गाँव' में ही रुक गए । अगले दिन दोनों मिलकर पाथर्डी चले गए । पाँचवी कक्षा में मरकडबाई नाम की मैडम हमे पढ़ाती थीं । उन्होंने पिताजी से मेरे बारे में पूछताछ कर जानकारी प्राप्त की । तब जाकर मैडम ने मेरा दाख़िला किया । किताबों का कुछ अता-पता नहीं था । पहनने के लिएकपडे भी नहीं थे । खाने-पीने का कोई ठिकाना नहीं था । ये सारी मुश्किलें मेरे सामने ख़ड़ी थीं ।

पिताजी जंगल में जाकरबिलायतकी लकड़ी तोड़कर ले आए और उस लकड़ियों सेझोपड़ी बनाई, उसे मेरे और दादी दोनों के लिए बनायीं गयी थीं । पाथर्डी गाँव में जाकर रोटी माँगना, स्कूल जाना, पढ़ाई करना और रात में वापस आकर रहना है यह तय हो गया था ।

पिताजी हमारे पास तीन दिन तक रुके थे । मैं पाथर्डी में स्कूल जाने लगी । पढ़ाई करने के लिए मुझे मरकडाबाई मैडम किताबें दे देती थीं और पढ़ाई के बाद वापस ले लेती थीं । मेरे पास पहनने के लिए कपड़े भी नहीं थे । मैं गोपाल समाज की थी इसलिए मेरे साथ पढ़ने वाली लडकियाँ मुझे अपने पास बैठने नहीं देती थीं, मैं जिस भी जगह पर मैं बैठती थी, वहाँ पर

अगली बार कोई नही बैठता था । मुझे बहुत बुरा लगता था । इस तरह का अजीब सा जीवन था मेरा ।

मैं सुबह जल्दी ही स्कूल जाती थी । इन्टरवल (मध्यान्ह) की छुट्टी 10:30 बजे होती थी । छुट्टी के बाद मैं जल्दी-जल्दी से गाँव में चली जाती थी और भीख माँगने लगती थी । उस समय तक पेट में चूहे दौड़ने लगते थे।भीख माँगते-माँगते एक-एक निवाला मुँह में डालती और आगे बढ़ने लगती थी । गाँव के पास वाले 'राम गिरी बाबा' के चढ़ाई पर जाकर आधा खाती और आधा दादी के लिए बाँध कर रख करती थी ।

एक बार दोपहर का समय था, मैं भीख माँगने गई थी । वहाँ पर स्कूल की लड़कियों ने मुझे देख लिया । उसके बादसारी लड़कियाँ मेरे पीछे चिल्लाने लगीं - 'इतनी बड़ी होकर माँगकर खाती है भिखारी कहीं की ।' यह सब बातें सुनकर मैं परेशान होती थी और मुझे रोना आ रहा था । कक्षा में मुझसे कोई बात नहीं करता और ना ही कोई मेरे साथ बैठता था । मेरा जीवन बहुत ही अजीब सा था ।

मैं रास्ते से रोते हुए रात को घर आ गई । माँ, पिताजी की याद आने लगी थीं । अगर वो दोनों मेरे पास होते तो कितना अच्छा होता ! रात में ही मैंने दादी को सारी बातें बता दी । लेकिन बोलकर क्या फायदा पर कोई दूसरा सहारा भी नहीं थाक्योंकि भीख माँगकर ही कुछ खाने को मिलता था, और दादी भी बूढ़ी हो चुकी थी काम करने या भीख माँगने लायक नहीं थीं ।

बरसात का मौसम आ गया था । बारिश केदिन हमारे लिए बहुत कष्टकारी होते थे । बारिश होने की वजह से झोपड़ी के रास्ते में बहुत पानी जमा रहता था । गाँव के पास एक बड़ा बरगद का पेड़ था.वहाँ पर बहुत बाढ़ आती थी । वहीं पर एक नाला भी था, बारिश के पानी से उस

नाले के दोनों किनारे भर जाते थे । इस नाले को पार करने के लिए हमेशा मैं जान हथेली पर रखकर बरगद के पेड़ का सहारा लेकर झोपड़ी पर आती थी ।

एक बार एक डरावनी घटना घटी । स्कूल आने-जाने केरास्ते में कुछदुर्दांत कुत्ते रहते थे । अगर वे इंसानों को देख लेते तो छलांग लगाते हुए उनपर टूट पड़ते थे ।एक बार, स्कूल के बाद मैं वापस घर आ रही थी, अचानक बहुत तेज बारिश होने लगी।झोपड़ी का रास्ता खेत के किनारे से था । रास्ते के दोनों ओर नीम के पेड़ थे । बारिश इतनी तेज थी किरास्ते में कमर तक पानी बहने लगा ।मुझे बहुत डर लगने लगा । मैं घर कैसे जाऊं ? मैं रास्ते के किनारे, खेतों में से चलकर घर जाने लगी थी । रास्ता एकदम सूनसान था, दूर - दूर तक कोई नज़र नहीं आ रहा था । बिजली की डरावनी कड़कड़ाहट हो रही थी । मैं आगे-पीछे चौंककर देखती हुई, डर के मारे राम-राम का जाप करते हुए सरपट झोपड़ी की ओर चली जा रही थीअचानक मेरा पैर कीचड़ में फिसला और मैं गिर गई । मेरी सारी किताबें,कॉपी भीग गए । जैसे-तैसे उठकर मैं चलने लगी । रास्ते में बरगद के पेड़ के पास बहुत पानी भर चुका था । बाढ़ की वजह से सारा जनजीवन अस्त-व्यस्त हो गया था । मैं ठंड के मारे सिकुड़ कर वही पर बैठ गयी । सूर्यास्त होने को था, अंधेरा बढ़ने लगा था लेकिन बारिशकम होने का नाम नहीं ले रही थी । गाँव के लोगों की सहायता से मैं बड़ी मुश्किल से अपनी झोपड़ी पर पहुँची।

मैं जब झोपड़ी के पास पहुँची तो देखा कि वहाँ भी सभी जगह पानी भर चुका था । मेरी दादी मेरा इंतजार करते हुए अत्यंत चिंतित थीं । बारिश में भीग जाने के कारण वे ठंड से काँपने लगी थीं । शरीर पर ओढ़ने के लिए कोई सूखा कपड़ा तक नहीं था घर पर जिसे मेरी दादी ओढ़ सके । आग जलाने के लिए घर में एक सूखी लकड़ी तक नहीं बची थी सारी लकड़ियाँ भीग गईं थीं । आग जलाकर रात गुजरना था लेकिन सारे कंबल, बोरे सब कुछ भीग गये थे । घर में

खाने के लिए भी कुछ नहीं था । हमारे पास भूखे पेट सो जाने के सिवा कोई दूसरा चारा न था, मैं और दादी दोनों झोपड़ी में ही बैठ कर सो गये । उधर डेरे पर माँ अकेली थी उसके साथ कोई नहीं था ।

मैं पढ़ाई के लिए पाथर्डी के स्कूल जाने लगी थी, तो दूसरे गोपालमाँ, और पिताजी को चिढ़ाते हुए कहते थे - 'तुम्हें एक ही बेटी है और तुम उसे पढ़ाई के लिए पाथर्डी भेजते हो । हमारी बेटियाँ कहाँ पढ़ाई करती हैं ?' चाचा कहने लगे, 'भैय्या आप पाथर्डी जाओ और बेटी को साथ में ले आओ । हम भिखारियों की बेटियाँ कहाँ पढ़ाई करती हैं ? बड़े आये बेटी को पढ़ाने वाले । अरे भाई मुश्किलों को क्यों गले लगा रहा है? तू क्यों उसके पढ़ाई के चक्कर में पड़ रहा है ? बेटी नाक कटवा देगी ।' यहीं से मेरी पढ़ाई का विरोध होना शुरू हो गया ।

छुट्टियों के समय में पिताजी मुझे ले जाने के लिए झोपड़ी पर आगए और वहाँ से हम डेरे पर माँ के पास आ गये।हमारे डेरे पर सारी गोपालिनियाँ आ गयीं औरकहने लगीं-'बेटी अब पढ़ाई करने नहीं जाना, बहुत हो गई पढ़ाई । ज्यादा पढ़ाई करके हमारा मुँह काला करवायेगी क्या ? हमें इस दुनिया में घूमने लायक नहीं रखेगी ? अगर तूने हमारी बात नहीं मानी तो, हम तुम्हारा डेरा गोपालों से अलग कर देंगे । वे सब इस तरह मुझेधमकी देते थे, और मैं चुप होकर सुनती रहती थी ।

एक बार होली का त्यौहार था । 'मढ़ी' नामक गाँव के मेले में जाने के लिए सारे गोपाल 'निवदुनग्या' गाँव आ गए और रात में ही पंचायत बिठाने की बात हो रही थी । उस समय नाना, मामा और परिवार के सब लोग साथ में ही थे । सभी गोपाल बैठ कर दारु पी रहे थे । पीते-पीते वे पिताजी से कहने लगे - 'बेटे, तेरी बेटी की पंचायत लगायें क्या ?' बेटी की पढ़ाई बंद कराएगा या नहीं ? उस बात पर पिताजी को उनपर बहुत गुस्सा आया । पिताजी ने पंचों से

कहा -पंचायत लगाओ या कुछ भी करो लेकिन मैं अपनी बेटी की पढ़ाई नहीं रोकने वाला । पंचों नेनाना को बुलाया औरउनसे कहा कि - 'सूर्यभान साहब, हम आपको कहते हैं की आपका दामाद गोपाल हमारे समाज में क्या नया करने लगा है ? हम उसे वो सब नहीं करने देंगे । अगर उसे यह सब करना है तो उसे हमारी बिरादरी के बाहर जाना होगा, उसके बाद जो करना है कर ले । अपने दामाद को अच्छे से समझा कर रखना ! और कुछ बिरादरी के लोग एक के बाद एक कहने लगे कि - वह गोपालों की बेटी नहीं है ? वह किसी कोल्हाटिन रखैल रंडी की बेटी है, इसलिए उसे इस तरह छोड़ दिया गया है, पढाई के लिए ।ये सारी बातें पिताजी से सहन नहीं हो रहीं थीं।इन लोगों की बातों से वे अत्यंत शर्मिन्दा थे । 'मढ़ी' गाँव का मेला हो गया था और हम सारे गोपालों के डेरे वापस गाँव आ गये । आने के बाद मेरी पढ़ाई को लेकर पंचायत बुलाई गई ।

पंचायत शुरू हो गयी थी । नाना पंचों से पूछने लगे - 'पंचों, मेरी नातिन ने कौन सा ऐसा विपरीत कर्म किया है जो की आप पंचायत लगाये हो ? किस माई के लाल में इतनी हिम्मत है, जो मेरी बेटी को रखैल और मेरी नातिन को रखैल रंडी की बेटी कह रहा है? तुम लोग बिरादरी की पंच ही हो ना ?

पंच - 'बेटी को माँ-बाप ने ऐसे क्योंछोड़ाहै?'

नाना- इस ज़माने में लड़कियाँ पढ़ाई करती हैं । क्या वो रखेल रंडी की लड़की हैं ? बोलो !'

पंच - 'हमारे गोपाल समाज में आज तक किसी ने भी न यह किया और ना ही हमने देखा है ।'

नाना (छाती पर ठोकते हुए) - उसकी माँ मेरी बेटी है और वह पाटिल खानदान की है। पंचों आपके दाँत गिराने के दिन पास आगए हैं । ऐसा कहते हुए नाना जी पंचों की ओर गुस्से से देखने लगे ।

पंच - 'हमें कुछ नहीं पता ।हमें बस एक ही बात पता है - तुम्हारे दामाद ने बेटी को स्कूल भेजकर अपराध किया है उस अपराध के लिए पंचायत ने उस पर नौ रुपये का जुर्माना लगाया है जो उसे पंचायत को देना होगा । समझ गए ।

पिताजी- मैं जुर्माना देता हूँ, मगर जिन गोपालों के बेटे पढ़ाई कर रहे हैं पंचायत को उन पर भी जुर्माना लगाना होगा । वो लड़के है इसलिए उनको दंड नहीं है ? मेरी बेटी है इसलिए दंड ! वा रे वा ! क्या न्याय है पंचो का ।

पंच - 'अरे वे तो लड़के हैं , वे कुछ भी करें तो गलत नहीं होता है ।'

पिताजी - लड़की को भी नौ महीने पेट में रहना होता है । बेटियों ने ऐसा कौन सा बड़ा पापकिया है कि उसे लड़कों जैसी आजादी नहीं है ।'

पंच - 'बेटियाँ काँच की तरह नाज़ुक होती हैं, अगर उन्हें छोड़ दिया जाए तो, वह परिवार की नाककटवाकर आती हैं ।'

पिताजी (गुस्से में)- 'जिनका खानदान बुरा है, उन्हीं की बेटियाँ परिवार का नाक कटवाती हैं । हमारा खानदान ऐसा नहीं है । हमारी बेटी गोपाल समाज कानाम ऊंचा करने वालों में से है । समझे ?

पंच(गुस्से में) - 'अपने अपराध का जुर्माना भरो और मुक्त हो जाओ ।'

पिताजी- मैं मुक्त ही हूँ, किसी के पैरों तले दबा हुआ नहीं हूँ ।'

बड़े मामा ने कहा, 'मैं लड़की का मामा हूँ, जुबान सम्हाल कर बात करो नहीं तो मुझसे ज्यादा बुरा कोई नहीं होगा ।

पंच (नाना से) - 'पाटिल तुझे दामाद चाहिए या बिरादरी ?

नाना- 'आज से तुम्हारे दोनों डेरे हमारे साथ ना रहें, तुमसे हमें कोई लेना देना नहीं हैं, नहीं हमसे कोई आप वास्ता रखो । तुम्हारा काम तुम्ही देख लों ।

नाना- (गुस्से में) 'पंचों मै अपने बिरादरी का पाटिल हूँ, मेरी बात को नकारने वाला अभी तक कोई पैदा नहीं हुआ है । समझलो की तुम्हारा आज से हुक्का-पानी बंद करदेता हूँ ।'

इस तरह पंचायत दो- दो दिन तक ख़त्म नहीं होती थी । हम लोगों का बुलावा बंद हो गया था । पिताजी और नाना के यह दो डेरे घूमने लगे । मेरा यहाँ झोपड़ी पर और वहाँ पर माँ-पिताजी का वनवास होने लगा था ।

पिताजी और नाना को पंचों की बातें खटकने लगी थी । मेरे छोटे मामा सखाराम पढाई कर रहे थे । उन्होंने भी पिम्पल गाँव में मेरी तरह ही मुश्किलों को पार करके मैट्रिक तक पढाई की थी । कॉलेज पाथर्डी में था । उन्हें भी अब कॉलेज जाने की चिंता होने लगी थी ।

मेरी सातवीं कक्षा की पढ़ाई भूखे पेट, टूटे स्लेटऔर फटी पुस्तकों के सहारे चल थी । सातवीं के बाद मैं भी पिताजी के साथ घूमने लगी थी ।डेरे जाना मतलब चार घर से भीख माँगकर लाना और खाना ।

सातवीं कक्षा की परीक्षा के बाद एक भयानक घटना घटी थी ।परीक्षा के बाद हमारे डेरे शेवगाँव के एक मैदानी जगह पर थे । मुझे तेज़ बुखार था । बुखार के कारण मैं छः दिनों से घर पर ही रहती थी । पिताजी को यह सब कुछ नहीं पता था । नानी बुजुर्ग थीं, उसके पास एक भी पैसे नहीं थे । वे खाने के लिए माँगकर लाने में अक्षम थीं । वे मेरे पास ही भुखे पेट बैठी रहती थीं । मारे भूख के मेरे पेट में जलन होने लगी थी, घर में कुछ भी खाने के लिए नहीं था । मेरी आँखों की पलकें खुल नहीं रही थीं और मैं झोपड़ी के बाहर भी नहीं जा सकती थी । छः-सात दिन बाद पिताजी मुझे लेने आए, मेरा हाल बहुत बुरा था । पिताजी मुझे इस हालत में देखकर बहुत परेशान हुए । वे कहने लगे - मैं क्या करूँ ? डेरे तो यहाँ से बहुत दूर हैं, और कल तो डेरे 'शेवगाँव' जाने वाले हैं । बेटी को चलने में परेशानी होगी । रात भर पिता जी और नानी बैठ कर सोचते ही रहे । पिताजी डेरे पर आते हुए मेरे लिए भजिया लेकर आए थे । मैंने उसे खाकर पानी पिया । भजिया खाने के कारण मेरी तबियत और ज्यादा खराब हो गई।

रात बहुत हो चुकी थी । पिताजी को समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें । सारी रात इसी चिंता में गुजर गयी । सुबह हो चुकी थी । पिताजी गाँव के एक साहूकार दगडू सांगल्या के पास मेरे इलाज के लिए कर्ज लेने के वास्ते गए । उन्होंने दगडू सांगल्या से विनती की कि - वे उसे अपनी बेटी का इलाज करवाने के लिए दस रुपये कर्ज दे दें चाहे, उसके ब्याज भी ले लें । कर्ज लिए हुए पैसे ब्याज सहित वे जब दुबारा गाँव आयेंगे तो वापस कर देंगे, ऐसा विश्वास पिताजी ने साहूकार को दिलाया । दगडू सांगल्या अच्छा आदमी था । उसने अपने जेब से दस रुपए निकाले और पिताजी को दे दिया । पैसे लेकर पिताजी दौड़ते हुए झोपड़ी पर आए और मुझे अपने पीठ पर लादकर पाथर्डी को निकल पड़े । दवाख़ाना देखते ही मुझे डर लगने लगा । मुझे डॉक्टर सुई लगा देंगे, ऐसा कहते हुए रोने लगी थी । डॉक्टर ने मेरा बुखार नापने के लिए थर्मामीटर निकाला । वह काँच की ट्यूब देख कर मुझे बहुत डर लगने लगा था, इतना

किमैं डर के मारे काँप रही थी । डॉक्टर साहब कहने लगे, 'गोपाल, बच्ची को टाइफाइड है । इक्कीस दिन तक बच्ची को खाने में अनाज देना बंद कर दो । उसे सिर्फ पीने के लिए केवल मौसंबी का रस दो ।' यह सब सुनकर पिताजी के होश उड़ गए वे सोचने लगे की मौसंबी कहाँ से लायें ।

हम लोग दवाख़ाने से वापस घर आ गए । पिताजी को समझ में नहीं आ रहा था की उन्हें क्या करना चाहिए ? यहाँ सेडेरे पर जाना होगा लेकिन बेटी को लेकर हम जा नहीं सकते । मुझे वहीँ पर छोड़कर पिताजी धीरे-धीरे दबे पाँव डेरे की ओर चले गए । पिताजी को रास्ते मे चलते हुए एक मौसंबी का बाग़ दिखा । अंदर जाने के लिए एक ही रास्ता था । उस बाग़ के चारों ओर कांटे लगे हुए थे । पिताजी यहाँ-वहाँ न देखते हुए बाग़ में घुस गये और वहाँ से चालीस-पचास मौसंबी तोड़कर झोली में डालकर हमारी झोपड़ी की ओर आने लगे । रास्ते से आते हुए पिताजी को एक नौकर ने देख लिया । उसने भागते हुए पिताजी को पकड़ लिया और उनसे सारी मौसंबियाँ छीन लीं । उसने पिताजी को मार-मारकर उनकी पीठ लाल कर दिया । उसकी मार से पिताजी वहीँ धूप में जमीन पर गिर गए । थोड़ी देर बाद पिताजी किसी तरह वापस लौटकर घर आ गए लेकिन मुझे एक भी मौसंबी खाने को नहीं मिली ।

गर्मी की छुट्टियाँ समाप्त हो चुकी थीं,स्कूल खुलने वाला था । मुझे आठवीं कक्षा के लिए दूसरे स्कूल में जाना था । यह सुनकर माँ, पिताजी को बहुत ख़ुशी हुई । लेकिन लोगों का टोकना और भी बढ़ गया था । छोटे मामा भी पाथर्डी के कॉलेज में जाने वाले थे । पाथर्डी में मेरे साथ मामा को रखा गया । हम दोनों के खर्चे का सारा भार पिताजी पर आ गया । मैं और मेरे मामा दोनों एक झोपड़ी में रहते थे । मैं पढ़ाई करने स्कूल और मामा कॉलेज जाते थे । मामा की शादी के लिए रिश्ते आने लगे थे । लेकिन नाना ने यह प्रण किया था कि उन पंचों

को मुँह तोड़ जवाब देना है । नाना ने यह तय किया था कि- अपने बेटे के लिए पढ़ी लिखी बहु लेकर आऊंगा । बड़े चाचा काशीनाथ यह खबर लेकर आये कि शेवगाँव तालुका केवडगाँव के एक माल्या नाम के गोपाल की बेटी पढ़ाई करती है । मामा को भी पंचों ने परेशान करना शुरू किया । लेकिन नाना ने किसी की भी नहीं सुनी । वह लड़की सुमन नौवी कक्षा पास हो चुकी थी । उस लड़की की शादी सखाराम मामा के साथ हो गयी । मुझे टोकने वाले लोगों के लिए यह एक सबक सा बन गया । मामा और सुमन की शादी हो चुकी थी, पिता जी और पंचों के बीच सहमति बन गई थी ।

सातवीं कक्षा में पढ़ाने के लिए केलकरबाई शिक्षिका थीं । वह स्वभाव की बहुत अच्छी थीं, उन्होंने हमारी ही तरह गरीबी देखी थी । गरीबों के बच्चों पर अच्छे से ध्यान देती थीं । वे मेरी परिस्थिति जानकर मुझे कभी-कभी खाने के लिए रोटी दे देती थीं । मैं छुट्टियों के दिनों में यहाँ-वहाँ भटकती थी, मुझे ऐसे देखकर उन्होंने कहा- 'बेटी ऐसे दर-दर भटकना तुम्हारी पढाई के लिहाज़ से ठीक नहीं है, तुम दोपहर के समय मेरे घर आ जाया करो ।' उनकी एक चार वर्ष की बेटी और दो वर्ष की आयु का एक बेटा था । मुझे दोपहर के समय में खाने का अच्छा आधार मिल गया था और उन बच्चों से खेलते हुए मेरा दिन भी अच्छे से बीत जाता था ।

मेरी टूटी स्लेट, फटी पुस्तकें पीछे छूट गए । गोपालों के सारे डेरे अब हमारे साथ में रहने लगे थे । बिरादरी के पंचों का टोकना भी अब बंद हो चुका था । अब दिन अच्छे से गुजरने लगे थे ।

ऐसा लगने लगा था कि- घने अंधेरे में से एक प्रकाश की किरण धीरे-धीरे बढती जा रही है । केलकरबाई के मन में मेरे प्रति ममत्व के बीज अंकुरित होने लगे थे ।

प्रकरण-०३

वनवास, मुश्किलें, बेपरवाही

मैं सातवी कक्षाउत्तीर्ण हो चुकी थी । मुझें आठवीं कक्षा के लिए दूसरे स्कूल में जाना था । मामा और पिताजी ने मेरा दाख़िला जैन हाई स्कूल में कर वाया । वह स्कूल नगर के रोड पर पाथर्डी से थोड़ी दूरी पर था, इसलिए मुझे ज्यादा चलना पड़ता था । गाँव के स्कूल में एक घंटा तो उस स्कूल में जाने के लिए डेढ घंटा लगता था । स्कूल दस बजे शुरू होता था । सुबह जल्दी ही मैंघर से निकलती थी । मेरे घर में समय देखने के लिए घड़ी नहीं थी, इसलिए मैं सूरज की ओर देखकर ही समय का अंदाजा लगाती थी ।

मैं आठवीं कक्षा में आ चुकी थी, मुझे बहुत ख़ुशी हो रही थी । मेरी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं था । मेरी इस उपलब्धि पिताजी को बहुत गर्व महसूस हो रहा था । वे डेरे के लोगों से कहते थे कि- 'मेरी बेटी हाईस्कूल में जाती है ।' स्कूल में मुझे किताबों की दिक्कत होने लगी थी । स्कूल में जिस-जिस विषय की पढ़ाई होती थी, मास्टर जी उन सब विषयों को अलग-अलग कॉपियों में लिखने के लिए कहते थे । यह सब सुनते ही मै बहुत चिंतित होती थी । मैं सोचती थी कि- मैं किताबें कहाँ से लेकर आऊँ ? मेरे पास पहनने के लिए ठीक कपड़े भी नहीं थे, मैं बड़ी हो चुकी थी । शरीर खुला रखना ठीक नहीं लगता था । मैं चौतरफा परेशानियों से घिर गई थी ।

खाने के लिए रोटी माँगने की जगह अब किताबें माँगने की नौबत आ गई थी । भीख माँगना तो हमारे समाज के लिए एक वरदान जैसा ही है । वह मरने तक कैसे छूट सकता हैं ? मैं काम करने लायक दिखने लगी । मुझे भीख देनेवाले भी मना कर देते थे और कहने लगते - 'इतनी

बड़ी हो चुकी हो काम नहीं कर सकती ? मुफ्त में खाने की आदत हो चुकी है, इन भिखारियों को ! इतनी बड़ी घोड़े की तरह हो गई है काम करने से क्या मर जाएगी ? निकल यहाँ से नही तो तेरे पीछे कुत्तों को लगा दूंगी ।' यह सब सुनकर मैंधीरे-धीरे आगे वाले घर के आँगन मे चली जाती थी । मजबूरी के कारण कुछ कह भी नहीं सकती थी और ना ही बिना भीख पाये डेरे पर लौट के आ सकती थी । गालियाँ दो या मारो लेकिन खाने के लिए रोटी दे देना ऐसा कहती थी । बिना गालियों का हमारा एक दिन भी नहीं गुजरा । हमारे पेट की भूख कभी मिटी ही नहीं अगर कभी मिटी भी तो दर-दर भीख माँगकर ही ।

लोग मुझे ताने मारते हुए चिढ़ाते थे । मेरी वजह से पिताजी को भी लोगों के ताने सुनना पड़ रहा थे । इसलिए पिताजी ने सोचा कि - 'गाँव-गाँव भटककर पेट भरने से अच्छा है, एक ही गाँव में रहकर पेट भरते हैं ।' इसलिए पिताजी ने 'खेडियागाँव' में शिवाजी मारुद्या के खेत में काम करना शुरू किया । पिताजी को खेती का काम नहीं आता था । वेकेवल बैल चराना और उन्हें नहला करके ले आना यही कर पाते थे । पिताजी ने गाँव के पास ही एक झोपड़ी बनाई और उसी के आस-पास डेरे भी लगाए । अब नाना ने भी अपनी झोपड़ी 'सांगवी गाँव में बनाई और वे वहीँ पर रहने लगे ।

गर्मियों के दिन पिताजी शिवाजी मारूद्या के भैंसों को चराते हुए 'चाँदगाँव' के नदी किनारे ले गए । वहीँ एक तालाब था जिसका नाम स्थानीय लोगों ने “निलाची कड अन मवल्याचा ढव” (यह एक पहाडी जगह है जहाँ पर देवी माँ की पूजा की जाती है) रखा था । पिताजी उस तालाब पर भैसों को पानी पिलाने के लिए लेकर गए । उस दिन अमावस्या थी यह बात पिताजी को पता नहीं थी । पिताजी भैंसों को पानी पीने के लिए तालाब के पास छोड़कर पास ही एक पत्थर पर बैठ गए । दोपहर का समय था, धूप बहुत हो चुकी थी । नदी के आस-पास भैंसों के अलावा

कोई जानवर या पंछी कुछ भी दिख नहीं रहा था । कुछ ही देर में माँ रोटी लेकर आई । माँ ने देखा तालाब के पास बहुत सारे नींबू पड़े हुए थे, अगरबत्ती की सुगंध भी आ रही थी मद्धिम-मद्धिम घुँगरूओं की आवाज भी सुनाई पड़ रही थी । माँ को डर लगने लगा और माँ पिताजी से कहने लगी- 'जी सुनते हो यहाँ तालाब में नींबू है और घुँगरूओं की आवाज़ भी आ रही है देखो ना ।' यह बात सुनते ही पिताजी को शक होने लगा, उन्हें वहाँ पर कुछ गड़बड़ लगा उन्होंने अचानक माँ से कहा-आज 'चाँदगाँव' में बाजार है इसलिए ये आवाज़ आ रही है । चलो झोपड़ी पर मुझे अभी भूख नहीं लगी है, बाग़ में भैंसों को बाँधकर कुएँ के पास बैठकर खा लेते हैं । यह कहते हुए पिताजी ने भैंसों को तालाब से लाकर बाग़ में बाँध दिया । उन भैंसों में से एक भैंस साफ़ सुथरी और कुछ ज्यादा ही काली दिखने लगी । उसकी पूँछ एक दम काली दिख रहीथी जबकि पहले उसकी पूँछ का शीर्ष भाग सफेद था तथा उसके माथे पर एक चाँद का निशान था जो आज नहीं था । वह भैंस गाभिन थी और दो-तीन दिन में बच्चा देने वाली थी । पिताजी ने सारी भैंसों को खूँटे से बाँध दिया था । वह भैंस खूँटे के गोल-गोल चक्कर लगाकर अपने गले में बाँधी हुई रस्सी तोड़ने का प्रयास करने लगी थी । इसलिए पिताजी ने उसे वहाँ से खोलकर बबूल के पेड़ मे बाँध दिया और वे झोपड़ी पर आ गए । झोपड़ी में माँ अचानक बेहोश होकर गिर गई थी, उनके हाथ-पैर ठंडे हो गए थे । यह सब देखकर पिताजी घबरा गये । मैं रोते हुए दूर भागने लगी । यह सब कैसे हुआ ? पिताजी को भी समझ में नहीं आ रहा था ।

पिताजी अगले दिन बाग़ में गए । मारूद्या साहब उनसे कहने लगे -मेरी गर्भवती भैंसका क्या हाल कर दिया है । पिताजी डर गए और कहने लगे- 'मैं कसम खाता हूँ साहब, मैंने कुछ नहीं किया, मेरी पत्नी की हालत भी ख़राब है । मैं आपके पैर पड़ता हूँ साहब, मुझे गलतमत समझिए साहब, मुझ पर शक मत कीजिए, मेरे ऊपर यकीन कीजिए मैंने कुछ नहीं किया है ।

पिताजी एक गाँव के पंडित के पास गए । उनका नाम काशीनाथ । उन्हें सभी पंडितों में से अच्छा माना जाता था । वे झाड़-फूंक करते थे । पिताजी ने उन्हें कल वाली घटना के बारे मे सब कुछ बताया । पंडित ने पिताजी से कहा गोपाल डरो मत कुछ नहीं होगा सब ठीक हो जाएगा- 'शाम के समय उस तालाब के पास जाकर मन्नत माँगना कि, मैं तुम्हें बकरे कि बलि दूंगा और वहाँ पर नींबू काटकर कुछ अगरबत्ती जलाकर आ जाना ।

पंडित के कहने पर पिताजी तालाब गये मन्नत माँगी और नींबू काटकर वापस आगये । अगले दिन माँ और भैंस दोनों ही ठीक हो गये । लेकिन उस मन्नत का क्या करें ? जिसकी वजह से यह सब कुछ ठीक हो पाया । मजबूर होकर पिताजी ने मारूद्या साहब से एक महीने की तनख्वाह पहले ही ले ली और बकरा खरीदकर ले आये । पिताजी बकरे की बलि देने के लिए नानी, नाना और कुछ गोपालों को अपने साथ लेकर गए । यह सब कुछ शिवाजी मारूद्या को नहीं पता था । हम गोपालों के हाथ का छुआ कोई नहीं खाता था । इसलिए बलि दिए हुए बकरे के प्रसाद को हमारे घर के सारे गोपालों ने भर पेट खाया और बचा हुआ घर ले आये लेकिन उस क़र्ज़ के लिए पिताजी को शिवाजी मारूद्या के पास एक महीना और काम करना पड़ा । मेरी पढ़ाई चालू थी ।

डेरे के अन्यगोपाल पिताजी की झोपड़ी के पास झोपड़ी बाँध कर रहने लगे । मैं स्कूल जाने लगी थी । कुछ बुज़ुर्ग गोपाल पिताजी से कहते थे, 'बेटा, बेटी की पढ़ाई बंद कर, नहीं तो बेटी, मुँह काला कर देगी । हम गोपाल गाँव में घूमने लायक नहीं रहेंगे । ऐसा ही मंझले चाचा भी कहने लगे । पर पिताजी किसी की सुनने को तैयार नहीं थे, वे सबकी बातें एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देते थे ।

मैं जब स्कूल जाने लगती थी, तब डेरे की दूसरी गोपालिनियाँ मुझे चिढ़ाने के लिए गाना गाने लगतीं और बहुत कुछ अनाप-सनाप कहतीं थीं । बड़े चाचा की दो बेटियाँ और तीन बेटे थे । उनकी बेटे-बेटियों की शादी हो गई थी और उनके बच्चे भी हो गए थे । लेकिन हमारे घर में मैं अकेली वह भी लड़की थी । पिताजी को सब बिरादरी वाले हमेशा ताना मारते थे । गाना गाते हुए नीचा दिखाते थे ।

“महि गं मैना, घर दाराची शोभा

कोण गं कोल्हाटीन, बाजारात उभा ।।1।।

मह्या गं घरात, दरवळला वास,

जाति मंगाच्या कोण्या गं रांडाना केला वनवास ।।2।।

लोक या जनमखी, तिला तोप्ल्यात ठीवा

दावू नका गं ईला उडत्या सुवाची हवा ।। 3।।

(अर्थात- मैं इस घर की शोभा मैना हूँ । कौन है नाचने वाली जो बाजार में खाड़ी है । हमारी घर की कौन है यह उद्दंड लड़की । उद्दंड घर की इस लडकी को किसने खुला छोड़ा है । लोगों का कहना है कि लड़की को झंपके रखो । उसे बाहरी हवा के संसर्ग में न आने दे ।)

मैं माता-पिता की इकलौती थी । इसीलिए माता-पिता का कोई सम्मान नहीं करता था । पिताजी को देखकर बिरादरी गोपालिनियाँ गाना गाने लगते थे ।

तान्हा बालू, माह्या कांद्य लेकीला

हिंडण फिरण, वाटच्या कोल्हटनीला।।

माह्या गं मैनाच्या, तान्हा बाळ कारवंला

बाप्या गं गोपाळ, चारी बाजुन हकला ।।

घराच्या भाईर अब्रुला नाही सीमा

घराच्या भाईर पडल्यानी, अब्रुला लागुत धक्का ।

इस तरह के गाने सुनकर दिल में धक-धकी शुरू होने लगती है ।

(अर्थात- निपूत बालू अपनी बांझ लड़की को नचनिए की तरह बाजार में क्यों घूमने देता है । बाप्या तेरी बेटी मैना पक्षी की तरह आजाद उड़ती है और तू चहुँ ओर से बर्बाद हो चुका है । लड़की की इज्जत घर के अंदर ही सुरक्षित होती है । घर के बाहर निकलने से उसकी इज्जत में बट्टा लगता है ।)

यह सब सुनकर रास्ता नहीं कटता था । जैसे-जैसे मैं आगे बडने लगती थी मुझे लगता था की स्कूल दूर जा राही हुई और स्कूल जाने तक मेरा मन उदास हो जाता था ।

रात में पढ़ाई नही हो पाती थी । हमारीझोपड़ी लकड़ी की थी । एक तो झोपड़ी में दिया जलाने पर आग लगने काख़तरा थादूसरेअगर दिया जलने लगे भी तो उस में डालने के लिए मिट्टी का तेल कहाँ था ?

मेरी परीक्षा का समय आ गया था और काम में व्यस्त रहने के कारण पढ़ाई नहीं हुई थी । परीक्षा के समय किसी दूर के खेत में जाकर पढ़ाई करूँगी ऐसा सोचने लगी । मैं झोपड़ी से थोड़ी दूर पर ही एक आम का पेड़ था उसके नीचे बैठकर पढ़ाई करने लगी थी । दो-तीन दिन बीत

चुके थे । मैं पेड़ के नीचे बैठकर अच्छे से पढ़ाई कर रही थी, चौथे दिन गाँव में अफवाह फ़ैल गयी कि, 'बाप्या की बेटी, भरी धूप में मैदानों के खेतो में घूमने जाती हैं' । इस बात को लेकर गोपालिनियों ने मुझपर नजर रखना शुरू कर दिया ।

एक गोपालों का लड़का बकरियों को चराने उसी पेड़ के आस-पास आया करता था । मैं पढ़ाई करने के लिए उस पेड़ के नीचे बैठ गई । वह लड़का मेरे पास आ गया । उसके पीछे सारी बकरियाँ भी आ गईं । उसने आम के पत्ते को तोड़ कर मेरे बगल में डालाऔर मेरे पास में ही बैठ गया और कहने लगा- 'ये लड़की तुम इतनी दूर पढ़ाई करने क्यों आती हो ? तब मैंने कहा - घर पर पढ़ाई नहीं होती है, कुछ ही दिनों में परीक्षा है, इसलिए यहाँ आती हूँ । वह मेरे पास आकर आराम से बैठ गया था, उसके मन में मेरे प्रति गलत भावना चल रही थी । मुझसे कहने लगा, 'और कौन आता है यहाँ पर तेरे साथ पढ़ाई करने ? मैंने कहाँ - 'कोई नहीं आता है, मै अकेली आती हूँ ।' उसे मुझ पर यकीन नहीं हो रहा था और मुझे डरा-धमका कर पूछने लगा - 'मुझसे सच बोल कोई चक्कर चालू है क्या ? मैं किसी को नहीं बोलूँगा ।' ऐसा कहते हुए वह मेरे पास ही बैठा रहा, वहाँ से उठने को तैयार ही नहीं था ।

उसकी इन सब हरकतों से मुझे बहुत गुस्सा आने लगा, साथ ही डर भी लगने लगा था ।मैं वहाँ से किताबें हाथमें लेकर रास्ते से भागती हुई झोपड़ी की ओर आ गई । उस लड़के ने पढ़ाई ख़राब कर दी । कहावत है ना, 'बाप भीख मांगने नहीं देगा और माँ खाने को रोटी नहीं देगी । 'ऐसी स्थिति मेरी भी हो गई थी । मैं वापस घर आगई । मैंने सोचा कि यह सब पिताजी को बोलूँगी तो उन्हें कुछ परेशानी होगी क्या ? ये सब सोचते-सोचते मेरा सिर घूमने लगा था । इस घटना के बाद मेरा पढ़ाई में बिलकुल मन नहीं लग रहा था ।

पिताजी से मेरी चुगली करना गोपालों का रोज का काम था । गोपाल पिताजी से कहते कि- 'बेटी की पढ़ाई बंद करदे, बेटी अब काम करने लायक हो गई है, तीन-चार घर भीख माँगकर लाएगी तो तुम तीनों का पेट भर जाएगा । वो लड़की है ! तू यह मत सोच कि तेरे परिवार का वो उद्धार करेगी । किसी न किसी दिन वह पति के घर जाएगी ही ।

मेरी दसवीं कक्षा की पढ़ाई शुरू हो चुकी थी । एक-दो महीने स्कूल के बादपिताजी बीमार पड़ गए । बीमारी के कारणउनकी स्थिति बहुत ही ख़राब हो चुकी थी, थोड़ा सा पानी पिलाते ही उनको तुरंत उल्टी हो जा रही थी । पिताजी का खाना-पीना सब बंद हो चुका था । पिताजी को खूनी पेशाब होने लगी थी । हमारे पास दवाख़ाना जाने के लिए एक भी पैसा नहीं था । पिताजी के बीमार होने के कारण उनका काम पर जाना बंद हो चुका था, हमारे खाने-पीने के लाले पड़े थे । पिताजी जब ठीक थे, वे तीन-चार दिन घूमकर खाने लायक कुछ थोड़ा-बहुत ले आते थे, पर अब पिताजी के हाथ-पैर काम नहीं करते थे वे बिस्तर में ही पड़े रहते थे । इसी वजह से घर में बहुत दिक्कतें होने लगीं थीं ।

मैं स्कूल नहीं जा सकती थी । पिताजी का पूरा शरीर सूज गया था । उनका पेट मटके जैसा फूला हुआ था और मुँह पिचक गया था । चाय बनाने के लिए घर में चीनी, गुड़ और दूध तक नहीं था । पिताजी को देखने के लिए रिश्तेदार आते थे और कहते- 'बाप्या फलाने जगह पर जाना, वहाँ अच्छी औषधि मिलती है तू जल्दी ही ठीक हो जायेगा ' लेकिन पिताजी के पेट में सृजन थी वे चल नहीं पाते थे । जहाँ पर भी औषधि को लाने को कहते थे मुझे अकेले ही जाना पड़ता था ।

एक दिन हमारे पड़ोसी ने कहा - 'सुबह सूरज उगने से पहले तुम दोनों माँ बेटी चाँदगाँव के गवाडियाँ के बगीचे में चले जाना । वहाँ का माली सात दिनों के लिए आयुर्वेदिक औषधि देता है । उस आयुर्वेदिक औषधि से पेट की सारी बीमारियों का इलाज हो जाता है ।'

अगले दिन सुबह मुर्गे का बांग सुनते ही मैं और मेरी माँ दोनों चाँदगाँव जाने के लिए निकल पड़े । सूरज निकलने से पहले ही हम लोग गावडियाँ के बगीचे में पहुँच गए । जैसे ही हम पहुँचे हमारी चलने की आवाज़ सुनकर कुत्तों की झुंड हम परटूटपड़ी । मैं चिल्लाने लगी । मेरी आवाज़ सुनकर गावडियाँ जाग गया और भागते हुए मेरी ओर आकर उसने उन कुत्तों को भगा दिया । मैंने उस गावडियाँ को पिता के बीमारी के बारे में सब कुछ बताया । थोड़ी देर में वह किसी पेड़ के पत्ते ले आया औरउन पत्तों को उसने पत्थर पर रगड़ा । उस में से जो रस निकाला उसे एक लोटे में भरकर उसने हमको दे दिया, और कहने लगा - बेटी रास्ते से संभल कर जाना, इसे सूरज निकलने से पहले ही पिताजी को पिला देना । इसी तरह सात दिन तक रोज आते रहना । तुम्हारे पिताजी का स्वास्थ्य ठीक हो जाएगा ।' उसकी ये सब बातें सुनकर मेरे मन को थोड़ी तसल्ली मिली । पिताजी पंद्रह दिन से बिस्तर पर ही पड़े हैं, वे इस आयुर्वेदिक औषधि को पीकर ठीक हो जाएंगे, यह सोचकर लगातार सात दिन मैं औषधि लेकर आयी । लेकिन पिताजी पर उस कड़वी आयुर्वेदिक औषधि पिलाने का कुछ भी असर नहीं हुआ ।

उनको तरह-तरह के पेड़-पौधों की आयुर्वेदिक औषधि बनाकर पिलायी गई लेकिन उनके स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हुआ । इन मुश्किल घड़ियों में गोपाल समाज का एक इंसान भी हमारे पिताजी को देखने, पूछताछ करने तक नहीं आया । पिताजी की देखभाल करके हमें काम पर जाना पड़ता था, पिताजी तो कुछ भी खाते नहीं थे । एक दिन काम पर ना जाने से हमें भूखे पेट रहना पड़ता था ।

एक दिन गाँव में अफ़वाह फ़ैल गयी कि, गोपाल (पिताजी) मर जाएगा, उसका बचना मुश्किल है । यह सब सुनकर बड़ी दीदी आगई ।एक पैर डेरे के अंदर दूसरा बाहर रखकर वे रोते हुए कहने लगीं -बाबू तेरा पूरा शरीर सूज गया है और तेरी तबियत भी बहुत ख़राब हो चुकी है। पिताजी को तकलीफ़ ज्यादा हो रही थी, वे भी रोने लगे और कहने लगे - 'मैंने अभी तक कुछ भी अच्छा काम नहीं किया है, बेटी की शादी भी नहीं की है । मेरी बेटी अब दुश्मनों के नजरों में रहेगी, उसकी पढ़ाई रुक जाएगी । उन्हें मृत्यु का डर लग रहा था । मुझसे पिताजी की हालत देखी नहीं जा रही थी। पिताजी का मुँह पहले से ज्यादा मटके की तरह सूज गया और पेट ढोल की तरह फूल गया था । मुझे भी लगता था कि अब वे चंद दिनों के ही मेहमान हैं ।

पिताजी को बीमार हुए दो महीने बीत चुके थे । मेरी पढ़ाई भी छूट रही थी, मन उदास हो चुका था । क्या करना है ? और क्या नहीं ? कुछ भी समझ में मुझे नहीं आ रहा था । दवाख़ाना किसे कहते हैं यह भी मुझे ठीक से पता नहीं था ? एक दिन स्कूल के एक मास्टर आये । उन्होंने कहाँ कि- गोपाल तू पाथर्डी के सरकारी दवाख़ाने में जा वहाँ ज्यादा पैसा नहीं लगेगा । पाथर्डी से 'खेर्डेगाँव' का दवाख़ाना तीन मील दूर था । पिताजी उठकर बैठ भी नहीं सकते थे । वहाँ तक पिताजी कैसे चलेंगे ? थोड़ी देर बाद मैं और मेरी माँ हम दोनों गाँव में बैल गाड़ी मांगने के लिये गये पर हम जैसे भिखारियों को कौन देगा बैलगाड़ी ? अंत में हम दगड़ू सांगल्या के पास गये बहुत प्रार्थना करने के बाद उनके बेटे ने हमें गाड़ी दी ।

दगड़ू सांगल्या का बेटा हमारे साथ गाड़ी चलाने के लिए आया था । पिताजी को गाड़ी में बिठाकर हम उनको पाथर्डी के सरकारी दवाख़ाने में ले गये । लेकिन वहाँ के डॉक्टर पिताजी का इलाज करने से मना कर रहे थे, माँ डॉक्टर के हाथ-पैर जोड़ने लगी और रोने लगी, लेकिन डॉक्टर को हम पर दया नहीं आयी उसने हमारी एक नहीं सुनी । वहाँ से राम किशन सांगल्या

(दगडूसांगल्या का बेटा) हमें अपने परिचित डॉक्टर कुलकर्णी के पास ले गयेऔर कहने लगे - बेटी तुम चिंता मत करो दवाख़ाने के पैसे मैं देता हूँ । पिताजी के ठीक होने के बाद मेरे पैसे लौटा देना । डॉक्टर कुलकर्णी पिताजी का इलाज करने से मना कर रहे थे क्योंकि पिताजी पिछले दो महीनों से नहाए भी नहीं थे, उनके शरीर से बदबू आ रही थी । उनके कपड़े बहुत गंदे हो चुके थे ।

बड़ी मिन्नतों के बाद डॉक्टर साहब इलाज के लिए तैयार हुए । उन्होंने बताया कि - 'पिताजी की बीमारी बड़ी है, इसका इलाज करनामेरे बस की बात नहीं है । आप लोग इन्हें लेकर जिला अस्पताल जाइये वहाँ शायद इनका इलाज हो जाये ।' तब रामकिशन सांगल्या ने डॉक्टर से विनती की और कहा कि - 'डॉक्टर, ये लोग बहुत गरीब है इनके पास कुछ नहीं है । खाने के लिए एक तिनका दाना तक नहीं मिलता, यह लोग नगर के दवाख़ाने कैसे जाएंगे ? इनका इलाज आप ही कर दीजिए । यह सब सुनने के बाद डॉक्टर ने पिताजी का इलाज शुरू किया । उन्होंने पिताजी को इंजेक्शन लगायी और उन्होंने कुछ दवाईयाँ बाहर से लेने को कहा । पिताजी के इलाज में चालीस रुपये लगे । इलाज के सारे पैसे रामकिशन सांगल्या ने चुकाए ।

हम पिताजी को लेकर घर आ गये, उनकी सेहत में थोड़ा-थोड़ा सुधार हो रहा था । पिताजी को भूख लगी थी । उन्होंने खाने के लिए माँगा लेकिन खाने के लिए घर में कुछ भी नहीं था । माँ गाँव से भीख माँगने गई ताकि वह पिताजी के खाने के लिएकुछ इंतजाम कर सके । माँ दो-चार घर भीख माँगकर डेरे पर वापस आ गई । उसे भीख थोड़ा खाना मिला था । उसमें से पिताजी ने दो-चार निवाले खाए और पानी पीकर लेट गए । मुझे आज लगा कि पिताजी आज दो महीने बाद आराम से सो पाये ।

स्कूल छोड़े हुए मुझे दो महीने बीत चुके थे । इतने लंबे समय तक स्कूल न जाने के वजह से मेरा नामस्कूल से हटा दिया गया था । अब सारा कुछ दुश्मनों की इच्छा के अनुसार ही होने लगा था ।

हमारी एक पड़ोसी गोपालिन एक लड़के को अपने साथ लेकर हमारे घर आयी । पिताजी से कहने लगी-'बापू, तुम बीमार हो और तुम्हारी बेटी की उम्र विवाह योग्य हो गई है । उसका विवाह करवा दो और मुक्ति पाओ ।' उसकी बात सुनकर पिताजी ने सिर उठाकर उसे देखा और गुस्से में उससे कहा - 'बहन तुम्हारी भी बेटियाँ बड़ी हो गईं हैं ना, तो तुम पहले अपनी बेटियों की शादी करवा दो । मेरी पढ़ी-लिखी बेटी के पीछे क्यों पड़ी हो ? यहकहते हुए पिताजी ने उनको घर से बाहर निकाल दिया ।

अब पिताजी की तबियत में थोड़ा सुधार होने लगा था । उन्होंने यहाँ-वहाँ थोड़ा बहुत घूमना-फिरना शुरू कर दिया था । हम दोनों माँ और बेटी काम करने के लिए जाते थे, इसी से हमारे घर का गुजारा होता था । मैं स्कूल पढ़ने नहीं जा पा रही थी । मुझे सारी रात नींद नहीं आती थी, सोचती थी कि ये सब कैसे हुआ ? मेरी हालत कुएँ के मेंढक की तरह हो चुकी थी ।

पिछला वर्ष मेरा बिना पढ़ाई के ही गुजर गया । 'मेहेंदलेसर' हाई स्कूल के हेड मास्टर थे और उनकी पत्नी हमारी सुपरवाइजर थीं । वे जाति सेब्राह्मण थे । वे दोनों दिल के बहुत अच्छे थे, उन्होंने गरीबी के दिन देखे थे इसीलिए गरीब बच्चों से उन्हें हमदर्दी थी । एक दिन मैं सुपरवाइजर मैडम से मिलने गयी और रोते हुए अपनी बात उनसे कही- 'दीदी, अब मैं क्या करूँ ? कुछ दिनों से मेरी पढ़ाई का क्रम टूटगया है । मै क्या करूँ, कुछ उपाय बताओ जिससे मैं अपनी फिर से शुरू कर सकूँ ।' उन्होंने मेरी बात ध्यान से सुनी और कहा कि - 'बेटी, इस साल

तो कुछ नहीं कर सकते, लेकिन अगले साल तुम मैट्रिक की परीक्षा में बैठ सकती हो, मैं तुम्हारी मदद करुँगी ।' उनकीयह बात सुनकर मेरे मन को थोड़ी तसल्ली मिली ।

सुपरवाइजर दीदी ने मुझसे एंप्लॉयमेंट ऑफिस में नाम पंजीकरण करवाने के लिए कहा था । इसके लिए मैंने अपने क्लास टीचर जादव सर सेअपना स्थानांतरण प्रमाणपत्र (टी.सी.) बनवाया । मैं सारे जरूरी कागज़ात लेकर पिताजी के साथ पंजीकरण करवाने के लिए शहर गई थी । मैंने इससे पहले न कभी शहर देखाथा और न ही मै किसी वाहन पर कभी बैठी थी । उस दिन पहली बार मैंने शहर भी देखा और मैं वाहन पर भी बैठी थी । हम नगर के स्टेशन पर उतर गएलेकिन ऑफिस कहाँ है यह हमें पता नहीं था । रास्ते में लोगों से पूँछ-पूँछ कर हम ऑफिस ओर बढ़ रहे थे । मैं आगे चलने लगती तो पिताजी कहने लगते थे- 'बेटी, आगे कहाँ जा रही हो, ये देखो यह मकान ऑफिस जैसे लग रहा है । उस मकान के ऊपर कुछ लिखा हुआ दिख रहा है, देखो ! मैं पिताजी से कहती यह नहीं है । पिताजी और थोड़ी लंबी श्वास लेते हुए आगे चलते-चलते लोगों से ऑफिस का रास्ता पूँछते थे । थोड़ी दूर चलने के बादहम लोग ऑफिस के पास पहुँच गए । पिताजी अंदर जाकर कुर्सी पर बैठ गए । बिना पूछे अंदर जाने की वजह से वहाँ का चपरासी उन्हें गालियाँ देने लगा था औरपिताजी को उठकर बाहर आना पड़ा।चपरासी ने कहा यहाँ पर पर्ची लेनी पड़ती है । हम भी पर्ची लेकर अपना नाम पुकारे जाने के इंतजार में वहीं पर बैठ गये ।

दोपहर के दो बजे हमारा नंबर आया।वहाँ के अधिकारी ने पूछा बेटी, कागज-पत्र लेकर आई हो ना ? मैंने हाँ कहकर कागज़ात अधिकारी के हाथ में दे दिया । अधिकारी ने कागज़ात की जांच की । उन्होंने मुझसे कुछ प्रश्न पूँछे - बेटी मैं गोपाल समाज को नहीं जानता हूँ । मैं

आपके समाज के प्रमाण-पत्र के बिना मैं पंजीकरण नहीं कर सकता क्योंकि यह कागज़ात तुम्हारे ही हैं यह कैसे पता चलेगा ? पिताजी भी उस अधिकारी की बात सुन रहे थे ।

पिताजी ने कहा- 'साहब, हम गोपाल समाज के हैं । मैं इस लड़की का बाप हूँ ।'

अधिकारी ने कहा- 'बाबा, आप ही इस बेटी के बाप हो, लेकिन हमें इसके सबूत चाहिए । आजतक गोपाल समाज के किसी भी लड़की ने यहाँ पर पंजीकरण नहीं करवाया है । ठीक है तुम गोपाल हो, लेकिन मुझे कैसे पता चले की यह तुम्हारी बेटी है क्योंकि इसका तुम्हारे पास कोई लिखित प्रमाण-पत्र नहीं है ।'

पिताजी ने कहा- 'साहब यह लड़की मेरी है, यह लड़की पाथर्डी के स्कूल में दसवीं कक्षा तक पढ़ी है ।

अधिकारी ने झल्लाते हुए कहा- 'बाबा, मेरा सर मत खाओ, मुझे पहचान पत्र चाहिए । मै उसके बिना इसका पंजीकरण नहीं कर सकता ।'

पिताजी ने कहा- 'साहब, मेरा यहाँ तो कोई जान-पहचान का नहीं है । किसको लेकर आऊँ ? मैं बहुत दूर से आया हूँ साहब ।'

अधिकारी ने गुस्से मे कहा - 'ठीक है तो घर चले जाओ ! मैं बिना प्रमाण-पत्रों के पंजीकरण नहीं कर सकता ।

पिताजी को गुस्सा आ गया उन्होंने उस अधिकारी से कहा - 'साहब हम भिखारी हैं, हमारी जान-पहचान का यहाँ पर कोई भी नहीं है । अगर आप को गोपाल समाज के लोगों का पंजीकरण

नहीं करना है, तो आप ऐसा लिखकर दो कि मैं गोपाल समाज की लड़की का पंजीकरण नहीं करूंगा !'

पिताजी की इस बात से वे साहब भी गुस्से से लाल हो गए और कहने लगे, 'अगर यह झूठ कि तुम इसके बाप हो तो इसका जिम्मेदार कौन होगा ?'

मैंने कहा - 'साहब, यह कागजात हैंन साक्ष्य देने के लिए।इसमें क्या कमी है ? ऐसा कहकर मैं वहीं ऑफिस में बैठ गई और मैंने आधिकारी से कहा, 'जब तक आप मेरा पंजीकरण नहीं करोगे, मैं यहाँ से हिलने वाली नहीं हूँ ।

अंत में साहब ने मेरे साहस को देखकर मेरा पंजीकरण कर दिया । हम दोनों रात के आठ बजे घर वापस आ गये ।

मुझें दसवीं कक्षा में बैठना थाबीच में एक वर्ष जाया हो गया ! वह मुझे बहुत बुरा लग रहा था । सारा वर्ष बारिश और धूप ही में काम करना था । कुछ दिनों बाद पिताजी को मेरी शादी की चिंता होने लगी थी । पढ़ा-लिखा लड़का कहाँ मिलेगा ? उन्हें यह भीचिंता हो रही थी । पिताजी ने उस वर्ष रामकिशन सांगलियां के हाथ-पैर पकड़ कर भैंसों को बटई से लिया था । बात के मुताबिक भैंस की कीमत छोड़कर जो फ़ायदा मिलेगाउसे दोनों में बाँट लिया जाएगा । पिताजी ने मुझे दो भैसों की जिम्मेदारी दी । मैं उन दोनों भैंसों को सुबह से लेकर शाम तक चराते हुए जंगल में भटकती रहती थी । पहनने के लिए मेरे पैरों में न तो कभी चप्पल होती थी और नही शरीर पर ठीक से कपड़े ! वैसे ही मैं धूप-बारिश में घूमती थी ।

कुछ दिन बाद मेरी शादी की बात करने के लिए 'ब्राह्मण' नाम का एक लड़का, अपने मित्रों को साथ लेकर हमारे घर आया ।वह नौवीं कक्षा में था । एक दिन वह हमारे ही घर पर रहा

और उसने पिताजी से मेरे बारे में बातचीत की । अगले दिनचलते हुए उसने कहा कि - 'रिश्ते की बात करने के लिए मैं अपने पिताजी को भेजता हूँ ।' लड़के के पिताजी रिश्ते की बात करने के लिए बुधवार के दिन पाथर्डी के बाजार में आ गए । पिताजी से मिलने से पहले ही, उनकी मेरी माँ की मामी से भेंटहो चुकी थी।वह रिश्ते में उनका भाई लगता था । मेरी माँ की मामीवहीं बाजार में जोर-जोर से चिल्लाते हुए उनसेलड़ाई करने लगीं और कहने लगी -'भाई मेरी बेटी तेरे बेटे को पसंद नहीं है क्या ? मेरी बेटी अनपढ़ है इसलिए पसंद नहीं आ रही है ? उन्होंने मामी को समझाते हुए कहा, दीदी तुम्हारी बेटी भी हमने देखी हैलेकिन मेरे बेटे को पढ़ी-लिखी लड़की चाहिए ।'

वह चिल्लाते हुए कहने लगीं, 'वाह-जी-वाह उसकी बेटी ने पढ़ाई की है, वह सारे जगहों पर घूमती है इसलिए तुम्हे अच्छी लगी ! वह बालों की चोटी डालकर स्कूल जाती है, और मेरी बेटी जूड़ा बाँधकर घर में रहती है न, इसलिए मेरी बेटी पसंद नहीं हैतेरे बेटे को । भाई, 'मैं भी देखूँगी तेरा बेटा उस बापू की बेटी के साथ विवाह कैसे करेगा । मैं भी गोपालिन हूँ । भरे बाज़ार में मैंने तुम्हारे सर की पगड़ी नहीं उछाली तो, मेरा नाम रेणु नहीं ।''

लड़के के पिताजी, मेरे पिताजी से कुछ बात किये बिना ही वापस चले गए । पिताजी को यह सब कुछ समझ आ गया और चिंता के कारण दारू पीकर पिताजी घर आ गये । पिताजी ने घर में कदम रखते ही गालियाँ बकनी शुरू कर दी । पिताजी के इस व्यवहार से हम माँ बेटी डरकर चुपचाप डेरे में बैठे रहे । हमने सारी रात बिना कुछ खाए-पिये गुजारी ।

हमारा और गोपालों की रेणु का बोल-चाल सब बंद हो चुका था । कुछ दिनों बाद कुश्ती खेलने वाला रिश्ता लेकर, अपने माता-पिता और बहन के साथ हमारे घर आया ।पिताजी ने उधार पैसे लेकर उनके खाने-पीने की व्यवस्था की । रात के नौ बज चुके थे । हमारे डेरे के पास

ही एक पिंगल गाँव था । वहाँ से तीन-चार लोग साइकिल पर आए थे । उन्हें इस कुश्ती वाले लड़के के बारे में और उनके रहन-सहन आदि के बारे में उन्हें सब कुछ पता था । वे लोग मेरे पिताजी से कहने लगे ‘तुम्हारी इकलौती बेटी है और वह पढ़ी-लिखी भी है । तुम अपनी बेटी की शादी इनके घर में नहीं कदापि मत करना । ये गोपाल बहुत मनमर्जी वाले है । एक बार शादी हो गई तो वे बच्चे होने तक लड़की को मायके नहीं भेजेंगे, और नही मायकेवालों को मिलने देंगे ।’ यह सब कुछ सुनकर पिताजी बहुत घबरा गए और रिश्ते वालों के पास जाकर उनसे कहने लगे- ‘मुझे अपनी बेटी को और पढ़ाना है, मैं उसकी शादी अभी नहीं करना चाहता । रिश्ते लाने वाले गोपाल और गोपालिनियाँ सब पिताजी से लड़ने लगे और कहने लगे- ‘हम तो शादी तेरी बेटी के साथकरके ही रहेंगे ! हम देखते हैं तू कैसे अपनी बेटी की शादी नहीं करेगा ।’ उन लोगों ने पिताजी को धमकी भी दी कि- हम भी देखेंगे की तुम कैसे अपनी बेटी की शादी किसी दूसरे लड़के के साथ करवाओगे । तुम्हारी बेटी का बंधन हमसे है यह बात याद रखना ।

एक तरफ यह सब नाटक चल रहा था और दूसरी ओर लड़के की बहन मेरे पास आई और कहने लगी - ‘हमारे घर पर चोटी बाँध नहीं सकते, बालों का जूड़ा बांधकर रहना पड़ेगा और साड़ी पहननी होगी याद रखना । वे ऐसी बहुत सारी बातें कहने लगीं।मैं भी शांत नहीं रही । मैंने उनसे कहा‘ मुझे नहीं आना तुम्हारे घर और न ही मुझेतुम्हारे भाई से शादी करनी है ।’

यह सब कुछ सुनकर और देखकर मेरा मन घबरा गया । मैं सुबह उठते ही गोपालिनियों के साथ घास लेने के लिए जंगल की ओर जाती थी । जंगल से लौटकर बासी रोटी खाकर फिर भैंस लेकर जंगल में चराने जाती थी और सूर्यास्त के समयवापस घर लौटती थी ।

एक बार मैं नदी के किनारे भैंस चराने गई थी, शाम हो चुकी थी और मैं घर वापस आ रही थी । सूरज धीरे-धीरे डूबने लगा था । अचानक एक उल्लू आकर मेरी भैंस के ऊपर बैठ गया ।

उसे देखकर मुझे बहुत डर लग रहा था, मैं घबरा गई थी । उसे पत्थर फेंक कर मारा, लेकिन वह वहाँ से हट नहीं रहा था, मैंने उसे भगाने की बहुत कोशिश की परन्तु वह हिला भी नहीं । सारी भैंसें रास्ते में चल रही थी, मैं उनके पीछे-पीछे चल रही थी । अंत में मैंने ढीठ बनकर करीब जाकर उसे पत्थर मारा । तब जाकर वह उल्लू वहाँ से उड़ा । मैं भैंसों को लेकर घर आ गई । मैंउस उल्लू से बहुत डर गई थी, इसलिए मुझे रात को बुखार आ गया । अगले दिन भैंसों के लिए घास नही था । उन्हें चराने के लिए भी कोई नहीं था । इसलिए माँ ने दादाजी को कुछ दिन के घर लिए बुला लिया । मैं चार-पाँच दिन के बाद ठीक हो गई ।

एक बार बड़ी चाची बीमार थीं । उन्होंने चाचा से कहा, 'बहुत दिन हो गये हैं । मुझे कबूतर खाने का मन है, आप लेकर आना । शामके समय उनके तीनों बेटे भी काम से लौट आए । उन तीनों को साथ लेकर चाचा कबूतर को पकड़ने के लिये गये । घर पर पिताजी, माँ, चाची, दादी और काशीनाथ चाचा यह सब लोग थे । काशीनाथ चाचा बहुत आलसी थे, अगर वे एक बार सो गए तो, कोई मर भी क्यों न जाये वे उठते नहीं थे और वे कामचोर भी थे ।

रात हो चुकी थी । चारों बाप-बेटे कबूतर लाने गए थे उनका अभी तक कुछ अता-पता नहीं । घर पर माँ और चाची मसाला बनाकर उन्हीं के इंतजार में बैठीं थीं । हम सब बच्चे भी कबूतरों का रास्ता देखते हुए मुँह में पानी घूँटते हुए बैठे थे । आज हमें खाने के लिए भुना हुआ कबूतर और मसालेदार सब्जी मिलेगी इसी खुशी में हम सबकी नींद भाग चुकी थी ।

रात बहुत हो चुकी थी लेकिन उनका कुछ पता नहीं था । उनको वहाँ पर कबूतर नहीं मिले साथ में उनकी हालत भी बहुत खराब हो चुकी थी । वे घूम-घूम कर परेशान हो गए थे । वे चारों यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ घूम रहे थे । कभी डांगेवाड़ी गाँव की ओर तो कभी साकेगाँव की ओर जाते थे । ऐसे ही घूमते-घूमते भोर के चार बज गए थे । घर पर माँ-पिताजी, चाची

और दादी सब घबरा गए थे । सारी रात गुजर गई लेकिनयह चारों अभी तक नहीं आए ? मेरी दादी बहुत होशियार थीं । उनको कुछ सूझा औरउन्होंने कहा 'काशीनाथढोल बजा, ढोल की आवाज़ सुनकर वे घर वापस आ जायेंगे । चाचा ने ढोल बजाना शुरू किया । ढोल की आवाज़ से सारा गाँव जाग गया था । गाँव में हलचल मच गई । रास्ते से नाना और बच्चे, भगवान, विष्णु, जगन्नाथ, यह सब लोग ढोल की आवाज़ सुनकर दौड़ते हुए घर की ओर आ गए । कुछ ही देर में गाँव के सात-आठ लोग हमारे डेरों पर आगए और पूछने लगे, 'अरे गोपाल, क्या हुआ है ? तुम लोग इतनी भोर पहर में ढोल क्यों बजा रहे हो ? हमारी नींद ख़राब हो गई है । इसी बीच हमारे चाचा और उनके बच्चे आ गये । गाँव के लोगो को शंका होने लगी और वे कहने लगे- तुम कबूतर के लिए नहीं, चोरी करने के लिए गए होगे । ये सब लोग सारी रात चोरी करते रहे होंगे और कुछ ही देर में सारा गाँव एकत्रित हो गया । गाँव के लोग उनको गंदी-गंदी गालियाँ देने लगे और जिसके मन में जो बात आयी वह कहने लगे । लेकिन हम लोग चोरों की तरह चुप बैठे रहे । पिताजी उनके हाथ-पैर जोड़ने लगे और कहने लगेहम चोरी नहीं करते हैं, हम चोर नहीं हैं ।

मुझे दसवीं कक्षा में प्रवेश के लिए फार्म भरना था । स्कूल की सुपरवाइजर दीदी ने मुझसे कहा था, 'तुम चार-पाँच दिन में एक बार मेरे पास आते रहना और स्कूल की लड़कियों के पास से नोट्स लेकर, घर पर पढ़ाई करते रहना ।' मैंने फार्म भरा और घर पर पढ़ाई करने लगी लेकिन मेरा मन पढ़ाई में नहीं लग रहा था । स्कूल की पढ़ाई में और घर की पढ़ाई में बहुत अंतर था ।

औरंगाबाद के पास गोलवाड़ी गाँव से जगन्नाथ गायकवाड नाम का एक लड़का मुझसे शादी करने के लिए अपने मामा को साथ लेकर मुझे देखने आया । उनके चाचाने इस लड़के को

गोद लिया था । उनके चाची-चाचा दोनों की एक महीने पहले ही मृत्यु चुकी थी । हमारे समाज में ऐसी मान्यता प्रचलित थी कि- घर में किसी के मृत्यु के बाद तुरंत शादी करना होता है, नहीं तो तीन साल तक शादी नहीं कर सकते हैं । लड़का मैट्रिक फेल था ।पिताजी ने पूछा, 'बेटा यहाँ हमारे साथ रहोगे ? तब लड़के ने हाँ कह दिया । मैंने पिताजी को पहले ही कह दिया था कि, 'मैं अभी शादी नहीं करूंगी ।' पिताजी ने उन रिश्तेदारों से कहा कि, 'मैं औरंगाबाद आऊंगा उसके बाद क्या करना है सोचेंगे ।' वे रिश्तेवाले वापस अपने घर चले गए । फिर कुछ दिनों बाद रिश्तेवालों से मिलने उनके घर पिताजी, नाना, और मामा यह तीनों मिलकर औरंगाबाद गये । पिताजी ने उनके बारे में पूछताछ कीतब उनको समझ आया की शादी के बाद अगर दोनों (पति-पत्नी) मिलकर मेहनत करेंगे तभी गृहस्थी ठीक से चलेगी अन्यथा गुजारा करने में मुश्किल होगी । अगर ऐसे होगा तो बेटी के पढ़ाई करने का भी कुछ फायदा नही रहेगा । इसलिए पिताजी ने औरंगाबाद के आस-पास एक सुखदेव गिरहे नाम के लड़के को देखा।मामा और नाना दोनों ने भी पिताजी से सहमति जताई । वे लोग घर वापस आगए ।

दशहरे का त्यौहार पास आ चुका था । दशहरा हमारे समाज के लिए बड़ा त्यौहार है।घर पर देवी माँ की स्थापना होती थी और नौवे दिन देवी माँ का बलि चढ़ानी होती है । मतलब उस देवी के आगे बकरे की बलि देना होता था इस सबके बाद देवी माँ का पूजा संपन्न होती थी । दादी ने देवी माँ की स्थापना घर में की । उन्होंने नवरात्रों का उपवास रखा था । बलिदान देने के लिए पिताजी और चाचा दोनों मिलकर बकरा ले आए । देवी के पूजा के अंतिम दिन दशहरे का त्यौहार था । आज के दिन सुबह से कोई भी काम पर नहीं गया था । सारे गोपाल, गोपालिनियाँ और बच्चे सब अपने-अपने कपड़े लेकर गाँव के पास वाली नदी पर नहाने के लिए गए । उन्होंनेठंडे पानी से नहाया, बाल धोया और घर वापस आ गए ।

पिताजी दोपहर के समय एक मुस्लिम व्यक्ति को लेकर आए और उनके हाथों से घर के सामने बकरा काटा गया । अपने दोनों हाथों में दादी ने खून लिया और देवी को चढ़ाया और दर्शन करते हुए कहने लगी, 'माँ भवानी हमारे गोपालों पर अपना आशीर्वाद बनाये रखना और हम पर कोई आँचन आने देना ।'

बकरे के चारों पैर और सर काटकर देवी के सामने रखा गया । देवी के पूजा के लिए पति-पत्नी को बैठना होता है और वह पूजा घर से थोड़ी दूर पाँच पत्थर रखकर पति-पत्नी का गाँठ बाँधकर की जातीथी । पूजा के लिए भगवान चाचा और उनकी पत्नी आसरा बाई तैयार हो गए । दूसरे गोपालों के भी अलग-अलग पूजा चालू ही थी । कोई रोटी बना रहा था तो कोई मटन बनाने के लिए भगोने को चूल्हे पर चढ़ा रहा था । उन सब पकवानों को देखकर छोटे-छोटे बच्चे चूल्हे के सामने गोल पंक्तियों में बैठे थे और मुँह में पानी घूंट रहे थे बीच-बीच में वे कहने लगते थे - 'माँ, मटन पक गया है क्या ? बहुत भूख लगी है । एक टुकड़ा देगी क्या ?'

पूजा की तैयारी हो चुकी थी । पिताजी और जगन्नाथ ने आगे-पीछे धोती पकड़ लिया था । उस धोती के नीचे भगवान चाचा और चाची पूजा की थाली लेकर चल रहे थे । धोती पकड़कर जगन्नाथ और पिताजी, 'लागलाई लों पाताली लो' (देवी माँ को न्योता देने का एक जरियाँ) यह गाना गा रहे थे । आगे ढोल बज रहा था।मुझे दादी ने डेरे के आगे खड़ा किया था । उन्होंने मेरे सिर पर एक मटका रखा था । उस मटके में पानी, उस पर नारियल और आम के पत्ते रखे थे और मुझेदेवी माँ के रूप में खड़ा किया था । भगवान चाचा, और आसरा बाई चाची पूजा करके वापस घर आ गये और मुझसे पूछने लगे, देवी माँ के दर्शन हुए क्या ?'

भगवान चाचाने पूछा - 'देवी, कहो-कहाँ से आई हो ? और कहाँ जा रही हो ?

मैंने कहा - 'उत्तर से आई हूँ और दक्षिण की ओर जा रही हूँ ।

भगवान ने कहा, 'शितलंका'?

मैंने कहा, 'हाँ'

तब उन दोनों ने मुझे देवी समझकर मेरे पैर छुये और पूजा की । इसी तरह सारे गोपालों के घर पर पूजा चल रही थी । ढोल की आवाज़ जोर-जोर आ रही थी । अच्छे से मटन खाना है, यह सोचकर चाचा ने बहुत दारु पी रखी थी,चाचा नशे में बड़ी-बड़ी बातें करने लगे थे । उन्हें देखकर हमें हँसी आने लगी थी । माँ और चाची कहने लगी, 'ओजी अब बस हुआ पीना ।' बंद करो, नहीं तो गाँव के मराठी आएँगे और पूछेंगे कि, 'गोपाल, डेरों पर क्या हुआ है ? शांति से खाना खा लो ! सोने जैसे अन्न को मिट्टी में मिलाना है क्या ? चुपचाप आकर खा लो !

हम लोगों ने आज पेट भर मटन खाया था । सारा दिन आँखों के सामने दिखने वाला बकरा अब पेट में चला गया था । मन तृप्त हो चुका था । मन की इच्छा पूर्ण हो चुकी थी । मुँह को भी अच्छा स्वाद आ चुका था ।

कुछ दिनों बाद दसवीं कक्षा की परीक्षा आ गई थी । पढ़ाई न के बराबर ही थी । काम से फ़ुरसत ही नहीं मिलता था । उन्हीं दिनों औरंगाबाद से वह लड़का मंगनी के लिए अपने मामा और चाचा को लेकर मेरे घर आ गया । सुबह ही पिताजी ने भी चाचा और मामा दोनों को बुला लिया । पहले हल्दी की रस्म की बातचीत हुई इस पर मेरे मामा ने कहा यह रस्म हमारे घर पर होगी ।

लड़के का मामा कहने लगा - हमारे घर पर अशुभ है, शादी तुम्हारे घर पर ही करनी होगी । नहीं तो हमारा-तुम्हारा रिश्ता नहीं हो पायेगा । यह सब सुनकर पिताजी कुछ नहीं बोले । लड़के को लड़की पसंद आ गई इसलिए लड़के ने जिद्द पकड़ ली मुझे शादी उसी से करनी है

और उसने कहा लड़की को दसवीं की परीक्षा देने को कहो, मैं परीक्षा के बाद आता हूँ । यह कह कर हमारा रिश्ता तय हो गया ।

हमारे घर से जाने के आठ-दस दिन बाद लड़के का पत्र आया, 'मामा, बेटी को परीक्षा के लिए भेजना' यह पढ़कर पिताजी, मुझसे कहते थे, 'बेटी अब अच्छे से पढ़ाई करना और पास हो कर आना । लगता है लड़के को तुझे आगे पढ़ाने की बहुत इच्छा है । तेरा कल्याण होगा बेटी । पिताजी हमेशा मुझसे एक ही बात कहते थे कि, 'बेटी तू दसवीं पास हो जा बस ।'

कुछ दिनों बाद दसवी की परीक्षा आ गई । मैं परीक्षा देने जा रही थी । मुझे डर लग रहा था कि मैंने कुछ पढ़ाई नहीं की है । अब जाकर परीक्षा में क्या लिखूँ ? मैं कक्षा में जाकर डरते-डरते अपने नंबर की सीट पर बैठ गई । किसी तरह दसवीं की परीक्षा हो चुकी थी । सारी परेशानियों और दुखों को सहन करते-करते बहुत बुरा हाल हो चुका था, पहनने के लिए ठीक से कपड़े नहीं थे, खाने को खाना नहीं था । अब तक मेरी कोई इच्छा कभी पूर्ण नहीं हुई थी । सारा जीवन बेकार ही था । अंत में सब परेशानियों को झेलते हुए मै दसवीं कक्षा की परीक्षा उत्तीर्ण हो गई । ऐसा लगने लगा किपहले धूप और उसके बाद छांव की तरह सुख और दुखों की आदत सी हो गयी थी ।

मेरे पिताजी को बहुत ख़ुशी हुई उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं था ।

ऐसा लग रहा था कि जिन्दगीं की सारी परेशानियों से छुटकारा मिल गया है । सारी परेशानियाँ ख़त्म हो चुकी हैं । जैसे की थोड़ी सी बारिश की बूदों से मिट्ठी भीगने के बाद उस पर हरी घास की कोपलें दिखाई देती हैं, कुछ उसी तरह का जीवन था मेरा ।

प्रकरण-०४

भिक्षाटन और सगाई

दसवीं की परीक्षा हो चुकी थी और औरंगाबाद का लड़का चार लोगों को साथ में लेकर आया था । साथ में किशन चाचा, उत्तम मामा यह सब लोग थे । उन्होंने मंगनी की रस्म निभाई और उन्होंने मुझे साड़ी-चोली भेंट दी । लड़के के मामा ने कहा था मेंहदी लगा कर रखना । मेरी शादी की आधी रस्में सम्पन्न हो चुकीं थीं।

उसी गर्मियों में मेरी चचेरी बहन सरसाबाई की मंगनी और शादी दोनों सम्पन्न हो गई । सरसा की शादी धारवाड के मामा के बेटे से और मामा के बेटी की शादी सरसा के भाई भगवान से शादी हुई । एक ही जगह पर चारों भाई-बहनों की शादी हो गयी । चाचा को बारात धारवाडी लेकर जाना था । इसलिए किराये पर बैलगाड़ियाँ लायी गयीं थी । उसमें सामान रखकर छोटे बच्चों और दादी को बिठाया गया । दादी बहुत बुजुर्ग थीं वे अपनी वृद्धावस्था के कारण चलने में असमर्थ थीं । इस तरह भगवान भैया के शादी की बारात निकली थी ।

सारे गोपाल रास्ते से पैदल चल रहे थे । धूप ज्यादा होती है इसलिए हम लोग रात में निकले और सूरज निकलने से पहले धारवाडी गाँव पहुँच गए । हम चल-चल कर थक गए थे । आँखों से नींद जा नहीं रही थी । गाँव के पास वाले झरने पर गए और वहाँ जाकर हम सब लोगों ने नहा लिया । हम ने पहने हुए कपड़े धोए । थोडी देर सूखने के बाद उसको हम लोगों ने पहन लिया । हल्दी की रस्म सुबह थी । दूल्हा, दुल्हन दोनों की ओर से बकरे लाए गए । उनको काटा गया । क्योंकि बकरे को काटे बिना हल्दी की रस्म पूरी नहीं होती थी । एक परंपरा है कि गोपालों को हल्दी के रस्म का बकरा नही दिए तो, रस्म में आये हुए गोपाल शादी से भाग जाते

हैं । इसीलिए किसी भी हालत में बकरा काटना ही होगा । बकरे को काटा गया और बाजरे की रोटियाँ बनाई गईं उसके बाद बारह बजे बैठक शुरू हुई ।

इन दोनों जोड़ों की शादी एक तारीख को थी । पहली दुल्हन सांवली और दूल्हा एकदम काला पहाड़, दूसरी दुल्हन एकदम काली और दूल्हा सांवलाथा । इन चारों को हल्दी एक ही बार लगाना है, यह तय किया गया । एक तरफ़ गोपाल जोर-जोर से बातें कर रहे थे तो दूसरी ओर महिलाएँ हाथ में नारियल और छुहारा एक थाली में लेकर खड़े थे । ऐसे ही यह रस्म दो घंटे तक चली, दोपहर के दो बज चुके थे । दूल्हा, दुल्हनों को हल्दी लगाने को कहा गया था, यह सब कुछ मैं ध्यान से देख रही थी । रात का बचा हुआ मटन और बाजरे की रोटियाँ खाने के लिए हम सब एक जगह पर बैठ गए । शादी के लिए हमारा सारा खानदान आ चुका था । सारे गोपाल एक जगह बैठ कर गाना गा रहे थे । यह सब ऐसे ही चलता रहा और यही सब करते-करते रात गुजर गई ।

शादी कि रस्में सम्पन्न हो चुकीं थी । सब लोगों ने मंडवे में बैठकर खिचड़ी खाई । अगले दिन फल की रस्म की गयी । इसमें सभी बारातियों से चार-चार पैसे और नवविवाहित पति-पत्नी से दस-बीस रुपए लेकर पैसों को इकठ्ठा किया गया । उन पैसों से, किसी विधवा स्त्री, पति से अलग रह रही स्त्री, यासमाज के जरुरत मंदबहू-बेटी की सहायता की जाती थी । इस तरह यह कार्य भी संपन्न हुआ और शादी भी हो गयी ।

गर्मियों की छुट्टियाँ हो चुकी थीं और जून के माह में दसवीं के रिजल्ट आए । मैं पास हुई या नहीं, देखने नहीं गई । पास होगी या नहीं कुछ पता नहीं था । पास होने को लेकर मुझे बहुत चिंता होने लगी थी । मैडर के मारे घर में ही बैठी रही । मैंनेपिताजी को अपना रोल नंबर देकर रिजल्ट देखने के लिए स्कूल भेज दिया।परीक्षा का रिजल्ट देखकर पाथर्डी से पिताजी

शामको घर आए । पिताजी के चेहरे पर ख़ुशी साफ़ दिख रही थी । पिताजी ने मुझसे कहा - ‘बेटी, तू पास हो गई है, ऐसा मास्टरजी ने कहा है ।’ यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हो रही थी । मारे ख़ुशी के मेरे पैर धरती पर नहीं थे । मैं दसवीं की परीक्षा पास हो चुकी थी । परीक्षा उत्तीर्ण होने की ख़ुशी और अब आगे क्या करना है ? ये सब सोचते हुए सारी रात मुझे नींद नहीं आयी ।

सुबह-सुबह पिताजी एक पत्र लेकर आये और मुझसे कहा, ‘बेटी, औरंगाबाद को पत्र भेज । लिख कि ‘मैं पास हो गई हूँ ।’ इस पत्र के पहुँचते ही पत्र का प्रत्युत्तर मिला कि- ‘अब डी.एड. के लिए फॉर्म भरना ।’ मुझे अब डर लगने लगा था, पाथर्डी में तो डी.एड का कॉलेज नहीं है । नगर के कॉलेज के लिए फॉर्म भरना होगा । पिताजी सोचने लगे - नगर में पढ़ाई करना मतलब, खर्चे का बढ़ जाना । खाना-पीना, रहना,अच्छे कपड़े यह सब कैसे होगा ? डी.एड का मतलब क्या है, इसका फॉर्म कब और कैसे भरना है ? इसके बारे में मुझे कोई जानकरी नहीं थी । पिताजी और मैंने एडमिशन के लिएनगर के दो-तीन चक्कर लगाए, लेकिन मेरा एडमिशन कहींर भी नही हुआ । अब क्या करना है ? एक वर्ष बेकार जाने वाला था, दूसराकुछ उपायन था । पास होने की सारी ख़ुशी का रंग मलिन हो रहा था । औरंगाबाद से पति के पत्र आने लगे थे और पिताजी भी यहाँ से पत्र भेज रहे थे । मुझे लग रहा था की भगवान मेरी परीक्षा ले रहे हैं ।

ऐसे ही एक दिन अचानक मेरे पति घर आए । किसी ने मेरे बारे में उनको बहकाया था । वे पाथर्डी के बाजार गए । वहाँ पर एक होटल में बोराड्या का एक बूढ़ा आदमी बैठा था । उनके पास जाकर उन्होंने मेरे बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए पूछा -

लड़का : दादाजी खेडा गाँव में एक बाबू गोपाल हैं । ऐसे सुना है कि उनकी बेटी पढ़ाई करती है, सही है क्या ? उसका रहन-सहन कैसा है ?

बूढा : बाबू की बेटी अच्छी है, उसके पिताजी भी बहुत अच्छे हैं । तू क्यों पूछ रहा है ?

लड़का : मेरे दोस्त के लिए लड़की देखने आया था ।

तब लड़का आश्वस्त हुआ कि दूसरे समाज के सारे लोग लड़की को अच्छा मानते हैं,मतलब जोकुछ भी मैंने सुना है वह सब झूठ है । उनकी गलत बातों का मतलब उनका अहित करना है । इस तरह से सोचते हुए वेहमारे घर आ गए और डी.एड.प्रवेश को लेकर बातचीत हुई ।

पिताजी को लगने लगा कि, लोग कुछ भी कहने लगे हैं । अब मुझे बेटी की शादी कर देनी चाहिए । इसलिए पिताजी, नाना, और सखाराम मामा तीनों लोग मिलकर औरंगाबाद (गोलवाड़ी) मेरी ससुराल गए । नाना जी ने सास से कहा- 'बेटी तुम्ही इन बच्चों की अभिभावक हो, अब इनकी शादी करा दो । शादी होने के बाद दोनों जबतक चाहे पढ़ाई कर सकते हैं । अगर आपको यह स्वीकार नहीं है तो हम अपनी बेटी के लिएदूसरा वर देखते हैं । लेकिन सास ने कहा मैं वचन वापस नहीं ले सकती । लोगों को कुछ भी कहने दो । मैं किसी की भी सुनने वाली नहीं हूँ । आप भी किसी की सुनो मत ।हम अगले वर्ष शादी के मौसम में शादी करेंगे ।' इस तरह बात होने के बाद पिताजी, नाना, और मामा सब लोग घर वापस आ गए ।

एक बार दशहरे के समय मेरी सास औरंगाबाद बाजार आई । बाजार मेंउनकी मुलाकात पाथर्डी के कुछ गोपालों से हुई । गोपालों ने उनसे मेरी खूब बुराई की । उन्होंने मेरीसास से कहा- दीदी हमने सुना है कि आपने हमारे गाँव के बापू गोपाल की बेटी से अपने बेटे का रिश्ता तय किया है ।

सास ने कहा- हाँ, क्या हुआ ?

गोपाल - दीदी, आपको पता नहीं, उस लड़की की शादी श्रीरामपुर के एक लंगड़े लड़के से पहले ही हो चुकी है ।

ऐसे ही बहुत सारी झूठी बातों से उन लोगों ने मेरी सास के कान भरे । यह सब सुनकर मेरी सास को हम लोगों पर बहुत गुस्सा आया और वे बाजार से बिना खरीददारी किये ही वापस अपने घर चली गई । उन्होंने बाजार में सुनी हुई सारी बातें अपने लड़के को बतादिया । लेकिन लड़के को उनकी इन सब बातों पर विश्वास न था । इस बात को लेकर के माँ-बेटे में अनबन रहने लगी ।

सास हमेशा बेटे से झगड़ा करती थी, कहती थी कि मै पहले से ही कह रही थी कि बेटा पहले शादी कर लेफिर करवाते रहना लड़की को पढ़ाई मगर तूने मेरी एक न सुनी । देख लिया नतीजा निकल गयी लड़की हाथ से । मेरी सास यह कह-कहकर पछता रही थी । दस-पंद्रह दिन बाद दिवाली थी । दिवाली के अगले दिन सास, लड़का, कोंड्या मामा, और चाचा यह सब लोग हमारे घर आ गए । उस दिन रिम-झिम बारिश हो रही थी । पिताजी घर पर ही थे । उन लोगों के अचानक घर आने से पिताजी आश्चर्य एवं चिंता हुई कि आखिर क्या कारण है कि वे सारे लोग अचानक घर आए ।

मैं घर पर नहीं थी । भैंसों के खाने के लिए कुछ नहीं था । मैं और मासी का बेटा नामदेव हम दोनों घास लाने गए थे । बारिश रिम-झिम रिम-झिम हो रही थी । इसलिए हम पास के ही एक खेत से घास लेकर भीगते हुए घर आ रहे थे । खेत के कीचड़ से सारा शरीरगन्दा हो चुका था,इसी बीच मेरा चचेरा बड़ा भाई हमारी ओर भागते हुए आया और उसने कहा घर पर तेरी सास और रिश्तेदार आए हैं, लेकिन मुझे उसकी बातों पर यकीन नहीं हुआ । मैं और नामदेव सिर पर घास का बोझा रखकर डेरे पर आ गए । मैं घास रखकर डेरे के अंदर गई । मेरी सास

ने मुझे अपने पास बिठा लिया और प्रशंसा करते हुए बोली- 'बेटी कितनी मेहनती है, बारिश में भी नहीं बैठती है ।' और चुपके से धीरे-धीरे मेरे गले को टटोलकर देखने लगी कि, क्या सही में मेरी शादी चुकी है ? वे देख रही थीं किकही मेरे गले में मंगलसूत्र तो नहीं है । मुझे उनका यह व्यवहार अजीब लगा लेकिन मैं चुप-चाप बैठी रही । जब सास को इस बात पर यकीन हो गया कि उनसे बाजार में लोगों ने जो भी बातें कही थी वे सब झूठ हैं तो वे गुस्से से लाल हो गयीं । फिर उन्होंने अचानक मेरे घर आने का और बाजार का सारा वृत्तांत, जो लोगों ने उन्हें बताया था, सब कह सुनाया ।

मेरी सास बहुत चतुर थीं । उनको यह लगने लगा था कि लोगों को इस रिश्ते से जलन हो रही हैं । वे नहीं चाहते कि यह रिश्ता हो । उन्होंने मेरे पिताजी से कहा कि- भैय्या अब इन दोनों की शादी जल्दी ही करवा देते है वरना लोग क्या-क्या अफवाह फैलायेंगे । मेरी सास को हमारी शादी करवाने की जल्दी थी, अब वे कुछ भी सुनने को तैयार नहीं थीं । वे सारी रात हमारे घर पर ही रुकीं उन्होंने परिवार के सारे लोगों से बातचीत की । वे बार-बार दुलार से मेरे सिर पर हाथ फेरती थीं और मेरे खिलाफ उनके कान भरने वाले गोपालों को गालियाँ देती थीं। अगले दिन बुधवार था, उस दिन पाथर्डी का साप्ताहिक बाजार होता था । मेरी सास मुझसे कहा- 'चलबेटी, हम बाज़ार देखकर आते हैं ।' हम दोनों सास और बहू तथा पिताजी और बाकी रिश्तेदार, जो घर आये थे, सब मिलकर बाजार गए । मेरे बारे में उड़ रही अफवाहों से पिताजी थोड़े उदास थे । मेरे ऊपर शक करने के प्रायश्चित स्वरुप मेरी सास ने मेरे लिए साड़ी और चोली तथा चूड़ियों को ख़रीदकर अपने मन को सांत्वना दिया ।

हम सब शाम को बाजार से घर आ गए । रात के भोजनके बाद आपस में बातचीत करते हुए सो गए ।तीन दिन ऐसे ही गुजर गये।लड़के का सारा ध्यान मेरीडी.एड.की पढ़ाई पर ही

केन्द्रित था। वह सोच रहा था कि किसी भी हालत में मेरा दाख़िला हो जाए और उसके बाद तुरंत हमारी शादी हो जाये बस ।वह बहुत सीधे थे, एकदम शांत रहते थे । किसी से ज्यादा बातचीत नहीं करते थे । शादी में आने वाले इतने सारे व्यवधानों को देखकर एक बार तो मेरा मन इतना परेशान हो गया मुझे लगने लगा कि इतने सारे झंझटों से अच्छा है की मैं शादी ही ना करूँ । परंतु शादी समाज का एक अनिवार्य बंधन है इसमें हर किसी को बंधना पड़ता है । अंततः मुझे भी इस सामाजिक बंधन को स्वीकार करना ही पड़ा ।

एक वर्ष बीत चुका था ।मैं घर पर ही थी । एक वर्ष के बाद मैंने पुनः डी.एड.में प्रवेश के लिए आवेदन किया । मैं और पिताजी शहर गये थे । पिताजी को लगता था कि हम दोनों के हालात को देखकर कोई दाखिला नहीं देता है । अंत में हाथ-पैर जोड़कर किसी तरह महाराष्ट्र कॉलेज में मुझे दाख़िला मिला ।

उस कॉलेज की लड़कियों से हमें पता चला की डी.एड. के पढ़ाई के लिए दस रुपए स्कॉलरशिप भी मिलती है । यह जानकारी मुझे और पिताजी को नही थी । स्कॉलरशिप की बात सुनकर पिताजी ने चैन की साँस ली, वे कहने लगे-बेटी पढ़ाई करने के लिए तुझे पैसे मिलेंगे तू तो जीत गई । यह बहुत अच्छा हुआ बेटी । आज का हमारा दिन बहुत शुभ था, हमने सुबह-सुबह न जाने किसका मुँह देखा था ! कॉलेज की मैडम ने मेरा नाम दाख़िला रजिस्टर में दर्ज करलिया । हम बाप-बेटी ख़ुशी-ख़ुशी घर वापस आ गए ।

कॉलेज के खर्चे की फिक्र से छुटकारा मिल चुका था । लेकिन मेरे रहने का ठिकाना कहाँ होगा ? इसके लिए पिताजी ने पूछताछ की । इस समस्या का भी निदान हमारे गाँव के माली मास्टर की सहायता से हो गया ।उनकी सलाह पर पिताजी ने मेरा नाम हॉस्टल में लिखवाया ।

अब रहने, खाने-पीने की व्यवस्था हो चुकी थी । आठ दिनों बाद मुझे घर सेहॉस्टल में जाना था ।

पहली बार हॉस्टल जाने परखर्च के लिए कुछ पैसों की जरूरत थी । मेरे चाचा ने मुझसे कहा कि- मै हॉस्टल में पहनने लायक अपने सारे कपड़े अच्छे से धुल डालूँ । मेरादाख़िला होने के कारण घर में ख़ुशी का माहौल था । चाचा ने कहा मैं खुद नहाकर तैयार हो जाऊं और सारे घर की सफाई कर डालूँ । हम लोग सुबह जल्दी उठकर तैयार हो गए और अपने देवस्थान सकलादी पीर (देवस्थान का नाम) जो की रवन्यापरांड्या (औरंगाबाद के आस-पासएक जगह का नाम) में पड़ता है । उसकी एक शाखा पाथर्डी तालुके में भी है । गुरुवार के दिन हम सब लोग मिलकर वहाँ परबकरा, नमक, आटा, मसाला और जरुरी सामान की गठरी सर पर रखकर गये । वहाँ जाकर पत्थरों को जोड़कर चूल्हा बनाया गया, जिस पर रोटियाँ सेंकीं गयीं । चाची ने एक पत्थर पर मसाला पीसा । पुरुषों ने बकरा काटा और उसे पेड़ पर टाँगकर उसके टुकड़े किए । उसे माँस पकाया गया । पकाने के बाद सब लोग ढोल बजाते हुए पीर बाबा को चढ़ाने के लिए ले गए । उपस्थित सारे पति-पत्नी एक पंक्ति में हाथ जोड़कर खड़े हो गए । चाचा ने पीर बाबा की पूजा की । पूजा के बादसब लोग खाने के लिए बैठे महिलाओं ने सबको बकरे की सब्जी और ज्वार की रोटी परोसी । सारे पुरुषजोर-जोर से बातें करते हुए बकरे की हड्डियाँ चूस-चूसकर खा रहे थे । उनकी बातों में स्वाभिमान नजर आ रहा था । बहुत दिनों बाद आज उन्हें भरपेट मटनखाने को मिला था । मटन के साथ दारू की भी व्यवस्था थी ।

अब मटन खाकर सारे लोग तृप्त हो गए थे और बचा हुआ घर नहीं ला सकते इसलिए उसे नदी में फेंक दिया क्योंकि हम गोपालों के हाथ का खाना कोई (अन्य बिरादरी का) नहीं खाता था ।

अब कॉलेज शुरू होने वालाथा।गोलवाड़ी से हमेशा पत्र आने लगे कि, ‘बेटी, को घर पर न रखें उसे पढाई के लिए शीघ्र कॉलेज भेज दें ।’ अब नगर जाने के लिए पिताजी के पास पैसे नहीं थे । पिताजी को कुछ समझ नहीं आ रहा था किक्या करना है ? पिताजी ने पाथर्डी के मारुड्या के पास से दस रुपये सैकड़े प्रतिमाह की दर से कुछ पैसे सूत पर ले आए । कपड़े खरीदने के लिए मास्टर जी ने कुछ पैसों की मदद की ।

अब मैं नगर जाने वाली थी ! नौकरी पाकर ही रहूँगी ! शादी के लिए लड़का गरीब ही क्यों न हो, लेकिन पढ़ा-लिखा मिलेगा । माँ अक्सर पिताजी से यह कहते हुए झगड़ती रहतीं थी कि- ‘बेटी की पढाई के लिए तुम इतने क्यों अड़े हो ? पढ़े-लिखे लड़के के लिए बेटी की इतनी दूर शादी करवा रहे हो ! वह औरंगाबाद कहाँ हैं ? हमने कभी देखा भी नहीं । इतनी दूर शादी मत करवाओ । पढ़ाई करवाने के लिए लड़का पत्र भेज रहा हैऔरतुम भी उसकी बातों में आ रहे हो । क्या पता, लड़का अच्छा है या बुरा, पढ़ाईकरता है या आवारागर्दी करता है ! किसे पता है? क्यों लड़के की बातों के बहकावेमें आकर बेटी को शहर भेज रहे हो ? यह पागलपन दिमाग से निकाल दो । समझदार बनो ! वह विधवा औरत का लड़का है, कैसा होगा क्या पता ? बेटी का कहना क्यों सुन रहे हो, बेटियों का सुनकर आखिर आजतक किसका भला हुआ है । माँ की ऐसी कटु बातें सुनकर पिताजी को बहुत गुस्सा आता था, लेकिन वे माँ की ऐसी बातों को चुपचाप सुन लेते थे, कोई प्रतिक्रिया नहीं देते थे ।

कभी-कभार माँ को समझाते हुए पिताजी कहते थे-मेरी एक ही बेटी है, दस बारह बेटियाँ नहीं हैं । उसको जल्दबाजी में किसी गधे के हवाले नहीं करने वाला ! अब जो होगा देखा जाएगा मैंने तय कर लिया हैऔर अब मैं पीछे हटने वाला नहीं हूँ । मैं औरंगाबाद होकर आया हूँ ।लड़के

की माँ साक्षात्देवी का रूप है । उन्होंने मुझे अपने बारे में सब कुछ बताया है । मुझे उनका स्वभाव अच्छा लगा ।

वह हमेशा अपने बेटे से कहती रहती हैं कि - बेटे पहले शादी करलो फिर जहाँ तक पढ़ाई करनी है, करते रहना । तुम्हारी शादी से मुझे बहुत ख़ुशी होगी । सुना है उसे अपने बेटे के लिए एक पढ़ी-लिखी बहू की चाहत है ।

लड़के की माँ से मालेगाँव के गोपालों ने आकर चुगली की कि - चंदाबाई बाप्या की बेटी पढ़ी-लिखी है इसीलिए ज्यादा उछल रही हो, तुमको पता है कि वह लड़की गोपालों की नहीं मंगनियों की है । तेरे बेटे के शादी में बिरादरी के इंसान तो छोड़ो कुत्ते भी नहीं आने वाले । उनकी इन बातों से लड़के की माँ गुस्सा होकर कहती -'देख, मेरी बहू का बाप मांगने वाला है या गोपाल तुम्हें इससे क्या वास्ता ? तुम पहले अपनी माँ से जाके पूछो कि तुम्हारा बाप कौन है ? और खबरदार आगे से मेरी बहू के बारे में अनाप-शनाप कुछ भी कहा तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा । उसकी इस फटकार से चुगली करने वाले सारे गोपाल मुँह लटकाकर वापस आ गए । और आज तक उनकी हिम्मत नहीं हुई की वे उनकी बहू के बारे में कोई अफवाह फैलाएं ।

हम दोनों के परिवार एक-दूसरे के प्रति भरोसेमंद थे । इसीलिए दोनों परिवारों के बीच मतभेद पैदा करने की किसी की कोई भी कोशिश कामयाब नही हुई । मेरी सगाई गोलवाड़ी के गिरहें परिवार (ओंकार गिरहें से) में तय हो गई । लेकिन दोनों की पढ़ाई बीच में ही थी ।इसलिए हम दोनों शादी को टालना चाहते थे । लेकिन हमारा यह फैसला हमारे गाँव-समाज के लोगों को मंजूर नहीं था । वे हमेशा आते-जाते, खाते-पीते, उठते-बैठते मुझे ताना मारते रहते थे । वे कहते थे कि- बाप्या की बेटी उम्रदराज हो गई है, अब उस से कौन ब्याह करेगा । सगाई की रस्म कोई कागजी खेल थोड़ी है । न ही सगाई का मतलब कोई गुड्डे-गुड़ियों या गिल्ली-डंडे का खेल है ;

यह तो जन्म-जन्मांतर का बंधन है । यह बंधन पक्का होना ही चाहिए । उनके यह सब ताने सुनकर मेरा मन अत्यंत विक्षुब्ध हो जाता था । मैं और पिताजी घंटों बैठकर लोगों के इस व्यवहार पर सोचते रहते थे । पिताजी सोचते थे कि मैं कैसे इन सब चीजों से पार पाऊँगी । भगवान जाने अब क्या होगा !

मैं पिताजी को ढाढ़स बंधाते हुए कहती थी कि- पिताजी हमें अपने व्यवहार को बिलकुल संयमित रखना है । लोगों की बातों से बिलकुल भी घबराना नहीं है । मै डी.एड.जरूर करुँगी । आपको किसी की बातों से डरने की आवश्यकता नहीं है । लोगों की बातों को हमें तवज्जो बिलकुल नहीं देनी है ।

ओंकार गिरहे जी से मेरा रिश्ता तय होने के बाद की बात है, एक दिन सुनने में आया कि पैठण गाँव का एक ट्रक-ड्राइवर था, उसकी बीवी कि मृत्यु हो चुकी थी । कैसे हुई यह सब मुझे सही से पता नही था । मेरे लिए उसका का रिश्ता लेकर मेरे बड़े चाचा आये थे । मुझे उनका यह कृत्य बहुत ही अशोभनीय लगा । उनको यह सब नहीं करना चाहिए था । एक बारमरने वाले का हाथ पकड़ सकते हैं, लेकिन बोलने वालों की जबान नहीं पकड़ सकते । चाचा ने पिताजी से कहा- ‘बाप्या लड़का पहले से नौकरी वाला है और पैठण हमारे गाँव से ज्यादा दूर भी नहीं है । लड़के को दस-पन्द्रह दिनों में शादी करनी है । इसीलिए अब औरंगाबाद वाला रिश्ता छोड़ दो और इस नए वर से शादी के लिए तैयार होजाओ । अगर मेरे बस में होता तो मैं आठ दिनों में ही बेटी की शादी करवाकर ससुराल भेज देता । चाचा की ऐसी बातों को सुनकर मैं गुस्से से आग-बबूला हो गयी । अपने गुस्से को कम करने के लिए मैं जोर से चिल्लाई ।

मेरी इतनी ही चिंता है कि, मेरी पढ़ाई बंद कर दूसरे के पति के घर में मुझे भेज रहे हो । मैं बोझ हो गई हूँ कि मुझे आठ दिन के अंदर घर के बाहर निकाल देना चाह रहे हो ? मैं

किसी के बाप का नहीं खा रही हूँ । अगर मैं शादी करुँगी तो अपने मन से करुँगी, किसी के दबाव में नहीं करुँगी, चाहे बिन-ब्याही ही क्यों न रहूँ । आगे से किसी ऐरे-गैरे से मेरे रिश्ते का नाम नहीं लेना । मैं ऐसे बड़बड़ाते हुए अपने मन की भड़ास निकाल रही थी ।

मेरेबातों से माहौल बदल गया था । अब कोई भी मेरी शादी के विषय में चर्चा नहीं करता था । मेरी ससुराल से शादी के विषय में पत्र आते थे कि- लड़की की पढ़ाई जारी रखो, हम अगले वर्ष शादी करेंगे । गाँव-समाज के लोग मुझ पर और पिताजी पर हँसते थे । वे कहते थे- यह बाप्या गोपाल अपनी बेटी की शादी ऐसे नहीं करेगा, जब किसी दिन लड़की स्कूल जाने के नाम पर किसी के साथ भाग जाएगी तब जाकर इसकी नींद खुलेगी ।

मैंने अपने जीवन में 'माँगना'(भीख माँगना) और 'मंगनी' (सगाई) के कारण बहुत सारे कष्ट सहे हैं । मेरी पढ़ाई यूँ ही नहीं अनवरत जारी रही, उसके पीछे पिताजी के अदम्य साहस, कठिन परिश्रम और मुझे शिक्षित करने की जिद थी । जिसका परिणाम था कि मेरे घर में भी शिक्षा की अविरल धारा प्रवाहित हुई ।

प्रकरण०५

आगे कुआँ और पीछे खायी

मेरा प्रवेश डी.एड. कॉलेज में हो गया था । कुछ समय के लिए मुझे लगा कि मुझे सारे झंझटों से मुक्ति मिल गयी । कॉलेज में पढ़ने के लिए फ़ीस, पुस्तक, ड्रेस इत्यादि की जरुरत होती है । मैं कॉलेज में रहने की तथा खाने की व्यवस्था करने लगी । गाँव के माली मास्टरजी की सहायता से मेरा दाख़िला कॉलेज के हॉस्टल में हो गया था । एक पुराने लोहे के बक्से में कुछ फटे-पुराने कपड़े तथा ओढ़ने की चादर मैंने हॉस्टल ले जाने के लिए रखी । गाँव से नगर तक छोड़ने के लिए पिताजी साथ आये थे । हॉस्टल में वाघमारे बाई नाम की एक बुजुर्ग महिला थीं, उन्होंने मुझे एक चारपाई दी । हॉस्टल में एक बड़ा-सा कमरा था, उस कमरे में दस-बारह लडकियाँ पहले से थीं ।उसी कमरे में मेरे रहने की व्यवस्था की गयी । पिताजी हॉस्टल की उस बुजुर्ग महिला से बात करते हुए कह रहे थे कि- मैं बहुत गरीब हूँ आप मेरी बेटी का खयाल रखना । कोई दिक्कत होने पर उसकी मदद करना । ऐसा कहते हुए पिताजी रोने लगे ।

पिताजी मुझे हॉस्टल में छोडकर घर वापस चले गए । हॉस्टल का पूरा वातावरण मेरे लिए एकदम नया था । जीवन में मुझे पहली बार फर्श लगे हुए पक्के घर में रहने और लेटने के लिए चारपाई मिली थी । मैंने बड़ी उत्सुकता से पूरे हॉस्टल को निहारा । वहाँ पर काम करने वाली बाई और सहपाठी लडकियाँ सब लोग मेरे लिए नए थे । शाम को वहाँ रहने वाली सभी लडकियाँ मेरे पास आईं और वे मेरे बारे में पूछताछ करने लगीं । उनको मेरे बारे में जानने की उत्सुकता थी । मैंने भी उन्हें अपने बारे में सबकुछ बताया । मुझे हॉस्टल का माहौल कुल मिलाकर अच्छा लगा । वहाँ रहने वाली लगभग सभी लड़कियाँ ग्रामीण पृष्ठभूमि की ही थीं ।

अगले दिन सुबह सारी लड़कियाँ नहा-धोकर बालों को कंघी करके क्रीम-पाउडर लगाकर सज-धज कर कॉलेज जाने के लिए तैयार हो गयीं । मेरे पास एक मोटी कंघी के सिवा सजावट का और कोई सामान नहीं था । मैंने बिना तेल लगाए बालों की पक्की चोटी बनाकर बिना रिबन लगाए उसे खुला ही छोड़ दिया । मेरे पास बदलने के लिए कपड़े नहीं थे । मेरे पास सिर्फ एक जोड़ी साड़ियाँ थीं, वह भी पुरानी । एक साड़ी मैंने पहन ली और दूसरी तहाकर रख दी ।सभी लड़कियों के साथ मैं भी सुबह साढ़े सात बजे डरते-डरते कॉलेज गयी । कॉलेज जाते हुए मुझे ऐसे डर लग रहा था जैसे शिकार को किसी शिकारी के बिछाये जाल से । मैंने कॉलेज में प्रवेश किया । वहाँ सारे लड़के-लडकियाँ साफ़-सुथरे कपड़े पहने प्रार्थना के लिए पंक्तिबद्ध खड़े थे । मैं भी जाकर उनके बीच खड़ी हो गई । वहाँ उपस्थित सारे विद्यार्थियों का ध्यान मेरी मलिन फटी हुई साड़ी पर ही था ।

मैं कक्षा में गयी वहाँ विद्यार्थियों को बैठने के लिए बेंच थी । मैं कक्षा में सबसे पिछली बेंच पर जाकर बैठ गयी । पूरी कक्षा भरी हुई थी । कक्षा में कुल तीस लड़के और मुझे मिलाकर कुल ग्यारह लड़कियाँ थीं । मेरे कक्षाध्यापक जाधव सर थे । सर ने कक्षा में आते ही उपस्थिति ली । डर के मारे मेरी हालत कक्षा में उठकर हाजिरी बोलने की नहीं थी । कक्षा में हर घंटे अध्यापक बदलते रहते थे । कॉलेज में दो महिला शिक्षिकायें भी थीं । मरकड बाई नाम की शिक्षिका हमें इतिहास और नागरिकशास्त्र तथा सांगले सर गणित विषय पढ़ाते थे । हमारे कक्षाध्यापक जाधव सर विज्ञान तथा कॉलेज के प्राचार्य सर हमें अंग्रेजी विषय पढ़ाते थे । कॉलेज में शारीरिक शिक्षा का विषय अनिवार्य था । इसीलिए इस विषय का अतिरिक्त महत्व था । यह विषय मुझे बहुत प्रिय था । शारीरिक शिक्षा के अध्यापक का नाम मुझे अब ठीक से याद नहीं है । इसके साथ ही कॉलेज में संगीत और बागवानी संबंधी विषय भी पढ़ाये जाते थे ।

कक्षा में हमेंकुल मिलाकर ग्यारह विषय पढ़ाए जाते थे। कक्षा में लिखने के लिए तथा गृहकार्य लिखने के लिए प्रत्येक विषय की दो-दो कॉपियों अर्थात कुल बाईस कॉपियों की जरूरत थी । पढ़ाई के लिए मिलने वाली स्कॉलरशिप अभी तक नहीं मिली थी ।कॉलेज के प्राचार्य का कहना था कि जब स्कॉलरशिप स्वीकृत होगी तभी सबको दी जाएगी । जब तक स्वीकृति नहीं मिलती तब तक कुछ नहीं मिलेगा ।पिताजी को लगता था कि बेटी को पढ़ाई के लिए छात्रवृत्ति मिल जाएगी इसीलिए उन्हें मेरी कोई चिंता नहीं थी । अर्थाभाव के कारण मुझे अपने भोजन-पानी की चिंता होने लगी । पिताजी को यहाँ के हालात के बारे में कुछ भी पता नहीं था । मेरे पास अपनी खुद की पुस्तकें नहीं थीं । मुझे अपनी पढ़ाई बिना पुस्तकों के किसी प्रकार करनी पड़ रही थी । इस विषम परिस्थिति में मैंने पिताजी को एक पत्र लिखा । पत्र को पढ़कर पिताजी को मेरी चिंता होने लगी की मैं अब बेटी की सहायता कैसे करूँ । उनके पास भी पैसे नहीं थे सारे पैसे तो मुझे हॉस्टल छोड़ने के लिए नगर आने-जाने में ही ख़र्च हो गये । पिताजी ने मेरा वह पत्र पाथर्डी गाँव के एक मास्टर जी को दिखाया । मुझे उन मास्टर जी का नाम याद नहीं लेकिन वे बहुत सज्जन आदमी थे । पत्र को पढ़कर उन्होंने मेरी सहायता के लिए पिताजी को अपनी कुछ पुरानी किताबें तथा पहनने के लिए अपनी पत्नी की कुछ पुरानी साड़ियाँ दीं । पिताजी वह सारा सामान लेकर हॉस्टल में मुझे दे गए । हॉस्टल में रहने-खाने का मासिक ख़र्च साठ रुपये था । इस मुसीबत में हॉस्टल में काम करने वाली बाई ने मेरी सहायता की । उसने हॉस्टल के मेरे खर्चे के साठ रुपये भरने की स्वीकृति इस लिखित शर्त के साथ दी कि मैं स्कॉलरशिप पाते ही सबसे पहले उसके पैसे वापस करदूँगी । इस लिखित शर्त की एक प्रति उसने कॉलेज के स्कॉलरशिप विभाग को भी प्रेषित की । उसने विभाग के अधिकारियों को बता दिया कि बिना मेरी उपस्थिति के इस लड़की को स्कॉलरशिप के पैसे ना दिए जायें। उस

कामवाली बाई की सहायता के कारण, तत्कालीन समय के लिए ही सही मेरा तनाव कुछ कम हुआ ।

हमारी कक्षाएं चल रही थीं । हॉस्टल में खाने-पीने की व्यवस्था हो चुकी थी । दिन में दो बार ही सही लेकिन भरपेट भोजन करने को मिल जाता था । हॉस्टल में रहने वाली सभी लड़कियों की खाने की थालियाँ स्टील की थीं लेकिन मेरी थाली एल्युमीनियम की दबी-पिचकी हुई थी, घर पर जिसका प्रयोग पहले मेरी माँ अक्सर भगोना ढकने के लिए करतीं थीं जिसके कारण चूल्हे के धुएं से मेरी थाली एकदम काली हो चुकी थी । उस थाली को लेकर हॉस्टल की लड़कियों के साथ पंगत में खाने बैठने पर मुझे शर्म आती थी । मेरे पास और दूसरी कोई थाली नहीं थी । उसी थाली में खाना मेरी मजबूरी थी ।

मेरी ऐसी हालत देखकर हॉस्टल की अन्य लड़कियाँ न तो मुझसे दोस्ती करती थीं, न ही मेरे साथ कॉलेज जातीं थीं । मुझे अकेले ही कॉलेज जाना पड़ता था । हॉस्टल तथा कॉलेज की लड़के-लड़कियों को जबसे मेरी जाति पता चली, वे मुझसे बच के रहते थे । मेरे साथ वे अछूत जैसा व्यवहार करते थे । मुझको वे चोर समझते थे जिसके कारण वे मेरे सामने पैसे वगैरह नहीं निकालते थे ।

कॉलेज में शारीरिक शिक्षा का प्रशिक्षण प्रारम्भ हो गया था । पी.टी. के लिए पैंट-शर्ट अनिवार्य थी । जूते-मोज़े सहित पूरी ड्रेस की कीमत छियासी रुपये थी । मेरे पास छह पैसे तक नहीं थे, छियासी रुपये मैं कहाँ से लाती। ड्रेस न होने के कारण सर ने मुझे कक्षा से बाहर कर दिया । इस बात पर मुझे बहुत रोना आया । मैं हॉस्टल आकर बहुत रोयी । और कोई उपाय नहीं था । ड्रेस तो कैसे भी खरीदना था लेकिन मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं थी । मुझे कुछ भी समझ नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूँ ? इसी चिंता में मैं डूबी बैठी थी । अंत में मेरी

परेशानी पर तरस खाकर हॉस्टल की वाघमारे बाई मुझे प्राचार्य के पास लेकर गयीं । उन्होंने मेरे लिए प्राचार्य जी से सिफारिश करते हुए कहा कि- इस लड़की के पास ड्रेस नहीं है, जिसके कारण इसकी पढाई छूट रही है । इसीलिए यह हॉस्टल में बैठी रोती रहती है । इसके स्कॉलरशिप के पैसे काट कर इसे ड्रेस दिलवा दीजिए । वाघमारे बाई की सिफारिश से मुझे ड्रेस मिल गयी । इसके बाद मैंने नियमित कॉलेज जाना प्रारंभ कर दिया जिसकी कॉलेज में सबने तारीफ़ की ।

पिताजी गाँवमें भूखे पेट काम करते हुएमेरे लिए पाई-पाई पैसे इकट्ठे करते थे । पिताजी को मनी ऑर्डर करना नहीं आता था इसीलिए वे गाँव के मास्टर जी के सहायता से मनी ऑर्डर के माध्यम से मुझे पैसे भेजते थे । पिताजी द्वारा भेजे गए पैसों से मैं पढ़ाई के लिए उपयोगी सामग्री- कॉपी, कलम, किताब, स्याही आदि खरीद लेती थी । इस प्रकार किसी तरीके से कष्टों से पार पाते हुए मैं अपनी पढ़ाई जारी रखे हुए थी ।

पिताजी को मेरे शहर में रहकर कॉलेज में पढ़ाई करने के कारण गाँव के लोग बहुत बुरा-भला कहते थे । वे कहते थे कि - बाप्या ने पढ़ाई के नाम पर अपनी बेटी को उसने नगर भेज दिया है । अब उसे किस चीज की कमी है । बेटी वहाँ पढ़ने के लिए कॉलेज जाती है या कहीं और ही जाती है किसे पता । उनकी इन सब बातों को सुनकर माँ बहुत परेशान होती थी । वे रोते हुए पिताजी को कोसते हुए कहती थीं - अच्छा हुआ भगवान ने एक ही बेटी दी । अगर चार-पाँच बच्चे दिए होते तो यह आदमी उन चारों को बिना आगे-पीछे देखे चार रास्तों पर चलाता ।पिताजी माँ को समझाते हुए कहते थे - 'तुम गाँव वालों की बातों पर ध्यान देकर क्यों परेशान होकर रोती हो । वे सब कुत्ते हैं जो हमारे आगे-पीछे भौंक रहे हैं । अगर किसी ने कुछ कह भी दिया तो उसे वहीं पर थूक कर आगे बढ़ जाना चाहिए । हमारी बेटी पढ़-लिखकर मास्टरनी बनेगी यही सोचकर अपने मन को शांत कर लेना ।

शहर में गोपालों का एक लड़का डी.एड. कॉलेज (सोसाइटी) में था । उसकी नज़र हमेशा मेरे पर ही रहती थी।वह मुझपर ध्यान रखता था कि मैं कॉलेज जाती हूँ या घूमती-फिरती रहती हूँ । जब मै कक्षा में रहती थी, वह मुझे अपने हॉस्टल की खिड़की से घूरा करता था । जब ये लड़का गाँव जाता तो मेरे माँ-पिताजी से मेरी चुगली करते हुए कहता था कि - मैं कल तुम्हारी बेटी के कॉलेज गया था, लेकिन वह कॉलेज में थी ही नहीं । यह कहकर वह निकल जाता था ।मेरी अर्धवार्षिक परीक्षाएं समाप्त हो चुकीं थीं । दिवाली की छुट्टियों में मैं घर आ गयी थी । घर पर मैं माँ के साथ काम पर जाती थी । अबतक मैं लगभग पाँच महीने शहर में रहकर आयी थी इसीलिए गाँव में लोग मुझे इर्ष्या और द्वेष की निगाहों से देखते थे । मुझे देखकर वे आपस में खुसुर-पुसुर करते हुए तंज मारते हुए कहते थे - आ गई छोरी शहर घूमकर ।

राक्षी गाँव में दादा बंजारा नाम के एक वृद्ध गोपाल थे । वे अपनी बीमारी के बावजूद कभी शेवगाँव, कभी औरंगाबाद और कभी हमारे गाँव पाथर्डी घूमते-फिरते आते रहते थे । जब कभी वे हमारे गाँव आते तो वे मेरे पिताजी के पास आते और इधर-उधर की बातें करते हुए उनसे कहते कि- बाप्या जीजू अपनी लड़की की जिंदगी क्यों ख़राब कर रहे हो ? तुम्हारा दिमाग ख़राब होगया क्या ? जो अपनी लड़की का रिश्ता तुमने शिंदोल्या (ताड़ी) के बीज की रोटी खाने वाले औरंगाबादी परिवार में किया है ।

इस पर पिताजी उनसे कहते थे कि- जीजा जी वे लोग शिंदोल्या खाते हैं तो इसमें बुरा क्या है । कुछ दिनों बाद मेरे बेटी-दामाद नौकरी वाले हो जाएंगे, ऐशो-आराम की जिंदगी जियेंगे । उनका सुख-चैन तुम जैसे जलनखोर लोगों से देखा नहीं जाता है इसीलिए तुम लोग उनकी बुराई करते रहते हो । आईंदा मेरे सामने कभी मेरी बेटी के ससुराल की बुराई मत करना । पिताजी के ऐसा कहते ही वह बुढ़ा आदमी वहाँ से चला गया । पिताजी के ऐसे रुख के कारण बहुत सारे लोग उनके दुश्मन हो गए थे ।

दिवाली की छुट्टियाँ अब समाप्त हो चुकी थीं और कॉलेज जाने का समय आ गया । मेरा घर में मन नहीं लग रहा थाकॉलेज का अच्छा वातावरण मुझे अपनी ओर आकर्षित कर रहा था ।कॉलेज में मेरे कुछ दोस्त भी बन गए थे । उनका नाम सुभद्रा और छबु था । मेरे ये दोनों दोस्त कुछ भी परेशानी होने पर मेरी सहायता करते थे । मैं हॉस्टल से कॉलेज अपने इन्हीं दोनों मित्रों के साथ जाती थी । मुझे इनकी संगति अच्छी लगती थी ।

हॉस्टल की अन्य लड़कियों के परिजन उनसे मिलने के लिए अक्सर हॉस्टल आते रहते थे । वे उनको शहर घुमाने,पार्क टहलाने, सिनेमा दिखाने और खरीदारी कराने के लिए ले जाते । मुझसे पिताजी के अलावा और कोई मिलने नहीं आता था । मैं अकेले हॉस्टल में पड़ी रहती थी । दीपावली की छुट्टियों के बाद हॉस्टल की सभी लडकियाँ अपने घरों से वापस आ रहीं थीं । वे अपने घर से अपने लिए नए-नए कपड़े और खाने के लिए विविध प्रकार खाद्य पदार्थ- लड्डू, गुझिया आदि लायी थीं । मैं अपने घर से कुछ भी खाने का सामान नहीं लायी थी इसीलिए जब वे घर से लाये खाद्य पदार्थ को सुबह नाश्ते के साथ खातीं थीं, उस समय मैं हॉस्टल की छत पर जाकर बैठ जाती थी । उनको खाते देखकर मेरा मन बहुत ललचाता था । मगर कोई उपाय नहीं था । कॉलेज में शारीरिक शिक्षण अभ्यास के लिए दस दिन का कैंप ठंडी के मौसम में जाना था । उसके लिए बीस रुपये शुल्क जमा करना था । मेरे पास कैंप शुल्क जमा करने के लिए एक भी पैसा नहीं था । कैंप जाना अनिवार्य था । नहीं तो नंबर नहीं मिलते ।

पिताजी को भी पैसे के लिए पत्र भेजने काकोई फायदा नहीं था क्योंकि उनके पास भी पैसे नहीं थे । सारे बच्चों ने कैंप जाने की तय्यारी कर ली थी,मगर मेरे तो कैंप शुल्क की ही व्यवस्था नहीं हुई थी । हॉस्टल में रहने वाली मरकडबाई ने एकबार फिर मेरी सहायता की । उनका स्वभाव बहुत अच्छा था । उन्होंने मुझे बीस रुपये दिए और कहा कि- पिताजी के पैसे भेजने के बाद मुझे वापस कर देना ।सारी लडकियाँ कैंप जाने के लिए कपड़े, चादर आदि जरुरी

सामना पैक कर कैंप जाने की तैयारी कर रही थीं उनके पास कैंप ख़र्च के लिए भरपूर पैसे थे । मेरे पास ख़र्च के लिए एक भी पैसा नहीं था । नगर से थोड़ी दूरी पर स्थित पिंपल गाँव में हमारा कैंप गया था । वहाँ रहने के लिए हमने टेंट बनाये थे ।

कैंप में सबकुछ दिनचर्या के अनुसार होता था । सुबह पाँच बजे से आठ बजे तक दौड़ना, घूमना और उसके बाद हमारे अध्यापक हमारे लिए नाश्ता तैयार करते थे । सबको भर पेट नाश्ता खाने को मिलता था । नाश्ते के बाद एक घंटे के समय नहाने और विश्राम के लिए मिलता था । इसके बाद समाज-सेवा के लिए हमें गाँव में ले जाया जाता था । जहाँ हमे गाँव की साफ-सफाई करना, लड़कियों के बाल बनाना, गाँव के गड्ढों में मिट्टी डालकर उसे बराबर करने जैसे छोटे-छोटे कार्य करने होते थे । उसके बादएक बजे दोपहर का भोजन मिलता था । भोजन के बाद शाम के चार बजे तक विश्राम समय था । विश्रांतिकाल के बादरामायण, महाभारत, पुराण आदि के विषयों पर बौद्धिक गोष्ठियाँ होती थी । अंतिम दो दिन कैंप में राजा-रानी जैसे खेलों के प्रतिस्पर्धा रखकर, विजेता छात्रों को पुरस्कार प्रदान किया गया ।

इस प्रकार कैंप में प्रतिदिन होने वाले खेल और अन्य कार्यक्रमों की रिपोर्ट हमारे सर लिखकर रखते थे । कैंप में रात के समय आग जलाकर सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया जाता था तथा दिन भर के कार्यक्रमों की रिपोर्ट सर हमें पढ़कर सुनाते थे । इस प्रकार कैंप के हमारे दस दिन व्यतीत हुए । कैंप के दसवें दिन हमें भरपेट जलेबी और नमकीन खाने को मिला । उसके बाद हम कॉलेज लौट आये । मस्ती और सुख के ये दस दिन कब बीत गए पता नहीं चला । मेरे जीवन में पहली बार इतना अच्छा खाना, पीना, रहना कैंप में ही नसीब हुआ था ।

कॉलेज में कैंप के तुरंत बाद गैदरिंग थी । जिसके के लिए कक्षा के सभी विद्यार्थियों को दस-दस रूपये शुल्क जमा करना था । कॉलेज में मुझे अच्छी तरह समझ में आ गया था कि यहाँ बिना पैसों के कुछ नहीं होने वाला । उधर घर पर मेरे होने वाले पति के बड़े भाई बंडू भाऊ मेरे पिताजी पर हमारी शादी जल्दी करवाने का दबाव बना रहे थे ।

कॉलेज में होने वाली गैदरिंग से मैं बिलकुल अनभिज्ञ थी । यह गैदरिंग का मेरा पहला अनुभव था ।

थोड़े दिनों बाद कुछ दिनों के लिए कॉलेज में छुट्टी हुई । अभी तक हमारी परीक्षा नहीं हुई थी । छुट्टियों के बाद हमारी परीक्षाएं होने वाली थीं, इसीलिए पढ़ाई की चिंता समाप्त नहीं हुई थी । मेरे पास पढ़ाई करने के लिए कुछ भी साधन- किताबें आदि नही थे । मैं आँख मूंदकर घर आ गई, मेरे घर आते ही वहाँ मेरी शादी की बातें होने लगीं । अब पढ़ाई छोडकर मुझे यह चिंता सताने लगी कि- अभीतक तो मेरी पढ़ाई भी समाप्त नहीं हुई है, शादी के बाद ससुराल वाले मुझे पढ़ाई करने भी देंगे या जैसे हमारे समाज में प्रचलित है- मुझे पढ़ी-लिखी कहकर ताने मारेंगे । कहीं लड़का भी समाज के लोगों की बातों में आकर मुझे परेशान तो नहीं करेगा । ऐसी अनेक बातें मेरे दिमाग में उमड़-घुमड़ रही थीं । यह सब सोचकर मैं बहुत परेशान थी । मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि- मैं शादी करूँ या न करूँ |

प्रकरण ०६

अंततः विवाह तय हो गया

अब पिताजी और ससुराल वाले बिलकुल रुकने को तैयार नहीं थे । वे एक ही बात कहते थे कि- 'एक समझदार इंसान की तरह पहले शादी करलो फिर सारा जीवन पढ़ाई करते रहना।तुम्हें कोई नहीं रोकेगा ।

वर पक्ष की ओर से आठ-दस लोग मेरे घर आये, उन्होंने बुधवार तक शादी सारी की तैयारी पूरी करने को कहा । लेकिन उस समय मेरे पिताजी के पास खुदकी दवाई के लिए भी पैसे नही थे । ऐसी स्थिति में वे शादी की क्या ही तैयारी करते । वे अपनी इकलौती बेटी की शादी बड़ी धूम-धाम से करना चाहते थे, लेकिन वे ऐसा करने में असमर्थ थे । वे पहले ही गरीबी बोझ तले दबे हुए थे । पिताजी की सहायता रामकिशन सांग्ल्या ने दो भैंसे सँभालने तथा कुछ पैसे भी दिए । गाँव के मास्टर जी ने कुछ कपड़े देकर सहायता की ।

शादी की पोटली बांधने के बाद लड़की और लड़के के पिताजी से तथा शादी की पोटली में से बचे हुए कुछ पैसे लेकर गाँव के सारे गोपाल लड़के अपने मान पसंद की मिठाइयां खाने चले गए । और इधर घर पर हम सबने मटन और बाजरे की रोटी बनाकर हमने खाया ।

सब का खाना-पीना होने के बाद खुले आँगन में गद्दियाँ बिछाई गयीं । वहीं बैठकर सारे गोपाल आपस में बातचीत कर रहे थे । बातचीत करते-करते कब सुबह हो गई पता ही नहीं चला । सुबह ही वर पक्ष के सभी लोग वापस औरंगाबाद चले गए । मेरी शादी के लिए कपड़ों का तो इंतजाम हो गया था मगर बारातियों के खाने-पीने का क्या होगा और शादी के अन्य कामो की व्यवस्था कैसे होगी इसकी चिंता पिताजी को सता रही थी । गर्मियों के दिन थे कहीं पर काम

भी नहीं मिल रहा था कि मजदूरी करके पिताजी मेरे शादी के लिए पिताजी मेरे शादी का इंतजाम कर सकें । मैंने और पिताजी ने विचार किया कि क्यों न हम इस समस्या से निजात पाने के लिए लोगों से सहायता मांगें । लोगों के खेतों में धान के फ़सल की मड़ाई चल रही थी । हम लोगों ने लोगों से मदद के तौर पर धान या चावल माँगने की शुरुआत की । मेरे और पिताजी के पैरों में चप्पल नहीं थी । पिताजी अपने पैर में फटे कपड़ों को लपेट कर अपना काम चलाते थे और मैं भी उन्हीं का अनुकरण करतीपिताजी के पीछे-पीछे चलती थी । एक माह तक यही क्रम चला - हम दोनों (पिता-पुत्री) साथ में लोगों के पास जाते, पिताजी मुझे उनके सामने खड़ा कर मदद माँगते हुए कहते - पटेल जी इस बच्ची का ब्याह करना है, मैं अपनी बच्ची के लिए आपसे प्रार्थना करता हूँ कृपया थोड़ी सहायता कर दीजिए । पिताजी की लाख मिन्नतों के बाद जो कुछ भी हमें मिलता उसे लेकर पिताजी किसी और के आगे मदद मांगने के लिए आगे बढ़ जाते ।

सारा दिन मैं पिताजी के साथ मदद माँगने के लिए दर-दर भटकती थी । जब मैं शाम को घर वापस आती थी तो मुझे अपनी पढ़ाई की चिंता होती थी । घर पर पढ़ने के लिए रोशनी का कोई इंतजाम न था । एक ढिबरी थी उसी के मद्धिम उजाले में किसी तरीके से जैसे-तैसे पढ़ाई करती थी ।

पच्चीस तारीख दिन सोमवार को मेरी हल्दी की रस्म होने वाली थी । सुबह से ही पिताजी पाथर्डी के बस-स्टैंड पर लड़के वालों के इंतजार में थे । रात के आठ बज चुके थे लेकिन लड़के वालों का कोई अता-पता नहीं था । पिताजी को बहुत चिंता हो रही थी उन्हें लग रहा था कि शायद अब वर पक्ष की ओर से कोई नहीं आएगा । उन्हें लग रहा था कि शायद किसी ने उन लोगों के कान भर करशादी तोड़वा दिया है । यही सोचते हुए पिताजी घर वापस आकर घुटने पर

सर रखकर चुप-चाप बैठ गए । अब हम कुछ नही कर सकते थे । सारे लोग आ-आ कर पिताजी को सांत्वना दे रहे थे । वे उनसे बात करने की कोशिश करते हुए कह रहे थे कि - बापू ऐसे क्यों निराश होकर लेटे हो । तुम्हारी बेटी को दूसरा वर नहीं मिलेगा क्या । वहीं कुछ लोग यह कहकर पिताजी की चिंता और भी बढ़ा दे रहे थे कि- अब तुम्हारी बेटी की शादी कैसे होगी ? तुम यह सब तैयारियां दोबारा कैसे करोगे ? इसी बीच गाँव से आवाज आई कि- बारात आ गई है । यह सुनते ही सभी ख़ुशी से झूम उठे । पिताजी, मामा और चचेरे भाई सब लोग भागते हुए बारात की अगवानी के लिए चले गए । उन सबका उत्साह देखते ही बनाता था, मानो ईश्वर ने उनकी मन की मुराद पूरी कर दी थी । जिस समय बाराती आये थे, एक दम घनी अँधेरी रात थी , हाथों हाथ नहीं दिख रहे थे । रिमझिम फुहारों के साथ ठंडी हवा बह रही थी ।

अंधेरा ज्यादा होने के कारण बारात के साथ दूल्हा नहीं आया था।इसीलिए हल्दी की रस्म अगले दिन मंगलवार के लिए टाल दी गई । मेरे मामा, मेरी होने वाली सास से पूछने लगे कि- क्या रास्ते में कुछ विवाद हो गया था जो आप लोगों को यहाँ तक पहुँचने में बहुत देर हो गयी, हमसभी लोग सुबह से ही आपके इंतजार में थे । तब सारे बारातियों ने रास्ते के पूरा वृत्तांत बताया की शेवगाँव में हमे एक आदमी मिला था उसने यह कहते हुए पूरी बारात को रोक रखा था कि- उस बापू की बेटी से शादी मत करो । मेरे पास एक बेटी है उससे अपने बेटे का ब्याह करदो तुमको जो चाहिए वह मैं दूंगा । उससे छुटकारा पाने की जद्दोजहद में ही हमें यहाँ पहुँचने विलंब हुआ । उनकी बातों को सुनकर पिताजी और मामा चौंक गए । उस रात बारातियों को खाने में ‘ज्वार की रोटी’ और ‘बेसन का शोरबा’ (महाराष्ट्र में प्रचलित कढ़ी के समान एक व्यंजन) खिलाया गया । बारात में स्त्री-पुरुष सबको मिलाकर कुल पच्चीस बाराती थे ।

बारातियों के रात में ठहराने की जगह नहीं थी । जब हमारे ही रहने का कोई ठिकाना नहीं था तो उनके ठहरने की व्यवस्था पिताजी कहाँ से करते । हमारा डेरा गाँव के बाहर था । हमारे डेरे के बगल में ही मास्टर जी और झिर्पे जी का बाग था, लेकिन जिस बाग में गोपालों का प्रवेश वर्जित था; उसमे भला गोपालों की बारात ठहराने की इजाजत कौन देता । किसी प्रकार जैसे-तैसे बातचीत करते हुए रात बीत गयी ।

अगला मंगलवार का दिन था । सारे लोग दुल्हे का इंतजार कर रहे थे । दोपहर हो गई लेकिन उसका अभी तक कुछ अता-पता नहीं था । कोंडिया मामा और चाचा हल्दी की रस्म निभाने के लिए जरुरी बकरे को लाने के लिए गाँव गए थे । बकरे को लाकर उन्होंने उसे काटा फिर उसकी सब्जी बनायी गयी । मैं यह सब चुप-चाप देख रही थी । हल्दी की रस्म शुरू हुई मेरे शरीर पर हल्दी लगायी गयी । बारातियों का ध्यान हल्दी की रस्म से ज्यादा खाने पर ही था ।

शाम के चार बजे दूल्हा अपने मित्रों के साथ आ गया, दूल्हे को देखते ही मेरे मामा औरपिताजी के जान में जान आ गयी ।

दूल्हे के आते ही उसी समय दोनों परिवारों के बीचमें शादी की तारीख को लेकर बातचीत हुई । अभी तक कुमकुम की रस्म नहीं हुई थी । जिसको लेकर बारात के एक आदमी ने कहा कि- जब तक कुमकुम की रस्म नही हो जाती हम लड़की को हल्दी नहीं लगायेंगे । लड़की को खाली मांग नहीं विदा कराया जाएगा । बातों बातों में माहौल बिगड़ गया । और सभी गोपाल उठ गए । मेरे नाना सूर्यभान, वे अपनी बहू और बेटे को लेकर जाने के लिए तैयार हो गए । ऐसा लग रहा था अब सब टूट जाएगा परंतु उसी पल लड़के के मामा ने उन्हें रोकते हुए कहा कि कुमकुम बांधने की रस्म की बात हुई है और वह होकर रहेगी । ऐसा कहते हुए सभी ने तालियां बजाई

और अगले कार्यक्रम की शुरुआत हुई । वर और वधु पक्ष की ओर से शगुन की थालियाँ, जिसमें रस्मों का सामान और नारियल आदि सामान भरकर था । वर-पक्ष की औरतें हाथों में शगुन की थालियाँ लिए धीमी-धीमी मधुर स्वर में गीत गाते हुए वधु के घर आयीं और रस्मों की शुरुआत हो गई ।वधु को हल्दी लगायी गयी । बारातियों को खाने के लिए मुर्गे की सब्जी और रोटीदी गयी ।

हल्दी के रस्म का भोज दुल्हे की ओर का होता है । इसी परंपरा से दुल्हेवालों ने भोज दिया । उस खाने की बहुत तारीफ हो रही थी । सब ओर अंधेरा छाया हुआ था । जोर से हवाएं और आंधी चल रही थी, न हमारे पास सहारा था न कोई और उससे बचने का रास्ता । खाने (सब्जी) में गिरी धूल और हवा ने उसे और गाढ़ा बना दिया था । रोटी पर लगी मिट्टी ने उसका स्वाद ही बदल दिया था । लोगों को भूख इतनी सता रही थी कि कोई कुछ भी कह नहीं पा रहा था । आखिरकार भूखके मारे सभी ने रोटियाँ खा ही लीं । अगले दिन बुधवार को शादी थी । सुबह ही आंगन में मंडप चाहिए था । इसलिए चचेरा भाई, मामा ने लकड़ियाँ और उस पर आम के पत्ते बाँधकर मंडप तैयार किया ।

बुधवार को पाथर्डी का बाजार होता है । बारात की गोपालिनियाँ बाजार देखने के लिए गई, उनके साथ खेदार्य की एक गोपालिन भी थी और उन्हीं में मेरी ननद भी थी । उनके सामने खेर्डा गाँव की गोपालिन ने मुझे भला-बुरा कहना शुरु किया ।कहने लगी, ‘दीदी आप पागल हो क्या, उस लड़की से रिश्ता क्यों किया ? वह माँ की अकेली संतान है, पढ़ी लिखी है ,वो आपके बेटे की गृहस्थी नहीं संभालेगी । अगर मुझे पता होता तो, मैं पहले ही बोलती, उस से शादी मत करना । उसे बाल बच्चे नहीं हो सकते । उसके माँ की भी वो अकेली है और उसके बाद कुछ नहीं है । देखना इसका भी वैसे ही होगा ?’ ऐसे बहुत कुछ बोलकर गोपालिन चली गई । ये सब

बाजार से आकर गोपालिन और ननद ने मेरी सास से कह दिया । औरतें मन से कोमल और भावुक रहती है, ये झूठ नहीं हैं । अब मेरी सासू माँ के मन में चिंता घर कर गई थी । सासू माँ अब भगवान् से प्रार्थना करने लगीं और मन्नत मांगी कि “शादी के बाद मेरी बहु को पहला बेटा होगा तो मैं एक बकरे की बलि चढ़ाऊगी ।”

शादी की तैयारियाँ हो चुकी थीं । रीति-रिवाज के अनुसार शादी हो गई और मंगलसूत्र को लेकर विवाद खड़ा हुआ । मुझे एक मंगलसूत्र दिया गया था, वह भी किसी गोपालिन के गले से निकल कर पुराना मटमैला । वह देख कर मुझे बहुत बुरा लगा । बाज़ार से सौ रुपए का मंगल सूत्र, नया नहीं लाए, इसी गुस्से में मैंने वह मंगलसूत्र धूल में फेक दिया । वह मिट्टी में घुस गया, बाद में मिला ही नहीं । यह सब देख कर दूल्हा गुस्से से तमतमा गया और रूठ कर बैठ गया । सारी ओर खुसुर-फुसुर शुरू हुई । पढ़ी लिखी लड़की है, क्यूँ इसके पीछे पड़े हैं, ऐसी लडकियाँ इज्जत वाली होती हैं क्या ? लड़का थोडा समझदार दिखता है । उसी बीच लड़का बोल पड़ा, “इतना बड़ा जीता-जागता, मंगलसूत्र खड़ा है तो वैसे मंगलसूत्र की क्या जरूरत ?”

सुबह क्या हुआ, हमें किसी को कुछ पता नहीं था । मंगलसूत्र की गलती समझ आने के बाद दूल्हा और सास दोनों खिसक गए । आठ-नौ बजे तक उन्होंने मेरे गले में सोने का पचासी रुपए का मंगलसूत्र बांध दिया । उसी का बदला समझ कर दूल्हा सुबह से तन के बैठा था कि ‘मैंने मंगलसूत्र दिया।उसी तरह मुझे भी रेडियो चाहिए ।’

इस पर मैंने कहा, ‘मंगलसूत्र की जरूरत जितनी होती है उतनी रेडियो की नहीं’

इस बात को लेकर थोड़ी देर बहस हुई । दूल्हे ने शादी के कपड़े निकाल दिए और मुक्त हो गया । उसे समझाते हुए दो-तीन घंटे निकल गए । बाद में अगला कार्यक्रम संपन्न कर एक

बजे खेड़ेगाँव छोड़कर बैलगाड़ी से पति के साथ मामा और चचेरी बहन सरसा और मैं पाथर्डी आ गए । औरंगाबाद जाने के लिए शेवगाँवरेल पकडे, ऐसे गाड़ी बदलते हुए औरंगाबाद आने में रात के आठ बज गए । वहाँ से ऑटो लेकर गोलवाडी के हनुमान मंदिर के पास आ गए ।

रात में हम बारात का कार्यक्रम निपटाकर पहुंचे । अगले दिन शरीर पर लगी हल्दी धोदी गई और एक तारीख को सुबह के नौ बजे वाली गाड़ी से पाथर्डी वापस आ गए । दो-तीन दिन के वहीं पर रुककर, अगले दिन चार तारीख को परीक्षा देने के लिए मैं शहर की ओर निकली । परीक्षा होने के बाद कॉलेज का दूसरा वर्ष शुरू हुआ ।

शादी के पहले जो लोग मुझ पर फब्तियाँ कसते थे, उन लोगों द्वारा शादी के बाद भी मुझ पर फब्तियाँ कसना जारी रहा । उनके व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं हुआ । यह एक कटु सत्य है कि जिस व्यक्ति ओर समाज एक बार हेय भाव से देखना शुरू करता है, उसकी दृष्टि में परिवर्तन शायद ही कभी होता है ।

अब तक मैं सिर्फ एक बार विदाई में ससुराल गयी थी,उसके बाद कॉलेज शुरू हो जाने के कारण दोबारा वापस नहीं गयी थी । लोगों के मुँह पर तमाचा मारने के लिए अर्थात मेरे बारे में फैलायी जाने वाली उनकी अफवाहों का माकूल जवाब देने के लिए पढ़ाई करना अत्यावश्यक था । मेरी सासू माँ और मेरे पति मुझे पढ़ाई करने के लिए हमेशा प्रोत्साहित करते थे । उनके प्रोत्साहन से मुझे बहुत ऊर्जा प्राप्त होती थी और पढ़ाई करने में एक अलग ही आनन्दानुभूति होती थी । शादी के तीन महीने बीत चुके थे । मुझे मेरे पति के पत्र आते थे लेकिन मैं उनके पत्रों का प्रत्युत्तर भेजने में शर्म के मारे कतराती थी ।

ससुराल में शादी के तीन महीने बाद भी सत्यनारायण की पूजा नहीं हुई थी । जिसको लेकर मेरी सास हमेशा मेरे पीछे पड़ी रहती थी । उन्होंने एक पत्र भिजवाया जिसमें उन्होंने मुझे 'बैल पोला' (महाराष्ट्र में श्रावण मास की अमावस्या तिथि को मनाया जाने वाला एक त्यौहार) के अगले दिन सत्यनारायण की पूजा के लिए आने को कहा । उनके बार-बार टोकने के कारण मैं सत्यनारायण की पूजा के खातिर एक दिन के लिए गोलवाडी (ससुराल) गयी और पूजा के अगले दिन ही वापस आ गयी । मेरी सास को यह मलाल था कि बहू एक दिन भी ससुराल में नहीं रुकी । मेरा भी मन वहाँ रुकने का था । मेरी सास ने अभी तक मेरी हाथ से एक लोटा पानी भी नहीं पिया था, इसको लेकर लोग मेरी सास को ताने मारते थे कि- अभी तक तुझे अपनी बहू के हाथ का एक लोटा पानी भी नसीब नहीं हुआ । मैंने अपनी पढ़ाई के लिए इन लोकापवादों को तिलांजलि दे दी थी । मेरे जैसी ही स्थिति मेरे पति की भी थी । शादी के बाद किसी को लगता नहीं था कि हम पति-पत्नी एक हैं । लेकिन हमारे पास कोई उपाय न था ।

पाथर्डी के एक गोपाल का बेटा औरंगाबाद में किसी कोर्स की पढ़ाई करने के लिए आया था । औरंगाबाद में उसके रहने का कोई ठिकाना नहीं था । मेरे पति ने गोलवाडी में उसके रहने की व्यवस्था की । वह लड़का वहीं रहने लगा । कुछ दिनों बाद उसने मेरे पति से मेरी चुगली करना शुरू किया ।वह उनसे कहता कि तुम्हारी पत्नी कॉलेज नहीं जाती है, हमेशा बाजार घूमती और सिनेमा देखती है । अपनी पत्नी के बारे में ऐसी बातें सुनकर भला कौन पति शांत बैठेगा ? मेरे पति ने मेरे बारे में सुनी सारी बातें मेरे माँ-बाप को बतायीं । इस पर मेरे पिताजी मेरे पति की शंका के निवारणार्थ शहर आये और उन्होंने हॉस्टल की महिला कर्मचारी से मेरे बारे में पूछताछ की । मेरी स्थिति ब्रह्मराक्षस की तरह हो हो गई थी । मैं कभी हॉस्टल से बाहर टहलने नहीं जाती थी । सिनेमा देखने के लिए पैसे ही नहीं थे, फिर भी उस लड़के ने मेरे बारे में अनर्गल बातों से मेरे पति के कान भरकर मेरी हालत सरौते में फँसी सुपारी की तरह कर दी थी । मुझसे

उस लड़के का झूठ बर्दाश्त नहीं हुआ । मैं स्वयं दूध-का-दूध पानी-का-पानी करने के लिए गोलवाडी गयी लेकिन उस लड़के की मुझसे मिलने की हिम्मत नहीं थी, वह मुझसे मुँह छिपाकर भागा-फिरता था । आखिर में एक दिन मेरे देवर ने उसका पीछा करके उसे पकड़ा और उसके पिता के सामने पेश किया । उसके पिता ने उसकी करतूतों को सुनकर उसकी जमकर पिटाई की । उसकी पिटाई से मेरे मन को बहुत सुकून मिला ।

दशहरे का त्यौहार आने वाला था । हमारे यहाँ दशहरे में नव-विवाहित जोड़े के हाथों पूजा करवाना का विधान है, इसीलिए मेरे पति मुझे लेने शहर आये थे । रात को शहर में रुककर अगले दिन सुबह हम दोनों गोलवाडी आ गए । हमारे घर पहुँचने से पहले ही सासू माँ घर का सारा काम समाप्त करके बैठी हुई हमारा इंतज़ार कर रही थीं । हमारे घर पहुँचने पर उन्होंने घास-पानी से हमारी नजर उतारकर हमें घर में प्रवेश कराया । उसके बाद जैसे एक माँ अपनी बेटी को गले लगाती है वैसे ही उन्होंने दुलार से मुझे गले लगाते हुए अपने बेटे से कहा- 'बेटे बहू को कल कर्नपुर ले जाकर देवी माँ का दर्शन करा लाना ।' अगले दिन सासु माँ, दोनों ननद (गया और जया) और हम दोनों (पति-पत्नी) कुल मिलाकर पाँच लोग देवी माँ के दर्शन के लिए पैदल ही गए । वहाँ देवी माँ के दर्शन, पूजा-पाठ और बकरे की बलि चढ़ाकर तथा प्रसाद खाकर शाम को छः बजे तक हम घर वापस आ गये । ससुराल में आये मुझे पाँच दिन हो गए थे । ससुराल वाले हर दिन- अगले दिन जाना, अगले दिन जाना कहकर मुझे वहीं रोके थे । मुझे अपने कॉलेज की चिंता हो रही थी । मेरे वापस जाने के लिए कहने पर मेरी सास मेरे पति से कहतीं- बेटा बहू को कॉलेज जाने दो, वह कॉलेज जाने के लिए छटपटा रही है । उसकी पढ़ाई छूट रही है । उसे उसके कॉलेज छोड़ आ । सासू माँ की बातों को मेरे पति हाँ-हाँ करके टाल देते थे । इस प्रकार किसी तरह एक दिन वे मुझे शहर छोड़ने के लिए आये। मेरा भी पति के सहवास से जाने का मन नहीं था । मगर हम क्या करते, अभी मेरे कॉलेज की पढ़ाई के चार-

पाँच महीने बाकी थे । कहने को तो मैं शहर में थी, मगर मेरा मन घर में ही लगा था । मैं इंतजार कर रही थी कि- कब मेरे कॉलेज के दिन बीतें और मैं अपनी टूटी-फूटी गृहस्थी में वापस जाऊं । कभी-कभी मेरे पति मुझसे मिलने शहर आते थे ।

सारे गोपाल मुझे बदनाम करते थे कि मैंने पढाई करके अच्छा नहीं किया । पढ़ी-लिखी लड़कियाँ भला कहीं गृहस्थी सम्हालती हैं । वे हमेशा मेरे पति से पूछते- 'सुखदेव, क्या तुमने शादी करके लड़की को छोड़ दिया है जो उसे विदा कराके अपने घर नहीं लाते । या लड़की ने ही तुमको छोड़ दिया है ? उनके ये सब ताने सुनने के बाद भी मेरे पति उन लोगों के मुँह नहीं लगते थे । उनके मन में बस एक ही चाह थी कि मेरी पत्नी पढ़-लिख कर अच्छी नौकरी करे और इस समाज के साँप जैसे लोगों का फन कुचलकर रख दे ।

कॉलेज में मेरी परीक्षाएं होने वाली थीं । मैं शहर में ही थी । उधर मेरे ससुराल में मेरी ननद और देवर के विवाह की बात चल रही थी । देवर का विवाह खंडेवाडी की एक लड़की से तय हुआ था । देवर की शादी का सामान लाने के लिए कुछ गोपाल बाज़ार गए थे । सभी लोग शादी की तैयारियों में इतना मशगूल थे कि किसी को मेरा ध्यान ही नहीं आया । शादी में मालेगां से आये कुछ गोपालों ने जब मेरी सास से मेरे बारे में पूछा कि- 'चंदाबाई, तुम्हारी बहू नहीं आई है क्या ?'

सास ने कहा, 'बेटी की परीक्षा होने वाली है, इसलिए नहीं आई है ।

भाऊराव ने कहा, 'बेटी अपनी मर्जी से पढ़ती है,या तुम लोग पढ़ा रहे हो?

सास ने उत्तर दिया- हम लोग पढ़ा रहेहैं।

भाऊ राव ने पूछा-उसकी पढ़ाई अभी तक पूरी नहीं हुई क्या ?

सास ने कहा-हाँ, बस इस बार अंतिम परीक्षा है ।

भाऊराव मेरी सास कहने लगा कि- शादी के बाद लड़की को ऐसे अकेली छोड़ना ठीक नहीं है । उसके ऐसा कहते ही मेरी सास एकदम गुस्से से तमतमा गयीं, उन्होंने उससे कहा खबरदार आईंदा तुमने जो मेरी बहू का नाम अपनी जुबाँ से लिया तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा मैं तुम्हारे दाँत तोड़ दूँगी । मुझसे कहा तो कहा गलती से भी कभी मेरे बेटे के सामने मेरी बहू के बारे में कुछ भी अनर्गल बातें मत बोलना नहीं तो तुम्हारा हाल बहुत बुरा होगा । तुम बाजार शादी का सामान खरीदने आये हो या मेरी बहू की इज्जत उतारने आये हो । उसकी पढ़ाई से हमे कोई ऐतराज नहीं है, तो भला तुम कौन होते हो उसकी पढ़ाई पर ऐतराज करने वाले ।

वह गोपाल मेरी सास की फटकार से चुप हो गया । उस गोपाल की शादी लायक बेटियाँ थीं, जिनका रिश्ता वह मेरे पति के साथ करना चाहता था, मगर वह अपने मकसद में कामयाब नहीं हो पाया था । इसी खुन्नस के कारण वह मेरी सास से मेरी चुगली कर रहा था ।

मेरी परीक्षा समाप्त हो गयी थी और मैं अपने देवर की शादी में शामिल होने के लिए शहर से गोलवाडी आ गयी थी । मेरी सास भगवान से हमेशा मन्नत मांगती थी कि- ‘हे भगवान, मेरी बहू की गोद जल्दी भर दे ।’ इस बार जब मैं शहर से अपने ससुराल आयी थी तो मैं पाँच महीने की गर्भवती थी, मेरी सास यह जानकर बहुत ज्यादा खुश थी उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना न था ।

देवर और ननद की शादी हो चुकी थी । अब मुझे ससुराल आए हुए दो महीने हो चुके थे । मैंने शादी के बाद पहली बार दो माह ससुराल में बिताये थे । उसके बाद मुझे तुरंत डिलीवरी के

लिए खेडार्या आना पड़ा । बेटा हुआ । मैंने पत्र भेजा । 'पोला' का त्यौहार था । यहाँ ससुराल में घर पर सास, देवर, पति इनके झगड़े चल रहे थे ।यह सब पता चलने के बाद पिताजी ससुराल गए । वहाँ सब अलग-अलग रह रहे थे । अब सास, छोटी ननद जया और पति तीनों लोग एक जगह और देवर, देवरानी अलग हो चुके थे । यह सुनकर मुझे बहुत बुरा लगा । मैं अंदर ही अंदर रोती थी । बेटा होने के बाद पाँच दिन की रस्म ससुराल वालो के हाथों से करनीहोती है; लेकिन बेटे की ख़ुशी घर के झगड़ों की धूल में कहीं गुम हो गयी थी । मुझे मिलने डेढ़ महीने तक ससुराल से कोई नहीं आया । न सास, नही पति । मैंसोचने लगी, 'मुझे बेटा हुआ है,यह मेरी ससुराल वालों को पसंद नही है क्या ? जब ऐसा महसूस होता तब मैं गुमसुम हो जाती । डेढ़ महीने के बाद पति आए और उन्होंने मुझे पूरी बात बतायी कि परिवार में क्या-क्या परेशानियाँ चल रहीं थीं ।उनकी बातें सुनकर ससुराल पक्ष को लेकर जो मेरी नाराजगी थी वह दूर हो गयी । घर में भैंस नहीं थी । पति-पत्नी दोनों ही बेरोजगार थे । इन सब परेशानियों के बीच 'यह बच्चा' कई बार तो यह लगता कि यह बच्चा अगर इस समय न होता तो ठीक होता । तीन-तीन शादियाँ निपटाने के कारण घर की आर्थिक स्थिति बहुत ख़राब हो चुकी थी । घर में खाने के लाले पड़ रहे थे ।

मेरे पति ने किसी प्रकार इधर-उधर से व्यवस्था करके बटाई पर एक भैंस पाली जिसके दूध को बेचकर किसी तरह परिवार का गुजारा हो रहा था । मेरा बेटा जब ढाई महीने का हो गया तब मेरी सास मुझे लेने मेरे घर आई । ससुराल में लोग मेरे पति को चिढ़ाते हुए कहते थे- 'सुखदेव को बेटा हुआ है लेकिन वह अपने बेटे का मुँह हमें नहीं दिखाना चाहता है । उसे समाज का कोई लिहाज नहीं है ।' मैंअपनी सास के साथ गोलवाडी आ गई थी, मुझे आये अभी आठ दिन ही हुए थे कि मेरा बेटा बहुत ज्यादा बीमार हो गया । मुझे तो लगता था की उसका बचना अब मुश्किल है । गाँव में मंगनबाबा नाम के एक ओझा थे जो झाड़-फूंक का काम करते थे,

उन्होंने मेरे बेटे को अंगारा और कोई ताबीज़ देकर ठीक किया । मेरे बेटे की तबियत ठीक होते ही मैं वापस खेडार्या आ गई और बच्चे के दस महीने का होने तक ससुराल नहीं गई ।

हमारा रिश्ता तय हुआ, शादी हुई, बच्चे हुए लेकिन हमारे हालत नहीं सुधरे, वे ज्यों-के-त्यों थे । पति बेरोजगार थे।हमारे सिर पर हमेशा संकटों के बादल छाये रहते । मुश्किलों की आंधी के थपेड़ों से हम पति-पत्नी जूझ रहे थे ।

प्रकरण -०७

निस्सार संसार

मैं अपने मायके में ही थी, बेटा दस माह का हो चुका था मेरे पति मुझे ससुराल ले जाने के लिए आये । इधर वे नौकरी के लिए भी प्रयासरत थे । मेरी सास हमेशा मेरे पति से कहती थी कि- 'बेटा बहू को अपने घर ले आओ, उसे मायके में रखकर लड़की के घर वालों को परेशान क्यों करना । जैसे हम रूखी-सूखी खाते हैं बहू भी खाकर गुजारा कर लेगी । ऐसे ही बहू को मायके में रखोगे तो लोग ताने मारेंगे ।' इसीलिए मेरे पति मुझे मायके से ससुराल विदा कराके ले गए । अब सही मायने में मैं ससुराल रहने के लिए आई थी, इससे पहले तो बस सिर्फ कुछ दिनों के लिए ही आना-जाना होता था । सही मायनों में अब मेरा गृहस्थी की मुश्किलों से सामना हुआ था ।

रोज सुबह मेरे पति गाँव से एक-दो लीटर दूध लेकर औरंगाबाद बेचने के लिए जाते थे । वहीं पर शाम तक वे कॉलेज में अपनी पढ़ाई करते और शाम को घर वापस आते समय दूध बेचने से जो पैसे उन्हें प्राप्त होते थे, उससे वे आटा, तेल, चीनी, चाय पत्ती, आदि गृहस्थी का सामान ले आते थे जिससे हमारे दो जून के खाने का इंतजाम होता था ।

ऐसी ही एक घटना है । एक बड़ी भैंस थी, वह गर्भवती थी । उसके प्रसव के लिए दो महीने बाकी थे । पर तभी वह बीमार पड़ गई । इस स्थिति में वह हमेशा खूँटे के गोल चक्कर लगाती थी । उसने खान-पीना एकदम छोड़ रखा था । उसके गले में सूजन आई हुई थी । उसे ठीक करने के लिए हमने कुछ घरेलू उपचार भी किया लेकिन कोई असर नहीं हुआ । डॉक्टर से भी उस भैंस का इलाज करवाया गया लेकिन वह ठीक नहीं हुई । उसे हम रोटियाँ बनाकर खिलाते

थे लेकिन फिर भी उसकी हालात में कोई सुधार नहीं हो रहा था । अंत में मेरे पति और सास उसे इलाज के लिए खडकेश्वर लेकर गए और आठ दिन तक उसका इलाज करवाया लेकिन कुछ भी फायदा नहीं हुआ और वहीं पर उसकी मृत्यु हो गयी और उसी के साथ उसके दूध को बेचकर हमारे परिवार की आर्थिक स्थिति सुधर ने की जो उम्मीदें थी वह भी टूट गयीं ।

घर की परिस्थिति बहुत ख़राब थी जिसके चलते घर का माहौल चिड़चिड़ा हो गया था । परिवार का कोई आर्थिक आधार नहीं था । मेरी सास दूसरों की भैंसों का गोबर इकट्ठा करके उपले बनाती थीं जिसे बेचकर घर में दो पैसे आते थे । मैं दूसरों के यहाँ काम के लिए जा नहीं सकती थी इसीलिए मैं घर के सामने रास्ते पर से गुजरने वाली भैंसों के गोबर इकट्ठा करके उपले बनाती थी जिसे घर का खाना पकाने में प्रयोग किया जाता था ।

हमारी परिस्थिति अब 'करो तो खाओ' जैसी हो गई थी । यह सब कुछ देख कर पति की भी तबियत ख़राब हो गई, वे सर्दी-बुखार के चपेट में आ गए । इसलिए वह घर में पड़े रहते । इलाज के लिए घर में पैसे नहीं थे । रात-रात हमें नींद नहीं आती थी । मैं उपले जला कर उनको सेंकती रहती थी । घर में ओढ़ने के लिए चादर भी नहीं थी । बुखार के कारण वे इतने दुबले हो गए थे कि ऐसा लगता था, शरीर का चमड़ा उनके हड्डियों से चिपक गया हो । मेरी घबराहट दिन-ब-दिन बढ़ रही थी । मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूँ ? पति का इलाज पंढरपुर के डॉक्टर से करवाया गया । डॉक्टर के दो इंजेक्शन लगाने के बाद उनकी हालत में कुछ सुधार हुआ । लेकिन अभी भी हमारी जीवन की समस्याओं का अंत नहीं हुआ था । मेरे पति की तबियत अभी पूरी तरीके से ठीक नहीं हुई थी कभी-कभी उनकी तबियत अचानक से बिगड़ जाती थी ।

घर में चारों तरफ परेशानियों का अंबार लगा हुआ था । घर की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी की कोई व्यवसाय शुरू किया जा सके । घर का एक मात्र सहारा पति ही थे जो अब स्वयं बीमार थे । सासू माँ हमेशा उनके पीछे ही पड़ी रहती थी । इसको लेकर के उनके बीच कभी-कभी तू-तू, मैं-मैं भी होती थी । यह सब देखकर मुझे बहुत रोना आता था लेकिन मैं रो भी नहीं सकती थी । मैं एक दम पत्थर की भांति शांत रहती थी । जब कभी बहुत ज्यादा परेशान होती तो कपड़ा धोने के बहाने नदी पर चली जाती थी । वहाँ जब तक कपड़े धोती थी आँखों से आँसू बहते रहते थे । मन ही मन ईश्वर से एक ही प्रार्थना करती थी कि- 'हे भगवान, हमारी नौकरी लगवाकर हमारे पूरे परिवार को विपत्तियों से पार लगाओ ।'

घर में ठीक से मटका-बर्तन भी नहीं थे, न ही कपड़े थे ।बेटा अब दो वर्ष का हो चुका था । उसके पहनने को कपड़े तक नहीं थे, बिस्कुट और दूध की तो बात दूर रही ! भूख लगने पर उसे मैं रोटी का टुकड़ा देती थी । उस दुबले-पतले, सुकोमल, मासूम बच्चे को देखकर मेरा दुःख असहनीय हो जाता था । उस दर्द को मैं अपने अंदर घूँटकर रह जाती थी । कभी-कभी जब दर्द बहुत ज्यादा हो जाता तो रोकर अपने मन को हल्का कर लेती थी । सिवा रोने के मैं कर भी क्या सकती थी, मैं बिलकुल असहाय थी ।

हम दोनों पति-पत्नी शिक्षित थे, इसीलिए हमारी और बिरादरी के अन्य लोगों की सोच में फर्क था । मैं कभी-कभी आँगन में जब विचारमग्न अवस्था में बैठती थी, तो मुझे देखकर लोग आपस में खुसुर-फुसुर करते हुए कहते थे कि- वह पढी-लिखी है, उसे अनपढ़ लोग पसंद नहीं हैं वह भला हमारी ओर क्यों देखेगी ? मैं उनकी इस बातों को सुनकर भी अनसुना कर देती थी । पढी लिखी होने के बावजूद उनके सामने गवांर बनकर रहना पड़ता था । उनके मूर्खतापूर्ण रहन-सहन के आगे मेरी सारी शिक्षा व्यर्थ साबित होती थी ।

मेरे पति नौकरी के लिए जगह-जगह अर्जियाँ भेजते थे । उनको नौकरी के लिए दर-दर भटकते हुए देखकर बिरादरी के लोग और सारे रिश्तेदार उनकी खिल्ली उड़ाते हुए कहते थे कि- 'इसे सरकारी नौकरी तो क्या म्युनिसीपॉलिटी की भी नौकरी नहीं मिलेगी ।' अपने पति के बारे में लोगों को ये सब कहते हुए सुनकर मैं तिलमिला कर रह जाती थी । इस डर से लोगों की शिकायत पति से भी नहीं करती थी कि- उनको यह सब बताने से कोई फायदा नहीं होगा उलटे घर में ही तनाव बढ़ेगा । इसीलिए मैं चुप रहती थी ।

एक बार मेरे बेटे को छोटी माता की बीमारी हुई थी जिसके कारण उसे बहुत बुखार रहता था । मुझे लगता था बेटे को दवाखाने लेकर जाऊं और घर वाले कहते थे किये बीमारी अस्पताल जाने से ठीक नहीं होगी । वे मुझे कहते कि मैंने ज्यादा पढ़ लिया है इसीलिए मेरा दिमाग ख़राब हो गया है । वे मुझे कहते कि- 'क्यों तू बच्चे को देवी माँ की बलि चढ़ाना चाहती है ? क्यों घर बर्बाद करने पर तुली हुई है, घर में फूटी कौड़ी नहीं है और तू कहती है कि बच्चे को इलाज के लिए दवाख़ाना लेकर जायें ।' ऐसा मेरे और मेरे बेटे का दुर्भाग्य था ।

दशहरे का त्यौहार आया । दशहरे के सात दिन पहले से ही मेरे बेटे को बहुत तेज बुखार था । बुखार के कारण उसका बदन भट्ठी के समान तप रहा था । मेरे घर को छोड़कर गाँव के बाकी सारे घरों में त्यौहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जा रहा था । उनके घरों में बकरे की बलि देकर धूम-धाम से त्यौहार पूरे रीति-रिवाजों के अनुसार आनंदमय वातावरण में मनाया जा रहा था । इधर मेरा बेटा बुखार से जल रहा था । उसके दुःख-दर्द की किसी को परवाह नहीं थी । गाँव में किसी बच्चे को खसरा या छोटी माता जैसी बीमारी होने पर उसे और उसकी माँ को नौ दिन तक नहाना, बाल बाँधना, चोटी बनाना यह सब करना वर्जित था । मुझे भी यह सब करने

से मना किया गया था इसीलिए त्यौहार के दिन भी मैं पागलों के जैसे झोपड़ी में बच्चे को लेकर बैठने को मजबूर थी । मेरी आँखों से आँसू गंगा-जमुना की तरह बह रहे थे ।

नौ दिनों के बाद भगवान की कृपा से मेरा बेटा ठीक हो गया । ठीक होने के बाद मैं उसे देवी माँ के दर्शन कराने के लिए ले गयी । हमारी विकट परिस्थिति में जैसे मनुष्य हमारा साथ नहीं दे रहेथे, वैसे ही किस्मत भी हमारा साथ नहीं दे रही थी । हम लोगों का कोई ऐसा शुभचिन्तक नही था जो यह चाहता हो कि हम दोनों की नौकरी लगे और हम दोनों सुखमय जीवन जियें । हमारे प्रति लोगों के शुभेच्छु न होने का एक कारण यह भी था कि मेरे पति के बहुत सारे रिश्ते आये थे लेकिन उन्होंने उन सब को ठुकराकर मेरे साथ रिश्ता जोड़ा था इसीलिए सारे लोग हमारे प्रति ईर्ष्यालु थे ।

मेरे जीवन का एक ऐसा प्रसंग जो रिश्तों के तार-तार होने के घटना से जुड़ा हुआ है । एक दिन मैं घर में काम कर रही थी, मेरा बेटा मुझे बहुत परेशान कर रहा था, मैं उसकी हरकतों से खीझ गयी थी । फिर जब मैं और मेरी सास खाना खा रहे थे तभी उसने शरारत की तो मैंने गुस्से में आकर उसे पीट दिया । हमारी ननद भी हमारे साथ ही बैठी थी । उन्होंने मेरे द्वारा बच्चे को मारने का गलत तात्पर्य निकाला और इस बात की चुगली बढ़ा-चढ़ाकर उन्होंने मेरे पति से की । उन्होंने उनसे कहा कि- वे लोग (सास और ननद) खा रहे थे इसीलिए मैंने बच्चे को मारा । जबकि ऐसा कुछ भी नहीं था । शाम को जैसे ही मेरे पति घर आये तुरंत सास और ननद ने आँगन में ही मेरे खिलाफ उनके कान भर दिए ।

पति ने घर में घुसते ही मुझे गालियाँ देनी शुरू कर दीं । मैं मसाला पीस रही थी, उनको अचानक ऐसे गालियाँ देते हुए सुनकर मैं हतप्रभ थी । मैं चुपचाप घर के अंदर चली गयी । वे कह रहे थे कि- अगर तुम्हें हमारी गरीबी में गुजर करना अच्छा नहीं लगता तो मुझसे अपना

रिश्ता ख़तम कर लो । अगर तुम ऐसा समझती हो तो मेरा तुम्हारा रिश्ता ख़तम ही समझो, मैं तुम्हें अपने साथ नहीं रख सकता । निकल जाओ मेरे घर से । वे इतनी जोर से चिल्लाकर मुझे डांट रहे थे कि उनकी आवाज से सारा गाँव एकत्रित हो गया । मैंने अपने पति को जवाब देते हुए कहा- यहाँ से निकल जाने के लिए मैंने तुमसे शादी नहीं की है, मैं कहीं नहीं जाऊँगी, यहीं रहूँगी । हमारे झगड़े को सुनकर सारा खानदान एकत्रित हुआ था । मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा था, मैं अपने बच्चे को गोद में लिए पागल हुए जा रही थी । मुझे पता था कि, इतने इकट्ठे हुए लोगों में मुझे समझ ने वाला कोई नहीं था , सब लोग मेरे पति की ही तरफ दरी करेंगे मैं जो कुछ भी कहूँगी यह लोग उसे झूठ ही मानेंगे इसीलिए मैंने अपना मुँह बंद रखना ही उचित समझा । मैं यह सारा दुःख, अपमान घूँटकर पी गयी थीं । इसकी चर्चा नाही मैंने अपने पिताजी से कभी की और न ही इसको लेकर ससुराल वालों को कभी अपशब्द कहा । जो कुछ भी हुआ उसे अपने किस्मत मानकर मैंने चुपचाप स्वीकार कर लिया था ।

हम गरीब है, अगर तुझे पसंद नहीं तो, तेरा और मेरा रिश्ता तोड़ दे । ऐसा है तो तेरा मेरा नाता टूट गया समझ । मैं तुझे नहीं रख सकता हूँ । निकल, मेरे घर से बाहर निकल, यह सब सुनकर पूरा गाँव एकत्रित हो गया । उनका उत्तर देते हुए मैंने कहा, 'जाने के लिए मैंने शादी नहीं की है मैं नहीं जाऊंगी ।' रिमझिम बारिश हो रही थी । सारा खानदान एकत्रित हुआ था । मेरी जान में जान नहीं थी, मैं अपने बच्चे के लिए पागल हुए जा रही थी । इकठ्ठा हुए इतने लोगों के सामने मेरी नहीं चलने वाली थी । उनके लोग उनका कहना सब सच और मेरा सब झूठ यह सोच कर चुप रही । यह सब दुख मै निगल कर बैठती थी ।माँ-बाप ने कभी पत्र भेजा नहीं और न कभी मुंह से बुरी बात कही थी । जो भी हुआ अच्छे के लिए हुआ, ऐसे सोच कर मैं शांत बैठती थी । सब कुछ सहन कर लेती ।

ससुराल और पिता के घर दोनों जगह हालत खराब थी, कोई पाँच पैसे की मदद करने में सक्षम नहीं थे । पति दो लीटर दूध लेकर औरंगाबाद ले जाते थे, वे रात में नौ बजे तक वहीं पर रहते थे । मैं अपने घर के कामों में और बेटे के देखभाल में दिन गुजारती थी । अब मायके जाना संभव नहीं था । नौकरी की तलाश में वे रात-दिन भटकते थे । इन विकट परिस्थितियों ने हमारे दाम्पत्य जीवन में भी खटास ला दी थी । अब अक्सर हम दोनों के बीच किच-किच होती रहती थी ।

मुझे घर से बेदखल करने को बिरादरी के बहुत सारे लोग आतुर थे । वे पहले तो चाहते थे कि मेरी शादी ही इस घर में न हो अब जब किसी तरीके से मेरी शादी इस घर में हो गयी तो वे चाहते थे कि हमारा दाम्पत्य जीवन किसी भी प्रकार से सुखमय व्यतीत न हो । अपनी इसी मंशा की पूर्ति हेतु वे मेरी सास के कान भरते रहते थे । जिसको लेकर सास और मेरे पति के बीच अक्सर झगड़ा होता रहता था । रोज-रोज घर में होने वाले झगड़ों से बचने के लिए मेरे पति घर पर रुकते ही नहीं थे । वे देर शाम को औरंगाबाद से घर वापस आते और दो-चार निवाले खाकर गाँव के मित्रों के घर चले जाते । जब हम लोग सो जाते तब वे वापस घर आते थे । उनका रोज का ही यह नियम बन गया था । एक बार भगवान की पूजा टल सकती थी लेकिन उनका यह नियम अटल था ।

ऐसे ही एक बार दीवाली का त्यौहार था।गुरुवार का दिन था और घर में लक्ष्मीपूजा होनी थी मगर घर में झगड़ा चालू था । त्यौहार के दिन घर में झगड़ा होना अच्छा नहीं होता मगर हमारे घर हो रहा था । झगड़ा शुरू होते ही मेरे मन में घबराहट होने लगी । पति गुस्से में कुछ कपड़े और बच्चे को लेकर यह कहते हुए घर से बाहर निकल गए कि- ‘मै घर छोड़ के जा रहा हूँ, बाहर मेहनत-मजदूरी करके पेट भर लूंगा मगर दोबारा गोलवाडी वापस मुँह नहीं दिखाउंगा ।’ पर

मैं नहीं चाहती थी कि वे गुस्से में ऐसे कदम उठायें । उन्होंने मुझसे कहा कि- 'चलो यहाँ से, रात किसी स्टेशन पर बिता लेंगे और सुबह कहीं चले जायेंगे ।' मैंने जल्दी-जल्दी में देवा भैया के पास घर में होने वाले सारे घटनाक्रम की सूचना पंहुचाई । देवा भैया घर आये और उन्होंने मेरे पति को समझाकर उनके गुस्से को शांत किया । इस प्रकार ऐसे दुःख भरे माहौल में हमारा दीपावली का त्यौहार बीत गया ।

छोटी मौसी ने अपने बेटे की शादी की भनक तक हमें नहीं लगने दी, क्योंकि हम लोग गरीब थे और शादी में मुँह दिखाई कुछ भी देने का सामर्थ्य हममें नही था शायद इसीलिए उन्होंने ने हमें सगाई और न ही शादी की खबर लगने दी । हमारी गरीबी के कारण हमारी बिरादरी के लोगों ने हमें न्यौता देना छोड़ दिया था, इसीलिए हम लोगों ने भी न्यौता देना और स्वीकार करना दोनों बंद कर दिया था । मेरा कोई सगा भाई नहीं था इसीलिए मायके में भी मुझे पूछने वाला कोई दूसरा नहीं था । इसी प्रकार समाज के लोगों के ताने सहते हुए किसी तरह हमारी जिन्दगी गुजर रही थी । मुझे जिन्दगी में एक घर के सिवा कोई और चाह नहीं थी । मै जब भी घर से बाहर निकलती तो नहा-धोकर, बाल बनाकर, साफ़ सुथरा व्यवथित होकर निकलती थी । जब कभी पति के साथ मैं बाहर निकलती तो समाज के लोग आपस में खुसुर-पुसुर करना शुरू कर देते थे । वे कहते थे कि- 'सुखदेव ने बहुत पढ़ाई की लेकिन उसको इतना भी नहीं पता की पत्नी को कैसे रखा जाता है । उसे नहीं पता की साबुन से नहाने पर शरीर स्वच्छ होता है, विचार नहीं । मदारी की तरह सजा-धजा कर पत्नी को घुमाता है । सच में चंदाबाई ने घर में मदारी पाल रखा है ।' समाज के लोगों के इन्हीं तानों की वजह से मुझे डर-डर कर जीना पड़ता था ।

कभी-कभी भगवान भी परीक्षा लेते हैं । मेरी भी परीक्षा की ही घड़ियाँ थीं । मेरा बेटा अब थोड़ा बड़ा हो गया था और खुद से खाने-पीने लगा था । इधर मैं पुनः गर्भवती थी । मुझे इस बात की बहुत शर्म आती थी कि समाज के लोग क्या कहेंगे यह देखकर कि - एक बच्चे को खाना नहीं खिला पाती है और न ही घर में कोई नौकरी है जिससे परिवार को कुछ आर्थिक सहायता मिल सके मगर ये बच्चे पर बच्चे पैदा किये जा रही है । कुछ लोग मेरी सास को मेरे खिलाफ भड़काते हुए उनसे कहते कि- 'बहू घर में बैठी रहती है और तुम सारा दिन गधे के जैसे काम करती हो । उसे भी काम पर ले जाया करो और उससे घास का बोझा सर पर लाने को कहो ।' इन्हीं सब बातों को लेकर घर में तनाव बना रहता था । कभी-कभी मैं सोचती कि काश! मैं नौकरी लगने के बाद ही शादी करती तो अच्छा होता । लेकिन जो बात बीत गई उसको सोचकर अब पछताने का कोई मतलब नहीं ।

मैं अगर घर पर बच्चे को लेकर थोड़ी देर बैठ जाती थी, तो सारा घर मुझ पर टूट पड़ता था । छोटी ननद शादी के लायक हो चुकी थी । उसकी शादी कैसे करनी है इस बात को लेकर मैं हमेशा फिक्रमंद रहती थी । हमारी परेशानियां कम होने का नाम नहीं ले रहीं थीं ।

कभी-कभी मन में विचार आता कि गाँव,घर सब छोड़कर कहीं चली जाऊं और वहाँ मेहनत मजदूरी करके जो मिले उसी से अपना गुजारा करूँ । मायके और ससुराल दोनों जगह से दूर चली जाऊं । फिर बाद में मन में विचार आता कि समाज मुझे ही बुरा कहेगा । अगर हम घर छोड़ कर चले गए तो फिर लोग पता नहीं क्या-क्या सोचेंगे, हमारा सम्मान से जीना मुश्किल हो जाएगा ।

एक दिन की बात है घर पर मेरे अलावा कोई नहीं था, न मेरे पति थे और न ही मेरी सास थी । सुबह उठकर घर में भैंस दुहने वाला कोई नहीं था । किसी तरह लोगों से विनती करके दूध

दुहवाया पर उसे औरंगाबाद बेंचने कौन ले जाएगा ये समस्या आ खड़ी हुई । बिरादरी के सब लोग अपने-अपने घर का दूध साइकिल पर रखकर बेंचने के लिए ले जा रहे थे मगर हमारी सहायता करने वाला कोई नहीं था । अंत में मैंने खुद औरंगाबाद दूध बेचने जाने का निर्णय किया । घर पर छोटी ननद थी बच्चे को उसके हवाले छोड़कर सिर पर दूध की डोलची रखकर मैं औरंगाबाद जाने लगी मगर तभी मेरे बेटे ने मुझे रोते हुए पकड़ लिया और कहने लगा- माँ मुझे चाय बनाकर दो तभी मैं तुम्हे जाने दूंगा नहीं तो नहीं जाने दूंगा । घर पर चीनी नहीं थी । उस मासूम बच्चे की बातों से मेरा दिल भर आया और मैं बैठ गयी । मैंने उसे समझाकर शांत किया और आँखों में आँसू लिए सिर पर दूध की डोलची रखकर बेचने के लिए निकल आई । मुझे पता था कि इस दूध की बिक्री से मिलने वाले पैसे से ही घर का आटा-तेल आना है । यही सब सोचकर घर पर चाय के लिए विलखते हुए बच्चे को छोड़कर चली आई थी । मै अभी गाँव से बाहर ही निकली थी कि रास्ते में ही औरंगाबाद से घर वापस आ रहे मेरे पति से मेरी भेंट हो गई । उन्होंने मुझसे दूध ले लिया और मैं वापस घर आ गई ।

हमेशा सारे गोपाल वर्ष में एक बार सकलादी पीर जाते हैं । इस बार भी बिरादरी के सभी गोपालों ने जाने की योजना बनाई । सभी गोपालों के पास दो-दो,तीन-तीन दुधारू भैंसें थीं, जिनके दूध को बेचकर उनके पास खूब पैसा था । इधर हमारी भैंस तो मर चुकी थी । घर की आर्थिक स्थिति भी खस्ताहाल थी, हम कंगाल थे । मेरे पति की इच्छा थी कि हम भी यात्रा पर जाएँ मगर धूमधाम के बिना, सादे तरीके से यात्रा पर जाने का हमारा मन नहीं था । मेरी सास तो एक ही रट लगाए हुए थी कि- ‘बेटा सारे गोपाल यात्रा पर जा रहे हैं, तुमने अपनी शादी के बाद से देवी माता के दर्शन नहीं किये हैं । यह सब बिलकुल ठीक नहीं है बेटा ।

सास के बार- बार यात्रा पर जाने के लिए कहने पर मेरे पति ने उनसे झुंझलाकर कहा- 'माँ घर पर दस रुपये की कीमत के भी जानवर नहीं हैं । न ही एक भी फूटी कौड़ी है जेब में तो क्या जान देकर यात्रा पर जाऊं । जहाँ शाम की रोटी का ठिकाना नहीं है, वहाँ भगवान की यात्रा के लिए कहाँ से पैसे लाऊं ।

मेरे पति के ऐसा कहने पर सास ने कहा- 'तू इसी तरह भगवान के बारे में अनाप-शनाप सोचता है, इसीलिए तो भगवान की कृपा तुझपर नहीं हो रही है और तेरा कुछ भी अच्छा नहीं हो रहा है ।'

इस पर मेरे पति ने चिढ़कर कहा- 'नहीं हैं मेरे पास पैसे', ऐसा कहते हुए वे घर से बाहर निकल गए । उन दोनों की यह बहस मैं अपने कानों से सुन और आँखों से देख रही थी । अपनी-अपनी जगह पर दोनों सही थे. मगर परिस्थिति के आगे दोनों लाचार थे ।

शाम की रेलगाड़ी से बिरादरी के सारे गोपाल नहा-धोकर यात्रा के लिए साथ में बकरे, आटा, नमक और मसाला आदि सामान लेकर निकले । गाँव में बिरादरी का एक भी गोपाल घर पर नहीं दिख रहा था, सभी यात्रा पर गए थे । यात्रा पर जाते समय सारे गोपाल मेरी सास से कहने लगे कि- 'चंदाबाई तुम भी यात्रा पर चलो, दो दिन बाद घर वापस आ जायेंगे । कल बकरा काटेंगे, खायेंगे-पियेंगे और परसों घर वापस आ जायेंगे । पर मेरी सास उनसे बहाना बनाकर मना कर देती थी और अपने मन को सांत्वना देकर घर में शांत बैठती थी ।

दो-तीन दिन बीत चुके थे ।सारे गोपाल यात्रा से वापसअपने घर आ गए थे।सबने मिलकर भगवान के प्रसाद के लिए मलीदा बनाना है ऐसा तय किया । सारे गोपालों ने पाँच-दस किलो

आटा मलीदा बनाने के लिए दिया । हमने भी ढाई किलो गेंहू उधार लेकर मलीदा बनाने के लिए दिया । बिरादरी और नात-रिश्तेदारों को भी न्यौता दिया गया ।

मायके में अब माँ-पिताजी अत्यंत वृद्ध हो चुके थे । वे बहुत बीमार रहते थे । वे कोई भी काम करने में असमर्थ थे । ऊपर से उनका भाग्य भी साथ नहीं दे रहा था । मैं उनकी इकलौती संतान थी मगर इतनी दूर थी कि उनकी देखभाल करने में असमर्थ थी । उनका ख्याल रखने वाला वहाँ कोई नहीं था । मेरी माँ एकदम भोली-भाली थीं । उन्हें दुनियावी रीत का कुछ भी ज्ञान नहीं था । उनकी सारी उम्मीदें सिर्फ मुझपर थीं, उन्हें लगता था कि मेरी नौकरी लगते ही उनकी सारी समस्याओं का समाधान हो जाएगा । मगर मैं तो इधर खुद ही उपले बनाकर किसी तरह अपनी गृहस्थी चला रही थी ।

प्रकरण ०८

निश्चय का फल मिला

हमारे द्वारा सहे गए कष्ट, हमारी मिन्नतें और हमारी मेहनत अंततः रंग लायी । मुझे नौकरी मिल गयी ।

अध्यापक की नौकरी के लिए आवेदन करने वाले दूसरे सभी अभ्यर्थियों का नाम सूची में था, उनका नियुक्तिपत्र भी आ चुका था, मगर मेरा नियुक्तिपत्र मुझे नहीं मिला था । मेरे पति को अब धैर्य नहीं हो रहा था, उन्होंने अपने मित्र से इसके बारे में पूछताछ की । उनके उस मित्र ने मेरा नाम सूची में ढूंढा, मगर मेरा नाम उसे सूची में नहीं मिला । उस मित्र ने मेरे पति से कहा- 'ओंकार, इसमें तो भाभी का नाम नहीं है ।' मेरे पति यह सुनकर एकदम निराश हो गए और उन्होंने पूछताछ करनी ही छोड़ दी । वे चुपचाप घर चले आये । ठण्ड के कारण वे बीमार पड़ गए, उनको बुखार आ गया । वे खाना-पीना छोड़कर, रजाई ओढ़कर लेट गए । वे एकदम गुमसुम थे । किसी से बात नहीं कर रहे थे । जब मैंने उनकी चुप्पी का कारण पूछा तो उन्होंने धीरे से मेरे कान में सारी घटना बताई,जिससे कोई दूसरा सुनकर हमारा मजाक न बना सके ।

सबको नियुक्तिपत्र मिल चुका था और सब लोग नौकरी ज्वाइन भी कर लिए थे । मगर मुझे मेरा नियुक्तिपत्र नहीं मिला था ।मैंने अपने मित्र से इसकी छानबीन भी करवाई थी लेकिन किसी भी सूची में मेरा नाम नहीं मिला था । अब हम सोच रहे थे कि अब भला हमें कैसे नौकरी मिलेगी ? कैसे हमारे जीवन का गुजारा होगा? कैसे हमारे बच्चों का पालन-पोषण होगा ? मेरे पति भी यही सब सोचते हुए रजाई में लेटे-लेटे सुबक रहे थे । मगर मुझे इन सब बातों पर विश्वास नहीं हो रहा था, क्योंकि मेरा इंटरव्यू अच्छा हुआ था और मुझे पूर्ण विश्वास था कि

मुझे नौकरी मिल जाएगी । यही बात मैं अपने पति को भी समझा रही थी । मैंने अपने पति से कहा कि सूची में मेरा नाम कहीं मेरे मायके के उपनाम से तो नहीं है । तुम्हारे मित्र ने मेरा नाम 'गिरहे' उपनाम से ढूंढा होगा मगर मेरे मायके का उपनाम 'माली' है इसीलिए उसे मेरा नाम नहीं मिला होगा । मैं तो कहती हूँ कि तुम स्वयं जाओ और बिना गुस्सा हुए धैर्यपूर्वक मेरा नाम मेरे मायके के उपनाम के साथ ढूंढो, तुम्हे जरूर मेरा नाम सूची में मिल जायेगा । इस प्रकार सारी रात मैंने पति को समझाने में ही गुजार दी। सुबह होते ही बीमार होने के बावजूद मेरे पति औरंगाबाद सूची में मेरा नाम देखने के लिए गए ।

जिला परिषद् के कार्यालय में मेरे पति ने सूची देखी उसमें मेरा नाम था । सूची में मेरा नाम देखते ही उनका बुखार जाने कहाँ भाग गया । उन्होंने जिला परिषद् से मेरी नियुक्ति का आदेश लिया और साथ ही पचास ग्राम मिठाई लेकर भागते हुए घर आ गए । उनकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं था। वे इतना खुश थे कि उन्होंने गाँव में घुसते ही सबको चिल्ला-चिल्लाकर मेरी नौकरी की खबर बता दी थी । उन्होंने मित्रों और रिश्तेदारों को ख़ुशी-ख़ुशी मिठाई बांटी ।वे पूरा दिन घूम-घूम कर थक गए थे । उनका मन अब शांत हो गया था ।

जिस समय मेरे परिवार में यह खुशखबरी आई थी मेरी सास घर पर नहीं थीं । वे खेत में घास लेने गयीं थीं । उनके घर आते ही मेरे पति ने उल्लास के साथ उनको बताया कि- माँ देख तेरी बहू मास्टरनी बन गयी है । अब भला गाँव में किसकी हिम्मत है हमें बदनाम करने की ।

मेरी नौकरी की खबर से पूरे घर में रौनक आ गयी । मेरे पति और सास की जैसे दुनिया ही बदल गयी । मगर यह आनंद केवल हमारे घर में ही था । हमारी ख़ुशी में बिरादरी का कोई दूसरा आदमी शामिल नहीं था, उल्टे वे हमारी सफलता से जल रहे थे । वे हमें बदनाम करने की

साजिश कर रहे थे, जिससे नौकरी मिलने के बाद जो खुशियाँ हमारे घर में आयीं हैं उनमे खलल डाल सकें । मेरा सौभाग्य था कि मुझे हमेशा मेरे पति का साथ हर कदम पर मिला, चाहे पूरी बिरादरी या परिवार ही मेरे विरोध में क्यों न हो, उन्होंने मेरा साथ कभी नहीं छोड़ा ।

स्कूल में नियुक्तिपत्र के आदेशानुसार मुझे कन्नड़ तालुका रेलगाँव में सोमवार के दिन उपस्थित होना था । जब हम उस स्कूल में उपस्थित होने के लिए जा रहे थे तब हमारे साथ मेरे पति के अलावा उनके मित्र विष्णु सलामपुरे भी साथ थे । स्कूल जाने से पहले रीति-रिवाजों के अनुसार मैं बड़े लोगों के आशीर्वाद ले रही थी । सबसे शुभाशीष लेकर हम तीनों (मैं, मेरे पति और उनके मित्र) तथा मेरा बेटा सतीश स्कूल को गये । लेकिन हमारे प्रति हमारे बिरादरी के लोगों में विरोध था लेकिन गाँव वालें नहीं ।

विष्णु सलामपुरेके पिता 'मगन बाबा'को जैसे ही पता चला कि मैं नौकरी के लिए दूसरे गाँव जाने वाली हूँ, उन्होंने मेरे पति से कहा- 'सुखदेव, तेरा दिमाग तो ठीक है ? तू पागल तो नहीं हो गया है ? जो नौकरी के लिए बेटी क्यों इतनी दूर भेज रहा है ? यह ठीक नहीं है बेटा! यहीं कहीं पास में इसके लिए नौकरी देख इतनी दूर इसे मत भेज । कोई समस्या हो तो मुझे बताना मैं हूँ न ।' मगर मेरा मन कही नहीं लग रहा था मुझे बस जहाँ नौकरी लगी थी वह गाँव और वहाँ का स्कूल ही नजर आ रहा था ।

अब मैं कन्नड़ तालुका पहुँच गयी । वहाँ से लोगों से पूछकर रेलगाँव स्कूल के लिए पहाड़ियों के बीच से होकर जाने वाले रास्ते पर चलने लगी । मैं पहली बार इस ओर आयी थी मुझे बहुत डर लग रहा था । रास्ते में चलते हुए मेरे पति और उनके मित्र को भी असहजता हो रही थी । मेरे पति सोच रहे थे कि इतनी दूर पत्नी को अकेले छोड़ना उचित रहेगा क्या ? वह रहेगी कैसे । वे दोनों यह सवाल मुझसे बार-बार पूछ रहे थे । परंतु मैंने निश्चय कर लिया था कि जहाँ

कहीं भी नौकरी मिलेगी मैं करूँगी ।हमने जो अभावों के कष्ट भरे दिन जिये है उन्हें मैं दोबारा जीना नहीं चाहती थी । मैंने जो पढ़ाई की है उसका सदुपयोग कर समाज को दिखाना था । मुझे मेरे बेटे का भविष्य उज्जवल बनाना था । मैं डरकर अपने इन सपनों को साकार नहीं कर सकती थी । मेरे डर कर वापस हो जाने से मेरे सारे सपने चूर-चूर होकर मिट्टी में मिल जाते । मैंने अपने पति को यह सब बातें समझायीं और स्कूल में नौकरी ज्वाइन कर ली ।वहाँ रहने के लिए सामान लेने मैं घर वापस आ गयी ।

घर से रेलगाँव रहने जाने के लिए तैयारी कर रही थी । मगर मेरी उस तैयारी का कोई मतलब नहीं था क्योंकि घर में साथ ले जाने के लिए न बर्तन थे, न कपड़े थे, न ही कुछ और सामान । सारी गृहस्थी चौपट थी । मगर मन में जीवन की नयी शुरू को लेकर उत्सुकता थी ।

दो दिन बाद हमने रेलगाँव जाने की योजना बनायी । इसी बीच मेरे माँ-बाप को भी मेरी नौकरी के बारे में जानकारी मिली । उनको बहुत ख़ुशी हुई । उनको लगा जैसे उनके सभी कष्टों और समस्याओं का अंत हो गया हो ।

जाते समय हमने अपने साथ अपनी छोटी ननद को बच्चे को संभालने के लिए साथ ले जाने का निश्चय किया । मुझे विदा करने के लिए सारा गाँव एकत्रित हुआ । जैसे मैं बाद में कभी दोबारा वापस गाँव आने वाली ही न थी । उन्हें यह सब कुछ नया लग रहा था । गाँव की औरते मेरे पति से कह रही थी कि- ‘सुखदेव, तू अपने पत्नी की इतनी दूर अकेला रखेगा ? वह बेचारी वापस घर कब आयेगी ।’ मुझे उन महिलाओं की बात सुनाई पड़ रही थी । मुझे विदा करते समय मेरे देवर, सास, ननद सब मेरे गले लग कर रो रहे थे । वे सब मुझसे कह रहे थे कि मुझे छोडकर जा रही हो, वहाँ संभलकर जाना । बेटे को ठीक से संभालना । मैं यह सब पारिवारिक मोह माया छोडकर एक-एक कदम आगे बढ़ रही थी ।

रात के नौ बजे मैं कन्नड़ तालुका पहुँच गयी । वहाँ सामान ले जाने के लिए कोई वाहन उपलब्ध नहीं था, इसीलिए मुझे वहीं स्टैंड पर ही सारी रात जागते हुए गुजारनी पड़ी । सुबह होते ही हम रेलगाँव जाने के लिए निकले । मेरे पति ने सामान की पोटली को अपने कंधे पर लाद लिया । यह पोटली देखकर मुझे मेरी बचपन की याद आने लगी । बचपन में हम ऐसे ही पीठ पर पोटली लादकर घूमते थे । वही बचपन का चित्र मेरी आँखों के सामने दोबारा घूमने लगा ।

हम पति और पत्नी सामान और बेटे को बदल-बदल कर उठाते थे । जब पति सामान उठाते थे तो मैं बेटे को गोद उठाती थी और जब मैं सामान उठाती थी तो पति बेटे को गोद उठाते थे । ऐसा करते-करते हम लोग रेलगाँव पहुँच गए । वहाँ गाँव के लोगों ने हमारे रहने की व्यवस्था की थी । गाँव में जिधर ब्राह्मणों का वाड़ा था उधर ही हमें कमरा मिला था । मेरे पति हमारे साथ वहाँ दो दिन तक रुके और तीसरे दिन वे हमें छोड़कर गाँव वापस जाने लगे । जाते समय वे गाँव वालों से विनती करने लगे कि- मेरी पत्नी यहाँ अकेले है आप लोग उसका ध्यान रखियेगा। दुकान वाले से वे विनती करते हुए कह रहे थे कि- भैया उसे जो सामान चाहिए उसे दे देना । तनख्वाह के पैसे मिलते ही मैं अपने हाथों से आपकी उधारी चुका दूँगा । बेटे सतीश को वे समझाते हुए कह रहे थे कि- 'सतीश, माँ को परेशान मत करना' और छोटी ननद जया से कहा कि- 'परेशान मत होना, रोना नही ।' मैं हर आठ दिनों में तुम लोगों से मिलने आ जाया करूँगा चिंता मत करना । ऐसा कहने के बाद वे धीरे-धीरे कन्नड़ तालुका जाने वाले रास्ते पर चलने लगे । अब मेरी नौकरी लग चुकी थी । जीवन में बहुत सारे कष्टों को सहने के बाद यह सुख हमें नसीब हुआ था । जिंदगी की कष्ट भरी दुपहरी में यह नौकरी छाँव बनकर हमारी जिंदगी में आयी थी ।

जिस स्कूल में मेरी नियुक्ति हुई थी उस स्कूल में दो शिक्षक थे । बच्छावत सर हेडमास्टर थे । शेलके सर, लीलाबाई मैडम को आँगनवाड़ी संभालने के लिए लगाते थे । मुझे पहली कक्षा मिली थी । लीलाबाई मैडम और हम दोनों साथ में ही रहते थे । लीलाबाई मैडम स्वभाव से अच्छी थीं,जल्दी ही घुल-मिल जाती थीं ।

बीच-बीच में मेरे पति मुझसे मिलने आते रहते थे और एक-दो दिन रुककर वापस चले जाते थे । मार्च के महीने के शुरूवाती दिन थे, मेरे डिलीवरी का समय नजदीक था । मेरे लिए बड़ी समस्या थी, अगर डिलीवरी के समय छुट्टी लेती तो घर में खाने-पीने के लिए पैसे कहाँ से आयेंगे । मुझे क्या करना चाहिए समझ नहीं आ रहा था । मैंने मन ही मन निश्चय किया कि प्रसव होने के अंतिम दिनों तक स्कूल से छुट्टी नहीं लूंगी । मेरे पति को मेरी चिंता हो रही थी वे मुझसे बार-बार स्कूल से छुट्टी लेने के लिए कह रहे थे लेकिन मेरी छुट्टी लेकर घर जाने की इच्छा बिलकुल नहीं थी । मैं अब नौकरी के बिना नहीं रह सकती थी ।जिस गाँव में मैं रह रही थी उस गाँव में एक ब्राम्हण बुढ़िया थी, जो बहुत ही समझदार और दयालु थी । वह प्रसव कराने में सिद्धहस्त थी । सारे गाँव वाले उसे ‘नानी’ कहते थे । वह मेरा मेरा बहुत खयाल रखती थी । ब्राम्हणों का सारा वाड़ा मेरा ध्यान रखता था ।

२५ मार्च को महाशिवरात्रि के दिन मैंने एक बेटे को जन्म दिया । २० तारीख को ही मैंने सहारे के लिए मायके से अपनी माँ को अपने पास बुला लिया था । बेटा अभी बीस दिन का ही हुआ था कि अचानक एक दिन पिताजी का पत्र मिला जिसमें उन्होंने लिखा था कि बेटी अपनी माँ को जल्दी घर भेज दे, यहाँ तुम्हारी दादी की तबियत बहुत ख़राब है । उन्होंने खाना-पीना बंद कर दिया है ।’ पिताजी का पत्र मिलते ही मैंने माँ को घर भेज दिया । अब मैं घर पर

अकेली थी । माँ अपने साथ मेरे बड़े बेटे सतीश को ले गयी थी । घर पर सिर्फ मैं और मेरा नवजात शिशु दो ही जन थे ।

स्कूल के बच्चों का रिजल्ट एक मई को आया । दो तारीख को मेरे पति मुझे लेने आए और छुट्टियों में मैं गोलवाड़ी आ गई, लेकिन मेरा मन रेलगाँव में ही बसा था । अब नौकरी में बहुत आनन्द आने लगा था ; हमें एक मई से एक जुलाई तक छुट्टियाँ मिलींथीं । छुट्टियों में तनख्वाह भी बंद हो गयी थी, मुझे चिंता हो रही थी । किसी तरीके से छुट्टियों के दो महीने हमने बड़े कष्ट में गुजारे । जुलाई में मेरा तबादला पास के ही तीसगाँव में हो गया । अब मैं घर से पैदल ही स्कूल जाती थी । मेरा दूसरा बेटा अब चार महीने का हो चुका था । उसे भी मैं गोद में उठाकर रोज अपने साथ स्कूल ले जाती थी । मेरा बड़ा बेटा अपनी नानी के पास रहता था । कभी-कभी मुझे उसकी बड़ी याद आती थी, पर मैं उसे अपने से दूर मायके में ही रखने को मजबूर थी । मेरे लिए दोनों बच्चों को साथ रखकर उनका पालन-पोषण करना संभव नहीं था ।

मैं रोज सुबह आठ बजे बेटे को पीठ पर बाँधकर स्कूल ले जाती थी । अभी तक रोटी ले जाने के लिए मेरे पास कोई डिब्बा नहीं था इसीलिए मैं खेत में काम करने वाली बाई की तरहसादे कपड़े में रोटी बांधकर स्कूल ले जाती थी । कभी-कभी मै छोटी ननद जया को भी अपने साथ ले जाती थी ।

मैं रोज सुबह पाँच बजे उठ जाती थी । घर का सारा काम निपटाकर मैं स्कूल जाती थी । स्कूल से वापस घर शाम को पाँच बजे आती थी । रात के दस बजे तक घर के काम करती थी और काम ख़तम कर जमीन पर ही लेटकर सो जाती थी । मेरे घर में सास, ननद, पति और छोटा बेटा इतने ही सदस्य थे ।

नौकरी करके सुख की आसानी से रोटी तो नसीब हो जाती थी, मगर मन को शान्ति अभी भी नहीं थी हमारे । घर का माहौल हमेशा तनावयुक्त बना रहता था । जब मैं रेलगाँव में नौकरी के सिलसिले में रहती थी, यहाँ गाँव में बिरादरी के गोपाल मेरे पति को कहते थे कि- 'ओमकार, अपनी बीवी के पैसों से अपना पेट पाल रहा है । उसने अपनी बीवी को दूसरे गाँव में छोड़ रखा है और खुद यहाँ गाँव में कुत्ते की तरह घूम रहा है । घर बैठे बीवी के पैसों पर गुजारा करना अच्छा लगता है उसे ।'

कहते हैं न कि- आप मारने वाले के हाथ तो पकडे सकते हैं मगर बोलने वाले की जुबान नहीं पकड़ सकते । मैं जब सुबह नहा-धोकर, बाल बनाकर, व्यवस्थित होकर स्कूल जाती थी तो लोग मुझे मदारी कह कर चिढ़ाते थे । वे मुझे लक्ष्य करके दूसरी ओर देखते हुए ताने मारते हुए कहते थे कि- 'नाचने जा रही है क्या ?' मैं उनके तानों को सुनकर भी अनसुना करते हुए निकल जाती थी ।

मुझे लगता था कि मुझे नौकरी करते हुए देखकर यह समाज मुझसे प्रेरणा लेकर अपने बच्चों की पढाई की ओर ध्यान देगा मगर मैं गलत थी ।कहते हैं न कि- कुत्ते की दुम कभी सीधी नहीं होती, हमेशा टेढ़ी ही रहती है ।

मुझे नौकरी करते हुए एक साल हो गया था । मेरे पति को भी नौकरी के लिए जालना से बुलावा आया था । बड़ी मशक्कत के बाद उनकी नौकरी लगी थी वह भी बहुत दूर । अब मुझे और डर लगने लगा था क्योंकि मुझे पता था कि पति दूर जाने से मुझे और परेशानी होगी । पति ने नौकरी ज्वाइन कर ली थी । उनके खाने-पीने की व्यवस्था पंचायत की ओर से की गई थी, वहाँ पंचायत की ओर से उन्हें राशन मिल जाता था उसी को अपने हाथ से कच्चा-पक्का बनाकर वे अपना गुजारा करते थे । हर चार-पाँच दिनों बाद वे घर आते थे ।

तीसगाँव से मेरा तबादला गंगापुर तालुका के रामराई गाँव में हुआ और तीसगाँव में मेरी जगह पर एक मैडम आयीं । मेरा दूसरे बेटे की आयु डेढ़ वर्ष हो चुकी थी । उसका बाएँ पैर का पंजा जन्म से ही टेढ़ा था इसीलिए उसे किसी दूसरे के पास छोड़ने का मन नहीं करता था । रोज स्कूल के लिए वालुज तक बस से जाती थी और वालुज से आगे रामराई स्कूल तक चार किलोमीटर का रास्ता पैदल तय करती थी । इतनी दूर स्कूल जाने के लिए बच्चे को घर पर ही छोड़कर जाना उचित था । स्कूल में कक्षा एक से लेकर चौथी कक्षा तक पढ़ाने के लिए सिर्फ एक ही शिक्षक की व्यवस्था थी । पूरे स्कूल में मैं अकेली शिक्षिका थी इसीलिए सारी कक्षाओं की जिम्मेदारी मेरे ऊपर ही थी । 'पूरे स्कूल को संभालना है'- इस बात को सोचकर ही मेरे मन में घबराहट होने लगती थी । स्कूल जाने के रास्ते के दोनों ओर फसल लगी होती थी उन फसलों से घिरे हुए सुनसान रास्ते से गुजरते हुए मुझे बहुत डर लगता था ।

मुझे घर में शादी के सारे काम करने पड़ते थे (शायद लेखिका के घर में किसी की शादी थी, किसकी शादी थी इसका विवरण लेखिका ने नहीं दिया है) । इस दौरान मेरा तीसरा बच्चा भी चार महीने का हो गया था । जब मैं रामराई स्कूल पढ़ाने के लिए जाती थी तब मेरा मंझला बेटा घर पर ही रहता था । उसे लेकर मेरी छोटी ननद जंगल में भैंस चराने जाती थी ।

एक बार जब जया मेरे मंझले बेटे को लेकर भैंस चराने गयी थी तो वहाँ एक ऐसी घटना घटी जिस से उसकी जान खतरे में पड़ गयी थी । वहाँ हुआ ये था कि बारिश के बाद धूप निकली थी तो जया बच्चे को नाले के किनारे बैठाकर के शौच करने चली गयी । इसी बीच एक बड़ा साँप सनसनाता हुआ मेरे बेटे के पैरों के बीच से निकल गया । साँप को मेरे बेटे के पैरों के बीच से निकलते हुए मेरी मौसेरी सास ने देखा था । जब साँप मेरे बेटे के पैरों के बीच से निकला तो मेरा अबोध बच्चा उसे पकड़ने के लिए उसके पीछे भागने लगा । बच्चे को ऐसा

करते देख मेरी मौसेरी सास ने दौड़कर बच्चे को उठा लिया । इस प्रकार मेरा बेटा काल के मुँह में जाते-जाते बचा ।

स्कूल की छुट्टियाँ ख़त्म हो गयी थीं । स्कूल खुल गए थे । लड़कियों और छोटे-छोटे बच्चों का स्कूल आना शुरू हो गया था । मैं अपने तीसरे बेटे को पीठ पर लादकर स्कूल लाती और वापस ले जाती थी । इस तरह गृहस्थी की कठिनाइयों का सामना करते हुए मैं अपनी नौकरी कर रही थी । अभी भी मेरी जिंदगी मेंकठिनाइयों का अंत नहीं हुआ था ।

मेरी नौकरी लग चुकी थी । मेरे नाना जी की मृत्यु हो गयी थी । उनकी मृत्यु किसी दुर्घटना से नहीं बल्कि एक भयानक बीमारी के कारण बहुत कष्ट सहते हुए हुई थी । बीमारी के कारण उनके हाथ-पैर टेढ़े हो चुके थे । वे दिनभर घर पर ही पड़े रहते थे । घर पर रहना मतलब बुजुर्गों को आराम करना होता है; लेकिन उन्हें आराम मतलब क्या होता है ? यह उन्होंने कभी सुना ही नहीं ।

बिना किसी के सहारे के जीवन जीना कितना मुश्किल होता है यह केवल नाना जी ही जानते थे । नानी जी बिलकुल सीधी-साधी थीं, उनके भोलेपन का फायदा नानाजी उठाते थे । उन्होंने गुदड़ी की तरह गृहस्थी के एक-एक धागे को जोड़कर अपना घर चलाया था । मैंने यह सब स्वयं अपनी आँखों से देखा था ।

नाना जी हमेशा कहते थे कि गृहस्थी का जीवन बहुत ही सारवान होता है, इसे लड़ते-झगड़ते और कुतर्कों के सहारे नही समझा जा सकता । जिस गृहस्थी के जीवन में आपसी भाईचारा और प्रेम न हो ऐसे गृहस्थ जीवन का क्या मतलब ? नाना जी की कही हुई इन सब बातों की प्रत्यक्ष अनुभूति मैंने अपने गृहस्थ जीवन में की है । इसीलिए अब गृहस्थ जीवन में पड़ने वाली

मुश्किलों का मुझ पर कोई असर नहीं पड़ता मैं उनसे पार पाने का कोई न कोई रास्ता खोज ही लेती हूँ ।

प्रकरण- ०९

यही है मरणकला

बरसात के मौसम में शिवराई के स्कूल पर हर दिन बेटे को साथ लेकर आना-जाना बहुत ही कठिन था । समय पर पहुंचना मुमकिन नहीं था । गोलवाड़ी चौक पर बस कभी रुकती नहीं थी । किस समय स्कूल पहुचेंगे यह पता नहीं । मन में हमेशा डर सा रहता था कि, कहीं स्कूल जाने में देर न हो जाये । कोई अधिकारी अगर जाँच करने आ गए तो वे मुझ पर अनुशासनात्मक कारवाई न कर दें ? क्या होगा अगर उन्होंने ऐसे कर दिया तो? ऐसे अनेकों विचार मेरे मन में आते थे। इसी डर की वजह सेशिवराय के देशमुख सर और हम दोनों ने आपस में तबादला कर लिया था।

शिवराई के स्कूल में दो शिक्षक और एक शिक्षिका थी । उनके साथ मेरी अच्छी दोस्ती हो चुकी थी । छोटा बेटा संदीप मेरे साथ ही रहता था । बड़ा बेटा सतीश स्कूल जाने लायक हो गया था, लेकिन वह पाथर्डी में माँ (अपनी नानी) के पास था । उसे गोलवाड़ी में लाने का विचार था । अपने बेटे को अच्छी शिक्षा और संस्कार देने के लिए मैंगोलवाड़ी से औरंगाबाद रहने के लिए आ गयी । गोलवाड़ी चौकी पर मुझे स्कूल जाने के लिए गाड़ियां नहीं मिलती थीं । स्कूल पहुँचने में कभी देरी होने पर हेड मास्टर की बातें सुननी पड़ती थी । इन्हीं सब परेशानियों से निजात पाने के लिए मैंने औरंगाबाद की छावनी में एक कमरा किराए पर लेकर वहीं अपने बेटे के साथ रहने का निश्चय किया । मैंने अपने बेटे का स्कूल में दाखिला भी करवा दिया ।

मैं अपना घर छोड़कर औरंगाबाद में शौक से रहने नहीं आई थी, लोगों को भले ही लगता हो कि मैंने शौकिया ऐसा किया है । यहाँ मैं अपने बच्चे की शिक्षा और अपनी नौकरी के कारण

आई थी । मेरे पति का भी जालने से औरंगाबाद तबादला हो गया था । जब मैं गाँव से औरंगाबाद रहने के लिए आ रही थी तब गाँव का कोई भी आदमी हमें विदा करने नहीं आया था, सब चुपचाप अपने घरों में छुपे थे, पूरे गाँव में सन्नाटा पसरा हुआ था । वे अपने घरों में मेरे बारे में बात कर रह थे कि- 'आखिर चली गयी शहर, यहाँ गाँव में उसे अच्छा नहीं लगता था । बहुत बेकार औरत है वो ।' उनकी इन बातों को सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ । मेरा मन विचलित हो गया ।

छावनी वाले किराए के घर में मैं अपनी माँ को भी रहने के लिए ले आयी थी । वे मेरे तीनों बेटों को सम्हालती थीं और घर का सारा काम भी कर देती थीं । मैं अब निश्चिन्त होकर स्कूल जाती थी । अब मेरे मन को तो नहीं मगर मेरे शरीर को थोड़ा आराम मिला था । मेरे पति कहते थे- 'किया ना तूने, एक घर के दो द्वार' (घर के दो द्वार कब के हो चुके थे) देवर की शादी हुए दो माह हो चुके थे वे पहले ही अपनी गृहस्थी अलग कर चुके थे । जब उन्होंने अपनी गृहस्थी अलग की थी तब मैं घर पर नहीं मायके में थी ।

मैं औरंगाबाद में जिस किराए के घर में रहती थी वह देवचंद परदेशी जी का था । स्कूल में टेकाले नाम के एक शिक्षक, एक शिक्षिका और मैं कुल तीन (शिक्षक) लोग थे । शिक्षिका और मैं, हम दोनों साथ में स्कूल आना- जाना करते थे । वे बहुत ही नेक स्वभाव की मिलनसार महिला थीं ।

माँ के मेरे पास आने के बाद घर पर पिताजी अकेले हो गए थे । उनके खाने-पीने की व्यवस्था करने वाला कोई नहीं था । उनका स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता था । वे अगर कभी बीमार पड़ जाएँ तो उनकी देखभाल करने वाला वहाँ कोई नहीं था ।

अब मेरा बड़ा बेटा सतीश स्कूल जाने लगा था । माँ ज्यादा होशियार नहीं थीं, इसीलिए मुझे स्कूल में भी हमेशा घर और बच्चों की फ़िक्र होती थी । बच्चे सुरक्षित स्कूल से घर वापस आ गए होंगे क्या ? ये चिंता मेरे मन में हमेशा बनी रहती थी । शिवराई के चौक पर पानी नहीं रहता था । गाड़ियां जल्दी रूकती नहीं थी ।चार बजे स्कूल की छुट्टी होती थी; लेकिन जाने के लिए पाँच-छः बजे तक वाहन नहीं मिलते थे ।

चौराहे पर गाड़ी के इंतिजार में खड़े-खड़े ऊब जाती थी मगर गाड़ी नहीं रुकती थी । कई बार तो गाड़ी न मिलने पर ट्रक वालों से गुजारिश कर ट्रक से आना पड़ता था । कभी-कभी बारिश में रुकना पड़ता था, चौक पर और कोई दूसरा आश्रय नहीं था । इन सारी परेशानियों का नित्य सामना करना पड़ता था । छावनी वाले किराए के घर में रहने से परेशानियाँ थोड़ी कम जरुर हो गयीं थीं । भगवान की कृपा से अब कठिन दौर बीत गया था । अब लोगों के लांछनों का जवाब देने और सारी उलझनों का डटकर सामना करने की शक्ति मिल गयी थी । भगवान को शायद हमारे कष्ट भरे दिन देखे न गए हों, इसीलिए उसने हमपर अपनी कृपा की हो, किसे पता !

हम दोनों नौकरी कर रहे थे । हमें ये लगता था कि गाँव में हमारा एक घर होना चाहिए क्योंकि गाँव के लोगों के तानों की गूंज अभी तक मेरे कानों में सुनाई पड़ रही थी । लोग कहते थे कि इन्हें म्युनिसिपॉलिटी के अलावा कौन नौकरी देगा । इनके बाल-बच्चे क्या खायेंगे । उन लोगों का मुँह बंद करने के लिए गाँव में घर बनवाया गया । घर बनवाने के कुछ दिनों बाद ‘बैल पोला’ (‘पोला’ महोत्सव यह एक फसल उत्सव है और पूरे महाराष्ट्र राज्य में विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र में मनाया जाता है) का त्यौहार आया । रविवार और सोमवार को मेरा व्रत था । पति सुबह उठ कर रनिंग के लिए निकले थे । वापस आकर उन्होंने स्नान किया और रसोई घर में आ गए । इसी बीच एक भयंकर दुर्घटना घटी । मैंने लाइट बंद कर दिया था इसमें कोई शंका

मुझे नहीं थी । रसोई घर में आने के बाद मेरे पति ने सहज ही हाथ ऊपर उठाया, तभी उनका हाथ वायर से छू गया और वे पल भर में ही उस तार से चिपक गए । देखते-देखते ही देखते बिजली ने उन्हें ऊपर खिंच लिया । यह भयंकर दृश्य मेरे, मेरी माँ और मेरे बड़े बेटे सतीश की आँखों के सामने घटित हुआ था । मौत बिलकुल आँखों के सामने थी मगर अभी शायद मृत्यु का समय नहीं हुआ था । उन्हें ऊपर खींचते ही वायर टूट गया और झटके से उनको नीचे डिब्बे पर फ़ेंक दिया । नीचे गिरते ही उनके मुँह से बैल के जैसे आवाज़ निकली । मैंने पति को तुरंत पकड़ा वे मुझे अपना शरीर छूने नहीं दे रहे थे; उन्हें लगता था की उनको छूने से मैं भी उनसे चिपक जाउंगी । उन्होंने मुझसे कहा मुझे कुछ नहीं हुआ है । मैं बिलकुल ठीक हूँ, आप लोगों को घबराना नहीं है । वह समय कितना क्रूर था । इस घटना के कारण उनके दायें हाथ की हड्डी टूट गयी थी, जिसके कारण उनका हाथ एकदम से सूज गया था । उनका हाथ बहुत दर्द कर रहा था हम डॉ. चोरडिया के दवाखाने पर इलाज के लिए गए लेकिन उन्हें कुछ आराम नहीं हुआ । लोगों के कहने पर अगले दिन हम लोगों ने गोलवाडी हाथ बैठवाने के लिए जाने का निश्चय किया । जैसे ही यह घटना गाँव के लोगों को पता चली गाँव की सारी गोपालिनियाँ शोर मचाते हुए हमारे घर आ गयीं ।

इस सारे अपशगुन का जिम्मेदार मुझे ठहराया गया । लोग कहने लगे- ‘यही लेकर आई हमारे बेटे को, इसी की वजह से यहाँ दुर्घटना घटी है नहीं तो कुछ नहीं होता था ।’

लगातार बारिश हो रही थी । यह घटना सुबह सात बजे ही घटी थी उसी आपाधापी के कारण पेट में अभी तक एक निवाला खाना भी नहीं गया था । बारिश चालू थी । गोलेगाँव जाना मतलब साथ में पति को लेकर जाना अनिवार्य था । इसलिए मैंने नंदोई, धर्म भाई इन्ही को साथ में लिया और ऑटो-रिक्शा से हम लोग अगले दिन मंगलवार को सुबह नौ बजे गोलेगाँव के

लिए निकले । किसी तरह आधे रास्ते तक हम पहुँचे, पति को रिक्शे का हिचकोला सहन नहीं हो रहा था, उन्हें बहुत कष्ट हो रहा था । मैं उनके हाथों को थाम के बैठी थी, ताकि उनको हिचकोला कम लगे लेकिन गाँव का रास्ता बारिश के कारण बहुत ज्यादा खराब था। कच्ची सड़क बारिश के कारण तहस-नहस हो गयी थी । रास्ते का पुल भी बारिश के कारण क्षतिग्रस्त हो गया था, उस पर आवागमन बिलकुल संभव नहीं था । गोलेगाँव वहाँ से चार-पाँच किलोमीटर दूर था और बारिश भी तेज होती जा रही थी । रिक्शा आगे नहीं जा सकता था ।अब पैदल चलने के अलावा और कोई दूसरा उपाय नहीं था इसीलिए रिक्शे को एक पेड़ के नीचे खड़ा करके हमने पैदल जाने का निश्चय किया । मेरे पति भी रिक्शे से उतरकर पैदल चल रहे थे । उनके शरीर पर एक चादर थी । मेरे नंदोई और धर्मा भाई दोनों सादे कपड़ों में चल रहे थे । मेरे पति रास्ते के पत्थर, कीचड़, पानी से भरे गड्ढों के कारण चल नहीं पा रहे थे । उन्हें चक्कर आ रहा था इसके बावजूद वे कष्ट सहते हुए बीच-बीच में उठते-बैठते हुए किसी तरह चल रहे थे । इन्हें ठंडी हवा सहन नहीं हो रही थी । बारिश धीरे-धीरे बढ़ती ही जा रही थी । चलते-चलते रास्ते में हमें एक बगीचा दिखा, उस बगीचे में एक झोपड़ी थी । हम उस बगीचे में गए और हमने कुछ देर उस झोपड़ी में आराम किया । हम इस इंतिजार में थे की बारिश शायद कुछ कम हो जाए मगर बारिश कम होने का नाम ही नहीं ले रही थी । थोड़ी देर बाद हम लोगों ने पुनः गोलेगाँव की ओर चलना प्रारम्भ किया ।

बारिश में भीगने के कारण बहुत ज्यादा ठण्ड लग रही थी, ठंडी के कारण ही हमारे दांतों में दर्द होने लगा था, दर्द के मारे बात करना भी संभव नहीं था । मुझे मेरे पति की फ़िक्र थी कि कहीं वे रास्ते में गिर न जाएँ, इसी डर के कारण मैं उनके पीछे-पीछे ही चल रही थी । इस प्रकार हम किसी तरह गाँव पहुँच गए । बारिश में भीग जाने के कारण मेरे कपड़े शरीर से चिपक गए थे । मुझे बहुत शर्म आ रही थी । मैं चुपचाप नज़रें नीचे झुकाकर कर चल रही थी ।

हम उस वैद्‌य के घर पहुँच गए । मुझे भीगा देखकर वैद्‌य के घर के सामनेवाले घर की औरत ने मुझे पहनने के लिए एक साड़ी लाकर दी; लेकिन मैंने उसे नहीं पहना क्योंकि लौटते समय फिर भीगना ही था इसलिए मैंने मना कर दिया ।

हम थोड़ी देर बैठे थे कि वैद्‌य घर से बाहर आ गए । उन्होंने मेरे पति को घर में बुलाया । पति के हाथ की टूटी हड्‌डी को बैठाते समय ये दर्द से बहुत ज्यादा रोयेंगे, चिल्लायेंगे ये सब सोच के ही मुझे बहुत ज्यादा डर लग रहा था । मुझे कुछ भी समझ नही आ रहा था, मैं घर से बाहर आ गयी । वैद्‌य ने अपने दोनों पैरों के घुटने मेरे पति के कंधे पर रखकर उनके दोनों हाथों को पीछे की ओर खींच रखा था । मेरे पति दर्द से चिल्ला रहे थे । मैं उनकी दर्दभरी आवाज नहीं सुनना चाहती थी इसीलिए मैंने अपने दोनों हाथों से अपने कान बंद कर लिए और नीचे बैठ गयी । अपने पति की असहनीय पीड़ा को देखकर मेरे मन में विचार आ रहे थे कि- हे भगवान, अगर मेरे हाथ-पैर टूट जाते तो अच्छा था, मेरे पति को ये क्या वनवास दिया है ।

हम लोग बारिश में ही वहाँ से घर को वापस निकले । हम सब की हालत अत्यंत दयनीय थी । मैंने व्रत रखा था । जीवन में हमने अनेक कष्टों का सामना किया था, लेकिन ऐसा विकट कष्ट पहली बार जीवन में आया था । मैं अपने पति से उनके हाथ के दर्द के बारे में पूछती थी कि- अब आपके हाथ का टनकना ठीक है ? वे कभी हाँ तो कभी ना में जवाब देते थे । दरअसल उन्हें भी कुछ समझ में नहीं आ रहा था । शाम के पाँच बजे हम सब घर पहुँच गए ।

घर पहुँचने के बाद हमारी मंगलवार की रात थोड़ी ठीक गुजरी थी इसीलिए मुझे थोड़ा ही सही मगर अच्छा महसूस हुआ । अगला दिन बुधवार और २६ तारीख थी । मेरी आँखों में नींद नहीं थी, मुझे स्कूल अवश्य जाना था । मैंने उठकर अपने आँखों के आंसुओं को साफ़ किया और बस स्टैंड पर पहुँच गयी । कल की सारी घटना मैंने अपने साथी शिक्षकों को बता दी थी ।

उन्होंने सांत्वना देकर मेरे मन को शांत करने का प्रयास किया था । स्कूल में सुबह नौ से शाम के चार बजे अर्थात पूरा दिन ही रहना था । स्कूल में पढ़ाने में मेरा मन नहीं लग रहा था । मेरा सारा ध्यान मेरे पति के टूटे हाथ पर ही था । आज का एक दिन मुझे एक वर्ष के समान लग रहा था । उनके हाथ कैसा होगा ? इस बात की चिंता मुझे हमेशा सताती रहती थी ।

अब हाथ को करंट लगे हुए चार-पाँच दिन हो चुके थे, परंतु उनका हाथ ऊपर-नीचे नहीं हो रहा था । मैं हमेशा अपने पति को हाथ को हिलाने और हाथ पर जोर डालने से मना करती थी । ऐसे ही गुरुवार के दिन दोपहर के एक बज रहे थे । परिवार का कोई भी सदस्य उनके पास नहीं था । दोपहर को वे सो गए थे । कब नींद से जागे किसी को पता नहीं चला । उन्होंने अधनींदी अवस्था में अपना टूटा हाथ जोर से घुमा दिया । उस टूटे हाथ से कड़ की आवाज़ आयी ।

टूटे हुए हाथ की बैठी हुई हड्डी दुबारा खिसक गयी । कुछ ही क्षणों के बाद हाथ फिरसे सूज गया । अब मेरे हाथ पैर ढीले पड़ गए । मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूँ । आखिर में पुनः इलाज हेतु गोलेगाँव जाना तय हुआ । गुरुवार की रात बहुत कठिनाई भरी बीती । सारी रात हम दोनों के आँखों की पलकें नहीं झपकीं, जिस तरह मछली को पानी से बाहर फेंकने पर तड़पती है, वहीहाल हम दोनों का था । मैं सोच रही थी कितनी जल्दी रात बीते और सुबह हो ।

शुक्रवार को सूर्योदय हुआ । सुबह का चाय-नाश्ता करने के बाद मैं अपने नंदोई धर्मा का इंतज़ार कर रही थी । वे आ गए या नहीं यह देखने मैं चार बार घर से बाहर गयी थी । थोड़ी देर बाद वे आ गए और हम पहले की ही भांति रिक्शा लेकर सुबह आठ बजे गोलेगाँव के लिए निकले । फिर से चार-पाँच किलोमीटर चलकर जाना पड़ा । फिरसे हाथ की हड्डी बैठते समय

मेरे पति बहुत चिल्लाये वह आवाज़ अब तक मेरे कानों में गूंजती रहती है । जिस समय मेरे पति दर्द के मारे चिल्ला रहे थे, उस समय मैं वहाँ से थोड़ी दूर जाकर एक नीम के पेड़ से लिपट कर रो रही थी । मैं भगवान से एक प्रार्थना कर रही थी कि- हे भगवान ऐसा कष्टकारी समय मेरी जैसी वनवासी और इकलौती बेटी पर नही आना था । अगर आ भी गया तो कृपा करके हमें इस कष्ट भरे दिनों से बचा लो ।

इसी प्रकार कठिनाइयों को सहते हुए एक माह बीत चुका था परंतु उनका हाथ अभी तक ठीक नहीं हुआ था आखिर में हाथ में प्लास्टर लगवाना पड़ा । प्लास्टर लगवाने के पन्द्रह-बीस दिनों बाद थोड़ा आराम हुआ । सारी छुट्टियाँ इनकी बीमारी में ही बीत गयीं ।काम करने लायक दाहिने हाथ के टूट जाने के कारण वे कुछ बह काम करने में सक्षम नहीं थे । लिखने आदि का काम वे करने में असमर्थ थे ।

हमारे स्कूल की सह-शिक्षिका टेकालेबाई ने अपना डेपुटेशन वालुज नामक गाँव में करवा लिया था । उनके जाने के बाद उनकी जगह पर शिवराई स्कूल में कपिला नाम की एक शिक्षिका आयीं । मेरी उनसे घनिष्ठ मित्रता हो गयी थी । स्कूल की छुट्टी होने के बाद मेरा मन कहीं नहीं लगता था । घर जाने के लिए गाड़ी कब मिलेगी यही विचार मन में चलता रहता था । स्कूल में केवल तीन ही शिक्षक थे जो कक्षा एक से छह तक के विद्यार्थियों को पढ़ाते थे । उन पर काम का बोझ बहुत ज्यादा था ।

अप्रैल का महीना था स्कूल में बच्चों की वार्षिक परीक्षा का समय था । दो अप्रैल से कक्षा चार की परीक्षाएं शुरू थी । मैं उस कक्षा की कक्षा-अध्यापिका थी इसीलिए मुझे ही उस कक्षा की परीक्षाओं की व्यवस्था करनी थी । परीक्षा केंद्र लांझी गाँव में था । बच्चों को परीक्षा दिलवाने के लिए मैं उन्हें लांझी ले आने वाली थी । तीन अप्रैल को चतुर्थी थी । बस स्टैंड के पास गणपति

का मंदिर था । उस मंदिर में जाकर मैंने नारियल चढ़ाया, प्रसाद बांटा । उस दिन अंगार की चतुर्थी थी इसीलिए उपवास का भी उत्साह था । लांझी जाने के लिए बस नहीं मिल रही थी । वालुज के केंद्र से साथ-आठ महिलाएँ भी लांझी जाने के लिए बस का इंतज़ार कर रही थीं । हमने सोचा परीक्षा का समय है, देर नहीं होना चाहिए इसीलिए हमने एक टेम्पो बुलाया ताकि हम समय से परीक्षा केंद्र पर पहुँच सकें । हम लोग उस टेम्पो से लांझी जा रहे थे । रास्ते में बजाज कंपनी के गेट के पास उस टेम्पो का एक पहिया निकल गया । जितने भी लोग टेम्पो में बैठे थे सब घबरा गए । किसी को कोई चोट नहीं आयी भगवान की कृपा से मुझ पर आने वाला यह संकट टल गया था, लेकिन उस हादसे के कारण दिन भर मेरा मन अशांत रहा । मैं यही सोच रही थी कि आज हमारा क्या हुआ होता ? हम परीक्षा लेने के जगह किसी दवाखाने में पड़े होते । दुश्मनों को भी **ऐसी** नौबत कभी न आये ।

चौथी कक्षा की परीक्षाएं संपन्न हो चुकी थीं । उसके बाद पाँचवी व छठी कक्षाओं की परीक्षाएं प्रारंभ हुईं । जल्दी से परीक्षाएं संपन्न करवाके उत्तर पुस्तिकाओं की जाँच करना और तीस अप्रैल तक परीक्षा परिणाम घोषित कर देने की तैयारी थी । गर्मियों के दिन थे, स्कूल में पानी की व्यवस्था नहीं थी । इन सब मुश्किलों का सामना करते हुए हम लोगों ने तीस अप्रैल तक कक्षा छह तक के परिणाम तैयार करके घोषित कर दिए । मेरी चौथी कक्षा के सभी सत्रह विद्यार्थी उत्तीर्ण हो गए थे ।बोर्ड के घोषित परिणामों को देखकर हमें बहुत ख़ुशी हुई । दोपहर बारह बजे हम स्कूल बंद करके घर की ओर निकले । मेरे साथ में मेरे स्कूल के सर और कपिलाबाई जी थीं । मेरे सर को बस के अलावा दूसरे सार्वजनिक परिवहन के वाहनों से नफरत थी।वे हमेशा कहते थे चाहे भले ही देर क्यों न हो जाए लेकिन कभी कभी बस के अलावा दुसरे वाहनों में नहीं बैठना चाहिए। वे यह कह ही रहे थे की उन्हें गंगापुर जाने के लिए बस मिलीऔर चले गए । मैं और कपिलाबाई दोनों चौक पर ही बैठे रहे । कुछ समय बाद रामराईवाडी केलालनूर सर आए

और वे भी हमारे साथ बैठ गए । कुछ समय बाद दो बसें आयीं लेकिन वे एक दम भरी हुई थी इसीलिए वे वहाँ रुकी नहीं ।

थोड़ी देर बाद एक टेम्पो आया उसमे हम लोग बैठ गए । लेकिन मेरा मन टेम्पो की सवारी को लेकर घबरा ही रहा था । क्योंकि मेरे घर वाले और स्कूल के सातरकर सर हमेशा टेम्पो की सवारी को लेकर सतर्क करते रहते थे । वे कहते थे कि- सुरक्षित घर पहुँचना, जल्दी घर पहुँच ने से ज्यादा जरुरी है । मेरे मकान मालिक भी मुझे हमेशा इस बात के लिए सचेत करते रहते थे कि- बेटी कभी जल्दबाजी मत करना ।आराम से सुरक्षित घर पहुँचना। घर की चिंता मत करना । टेम्पो में बैठे-बैठे मुझे यह सारी बातें याद आ रही थीं । रास्ते में वालुज आ गया और मेरी सहयोगी शिक्षिका कपिलाबाई वहीं उतर गयी और हम औरंगाबाद की ओर बढ़ चले । रास्ते में पंढरपुर के आगे एक पुलिया पर एक अज्ञात आदमी ने टेम्पो वाले को इशारा किया कि आगे आर.टी.ओ. वाले जाँच के लिए खड़े हैं। यह इशारा पाते ही टेम्पो वाले ने अचानक से टेम्पो पीछे मोड़ना चाहा । जब टेम्पो वाला टेम्पो मोड़ रहा था, तभी एक भयंकर दुर्घटना घटी।आगे से आते हुए एक ट्रक ने टेम्पो को टक्कर मार दी जिससे टेम्पो पलट गया। इस दुर्घटना में मेरे पैर की हड्डी टूट गयी । जिस प्रकार हम सूखी लकड़ी की तोड़ देते हैं, वैसे ही मेरा पैर टूट चुका था । मैं बिलकुल अपंग हो गयी थी ।

मैं अपने वनवास और कष्टों से भरे जीवन को किसी तरीके से जूझते हुए जी रही थी । इसी बीच इस दुर्घटना ने मुझे जिंदगी भर के लिए अकर्मण्य बना दिया था । हे भगवान- ऐसा बुरा वक्त मेरे दुश्मनों का भी न आये ।

दुर्घटना के बाद मैं बेहोश हो गयी । किसी ने मुझे दुर्घटना स्थल से उठाकर पास के एक बरगद के पेड़ की छाँव में बिठाया । मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा था । जैसा की ऐसी

दुर्घटनाओं में अक्सर होता है कि किसी को किसी की सुध नहीं होती है । संसार में सभी सुख के साथी होते हैं, दुःख में साथ देने वाला कोई नहीं होता है । मेरा सौभाग्य था कि उस समय मेरे परिचित हालनार सर वहीं थे । उन्होंने मुझे उठाया और रिक्शे पर बिठाकर घर ले आये । उनके इस एहसान के लिए मैं जीवन भर उनकी कृतज्ञ रहूँगी । रिक्शा आँगन में आ गया । मैं रिक्शे से उतरकर घर की ओर जाने का सामर्थ्य मुझमें नहीं था ।आँगन में माँ और मेरे तीनों बेटे मेरा इंतज़ार कर रहे थे जैसे शाम को घोसले पर चिड़िया के बच्चे चिड़िया का इंतज़ार करते है । बच्चों को लग रहा था कि माँ शायद खाने के लिए कुछ ला रही है इसीलिए उसे आने में देर हो रही है । मकान मालिक को भी नहीं पता था कि मेरे साथ यह दुर्घटना हो चुकी है । जिसके कारण मैं अपंग हो गयी हूँ । वे भी मेरा इंतज़ार कर रहे थे । मैं चल नहीं सकती थी, इसीलिए रिक्शे में ही बैठी रही । मुझे इस हालत में देखकर सभी को झटका लगा ।

मेरी माँ, बच्चे मकान मालिक, उनकी पत्नी और दो बेटियों ने मुझे इस हालत में देखा तो वे दौड़कर मेरे पास आ गए । मुझसे बोला नहीं जा रहा था, इसके बावजूद मैंने उन्हें समझाने का प्रयास किया । सब लोग घबरा ना जायें इसलिए मैंने उनसे झूठ बोला कि मुझे पैरों में थोड़ी चोट लगी है । मैं घाटी से वापस आती हूँ, मेरे पति के आते ही उन्हें मेरे पास भेज देना । खुणे साहब ने मेरे मकान मालिक से कहा कि- चाचाइसके पैर की हड्डी टूटकर अलग हो गयी है ।यह सुनकर सब लोग घबरा गए । मेरा छोटा बेटा और बड़ा बेटा सतीश दोनों कहने लगें कि - तू हम से हमसे झूठ बोल रही थी कि तुझे नहीं पता कि तेरा पैर टूटा है । अगर तुम्हे नहीं पता होता तो तुम रिक्शे से उतर कर घर आती ना ! मेरी माँ और बच्चों के रोने का ठिकाना नहीं था वे खूब रो रहे थे । मैं उनको चुप कराने के लिए उनसे झूठ बोलकर उनको समझा रही थी । रिक्शे के आस-पास काफी भीड़ जुट गयी थी । वहाँ अफरा-तफरी का माहौल हो गया था । मेरी माँ जमीन पर पछाड़ें खा-खाकर गिर रही थी और अपना माथा पीट रही थी । मकान मालिक की

दोनों बेटियाँ मीरा और माला भी रो रहीं थीं । मेरे तीनों बेटे माँ-माँ कहते हुए वनवासी बच्चों की भाँति चिल्ला रहे थे, उन पर दु:खों का आसमान टूट पड़ा था ।

मुझे इस हालत में देखकर मेरे मकान मालिक ने अपने तीन नंबर की भाभी (ईशा चाची) को मेरे साथ रिक्शे में बिठाया और डॉ.पटवर्धन के दवाखाने ले गए । दवाखाने के बाहर से अंदर ले जाने के लिए वे तीन पहियों वाली साइकिल लेकर आये । मुझे उस पर बिठा कर दवाखाने के अंदर ले गए और मुझे भर्ती करा दिया । थोड़ी देर बाद मेरे मकान मालिक मेरे पति को दवाख़ाना लेकर आये । उनके साथ विष्णु सलामपुरे और इजाबाई भी थीं ।इजाबाई तो मुझे देखकर घबरा गयी थीं । आते ही मेरे पति ने मुझसे कहा कि- तुम हमेशा अपने ही मन की करती हो, मैंने हजार बार तुमसे कहा था कि टेम्पो की सवारी मत करो लेकिन तुमने कभी मेरी बात पर ध्यान ही नहीं दिया । आखिर जिस बात का डर था वही हो गया ।

मेरी दुर्घटना हुई है इस बात की सूचना किसी ने गाँव में दे दी । यह सुनते ही मेरी सास और बिरादरी की सारी महिलाएँ दौड़ते-चिल्लाते हुए अस्पताल आ गए । मेरी सास भी मेरी माँ की तरह ही बातें कहते हुए चिल्ला रही थीं । देखते ही देखते मेरे एक्सीडेंट की बात चारों ओर फ़ैल गयी । मेरे पति ने मेरे पिताजी को मेरे एक्सीडेंट की सूचना देने के लिए एक झूठा पत्र लिखा जिसमे उन्होंने लिखा कि - ‘हमने यहाँ (शहर में) जमीन खरीदी है । इसीलिए आप यह पत्र प्राप्त करते ही तुरंत हमारे घर चले आना ।’ पत्र को देखते ही पिताजी को कुछ अनहोनी की आशंका हुई इसीलिए वे पत्र को प्राप्त करते ही हमारे यहाँ क्या हुआ है यह जानने के लिए तुरंत हमारे घर आने के लिए रवाना हो गए ।मेरे मायके में दो मई को मेरे दादाजी का श्राद्ध था इसीलिए मैं वहाँ जाने वाली थी । वहाँ सभी लोग मेरी राह देख रहे थे लेकिन यहाँ तीस तारीख को मेरे साथ यह दुर्घटना घट गयी । इस बात की जानकारी मेरे मायके में किसी को नहीं थी ।

बुधवार को पाथर्डी के बाजार में मेरे एक्सीडेंट की सूचना मिलते ही मामा सखाराम, चचेरे भाई संजेराव, गुरुजी साहेबराव ये सब लोग मुझे देखने अस्पताल आ गए।

मुझे अस्पताल में भर्ती करते समय ही सलाइन लगायी गई थी, मै उसी के नशे में शांत पड़ी थी । इस बीच अस्पताल में मुझे देखने आने वालों की भीड़ बढ़ गयी थी ।

एक मई को स्कूल में महाराष्ट्र दिवस कीसजावट करनी थी और उसी दिन रिजल्ट जारी होना था ।सारे शिक्षक, शिक्षिका रविवार 1 मई के लिए 6:30 बजे की गाड़ी से जाने के लिए तैयार थे ।इसलिए वे सब स्टैंड पर आ चुके थे ! इनके साथ मैं नहीं मेरा इंतजार कर रहे थे।उनको मेरे एक्सीडेंट के बारे में कुछ पता नहीं था। मेरे पति ने मेरी एक्सीडेंट की सूचना को ‘मराठवाड़ा’ और ‘लोकमत’ समाचार पत्रिकाओं में छपवाया था । वह समाचार शहाणे बाई के पति ने पढ़कर केंद्र तक पहुंचाया था लेकिन शिक्षकों को उस समाचार पत्र की खबर पर विश्वास ही नहीं हो रहा था । वे कह रहे थे कि- नहीं ऐसा नहीं हो सकता । उस दिन हमारी उनसे बात हुई थी । हम सब मिलकर एक ही बस से गये थे । फिर यह सब थी, मेरे मित्र साथी शिक्षक अचानक से कैसे हो गया ।’ सब जगह ऐसी ही चर्चाएं चल रहीं थीं ।

स्कूल में रिजल्ट घोषित करने और महाराष्ट्र दिवस का कार्यक्रम संपन्न करने बाद स्कूल के सभी शिक्षक मेरे घर आ गए । जब भी कोई आगंतुक मुझे देखने घर आता था, तो उन्हें देखकर मेरी माँ उनके सामने फूट-फूटकर अपना दुखड़ा रोती थी । वे लोग मुझे देखने डॉ. पटवर्धन के दवाखाने में आये । वे मुझे दवाखाने में भर्ती देखकर आश्चर्यचकित हुए । जब उन्होंने स्वयं अपनी आँखों से मेरी हालत देखी तब जाकर उनको विश्वास हुआ कि मुझे इतनी गहरी चोट आई है । ये दुर्घटना कैसे हुई ? इस संबंध में उन लोगों से काफी देर तक बातें हुईं ।

मेरे एक्सीडेंट से मेरे तीनों बेटे बहुत ज्यादा डर गए थे । वे हमेशा रोते रहते थे । जिस दिन मैं अस्पताल में इलाज के लिए गयी थी, उस शाम माँ ने बच्चों को खाने के लिए बुलाया मगर मेरा छोटा बेटा संदीप खाना नहीं खा रहा था । उसकी निगाह रास्ते पर आते-जाते बसों पर ही थी, क्योंकि मैंने जाते हुए उससे कहा था कि- बेटा रोना नहीं मैं रात में वापस आ जाउंगी । तब से वह मेरे आने के इंतज़ार में आशा भरी निगाहों से मेरी बाट जोह रहा था । वह अपनी नानी से कह रहा था कि रात में मेरी माँ आयेंगी, उनके आने के बाद ही मैं खाना खाऊंगा । माँ आने का मैं इंतज़ार करूँगा । छोटे बेटे की इस तरह की बातें सुनकर माँ, मकान मालिक और दोनों बेटे रोने लगे । आखिर में रोते-रोते मेरे तीनो बेटे अपने नानी की गोद में सो गए ।

रविवार को सुबह नौ बजे मेरे तीनों बच्चे अपनी नानी के साथ और मकान मालिक तथा उनकी दोनों बेटियाँ मुझे देखने अस्पताल आए । डॉक्टर के कहने के अनुसार दो मई दिन सोमवार को मेरे पैर का ऑपरेशन होना तय हुआ । मेरी तबियत दुर्घटना के पहले से ही ठीक नहीं थी । इसीलिए मैंने दुर्घटना के एक दिन पहले, शुक्रवार से ही भोजन नहीं किया था । अब तो पानी का घूंट तक गले से नीचे नहीं उतरता था । अब मेरी जिंदगी का कोई भरोसा नहीं था । मेरी आँखों के सामने मेरे बच्चों का भविष्य घूम रहा था । मैं स्वयं को उनका गुनहगार मान रही थी, जो उन्हें जन्म देकर अब उन्हें अकेले वनवास भुगतने के लिए छोड़कर जा रही थी । मुझे मेरे पैरों की कोई चिंता नहीं थी । मुझे बस अपने बच्चों के भविष्य की फ़िक्र थी । मेरे पति भी मेरी हालत को देखकर बहुत घबरा गए थे । उन्हें कुछ समझ में नहीं आ रहा था । हमने मार्च-अप्रैल में गाँव में नया घर बनवाया था । एक महीने बाद हम लोग उस नए घर में गृह-प्रवेश करने वाले थे । यह बात मेरे शहर के मकान मालिक को भी पता थी इसीलिए उन्होंने २९ अप्रैल को हमारे पूरे परिवार को भोज दिया था । दो-चार दिन में मैं अपने नए घर में जाने वाली थी । लेकिन शायद ईश्वर की यही मर्जी थी जो मेरे साथ यह दुर्घटना हुई ।

सोमवार की सुबह मेरा ऑपरेशन होना था इसीलिए गाँव से पचास-साठ लोग तथा खंडेवाडी के कुछ रिश्तेदार भी मुझे देखने अस्पताल आये थे । इतने सारे लोगों के आ जाने के कारण अस्पताल में भीड़ बहुत ज्यादा हो गयी थी । जिस दिन मेरा ऑपरेशन होना था उस दिन मुझे सुबह से ही बहुत तेज बुखार था, जिस कारण मेरा ऑपरेशन पूर्वनिर्धारित समय पर नही हो सका । मुझे बुखार होने के कारण डॉक्टर मेरा ऑपरेशन करने को तैयार नहीं हो रहे थे । दोपहर के तीन बज रहे थे जब डॉक्टर मुझे ऑपरेशन थिएटर में ले जाने की तैयारी कर रहे थे । तभी मेरी माँ मेरे तीनों बच्चों के साथ मुझे देखने आई । मेरा बड़ा सतीश अपने हाथ में अपना प्रगति पत्र लेकर आया था । वह तीसरी कक्षा पास हो चुका था और उसने अपनी कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया था । वह बहुत खुश था लेकिन जब उसने मुझे इस हालत में देखा तो उसकी सारी ख़ुशी हवा हो गयी और उसकी आँखों के सामने घना अँधेरा छा गया ।

मैंने उसके हाथ से उसका प्रगति पत्र अपने हाथों में लेकर उससे ख़ुशी से बात करने लगी । ताकि उसके मन को दुःख न पहुँचे और उसकी ख़ुशी ख़राब न हो । उसकी ख़ुशी बढ़े इसीलिए उससे मैं हँस कर बात कर रही थी । हम माँ-बेटे का यह संवाद मेरे पति, बड़े नंदोई धर्मा, माँ, सास यह सब लोग देख रहे थे । हमें देखकर उनका दिल भर आया और उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी । मेरा छोटा बेटा संदीप मुझसे कह रहा था कि- माँ, तू घर कब आएगी ? तुम्हारे बिना घर पर हमारा मन नहीं लग रहा है । तुम घर चलो न । घर पर चलकर तुम अपने पलंग पर सो जाना । अपने बेटे की ऐसी भावुक बातें सुनकर मेरा गला भी रुंध गया था । मेरे मुँह से आवाज़ बाहर नहीं निकल रही थी । लेकिन फिर भी मैंने खुदको संभाला, क्योंकि मुझे पता था की बेटे के सामने रोना सही नहीं है । उन्हें अपने इस दुःख में शामिल करना उचित नहीं था । मैंने बेटे के हाथ में पैसे देकर उसके पीठ पर हाथ फेरकर उसे अस्पताल

से बाहर जाने को कहा । यह कहकर मैंने लम्बी साँस लेते हुए ईश्वर से प्रार्थना की कि- अब मुझे इस मुश्किल घड़ी से बाहर निकालना तुम्हारे हाथ में है। मुझ पर कृपा करो ।

तीन बजे चुके थे । अस्पताल का सारा वातावरण मुझे बहुत भयानक लग रहा था । मुझे अब ऑपरेशन थिएटर के अंदर ले जा रहे थे, तभी मेरे पति के ऑफिस के लोग मुझे देखने आए । उनको देखकर मुझे बहुत शर्म आ रही थी । मेरे पति के ऑफिस के देवरे सर ने मुझे सांत्वना दी । ऑपरेशन होने तक सभी लोग भूखे पेट अस्पताल में ही बैठे रहे ।ऑपरेशन के दौरान बेहोश कर देने के कारण शाम के तीन बजे से छह बजे तक क्या हुआ मुझे कुछ पता नहीं था । छह बजे मुझे ऑपरेशन थिएटर से निकाल कर बिस्तर पर लिटाया गया । अब मुझे थोड़ा-थोड़ा होश आ गया था । मुझे इस बात की ख़ुशी थी की अब मेरी मृत्यु टल गयी है और अब मेरे बेटों से मुझे कोई दूर नहीं कर सकता ।

मैं अपने पति से कह रही थी कि- मुझे देखने आये लोग सुबह से भूखे हैं, उनसे कह दो कि मेरा ऑपरेशन सफल हो गया है । अब वे मेरी चिंता न करें और घर वापस चले जायें । यह कहते हुए मेरा गला भर आया ।

इस घटना से मेरे बचपन की यादें ताजा हो गयीं । मेरी इस दुर्घटना के कारण दो परिवारों (मेरे मायके और ससुराल) में अशांति छायी हुई थी ।

चार-पाँच दिनों बाद जब पिताजी मेरे घर आये तो उन्होंने देखा कि पत्र में लिखी गयी बातें झूठी थीं, यहाँ मामला ही कुछ और था । मेरे एक्सीडेंट की बात सुनकर पिताजी को बहुत आश्चर्य हुआ । वे कहने लगे- हे भगवान, यह सब कैसे हो गया ? तूने मुझे एक ही चिड़िया जैसी बेटी दी है और अब उसकी की इतनी कठिन परीक्षा क्यों ले रहा है । इस तरह कहते हुए

पिताजी रोते हुएघर से सीधे अस्पताल आ गए । मुझे देखकर उनके आँसू थम ही नहीं रहे थे । मैं उन्हें ढाढ़स बंधाने का प्रयास कर रही थी कि- ‘पिताजी आप चिंता मत करिए, मैं आठ दिनों में ठीक होकर घर वापस आ जाऊंगी । मेरे पैर टूटा नहीं है, बस हड्डी पर थोड़ी सी चोट लगी है ।’ मैं पिताजी के सामने अपना दुःख उजागर करना नहीं चाहती थी जिससे उनका दुःख और बढ़ जाए । मैंने उन्हें भरोसा दिलाया कि- मैं अब बिलकुल ठीक हूँ । मेरे ऊपर आने वाला बहुत बड़ा संकट, भगवान की कृपा से इस छोटे एक्सीडेंट के रूप में आकर उस बड़े संकट से हमें बचा गया । मैं पिताजी को समझाते हुए कह रही थी कि- मैंने जीवन में इतनी अधिक परेशानियों का सामना किया है कि अब इन छोटी-छोटी परेशानियों के सामने मैं हिम्मत हारने वाली नहीं हूँ । इतना सब कुछ समझाने के बाद भी पिताजी मेरे लिए परेशान थे । वे दुलार से मेरे सर सहला रहे थे । माँ-बाप की ममता ही निराली होती है ।इस प्रेम का सारे संसार में कोई जोड़ नहीं होता है । पिताजी अपने बचपन के कष्ट भरे दिनों को याद करके रोते हुए कह रहे थे कि- तू नौकरी के लिए अपने बच्चों को सड़क पर ला देगी क्या ? मेरी सास पहले से ही वहाँ बैठी हुई ही वह मुझे छोड़कर कहीं नहीं गयी थी ।

मुझे हमेशा लगता था कि मेरे अब तक के सारे सपने साकार हो गये हैं लेकिन बीच में यह इतना बड़ा संकट आ पड़ा । इस दुर्घटना में अगर मुझे कुछ हो गया होता तो मेरे इन तीन बच्चों का जीवन नरक हो जाता । वे माँ के प्रेम से वंचित हो जाते । मेरे अलावा उन्हें प्रेम करने वाला और उनकी आँखों के आँसू पोंछने वाला आखिर कौन था ? उनके जीवन से दुःख के काले बादल कभी नहीं छंटते । लोगों की भीख से किसी के प्रेम की झोली भला कभी भर सकती है ?

अबजब मैं ठीक थी, मुझे लोगों की बहुत सारी बातें सुनने में आती थीं कि- ओमकार से कहेंगे कि बहुत बीवी की तनख्वाह पर जी रहा था । अब जब बीवी की तनख्वाह नहीं है तो बच्चों को संभालने की भी हैसियत नहीं है ।संभालने के नाम पर बच्चों को दर-दर की ठोकरें खिलवाएगा ।

अस्पताल में आये मुझे बारह दिन हो चुके थे । अस्पताल में डॉक्टर का बिल भुगतान करने के बाद मुझे डिस्चार्ज कराके घर लाया गया । जिस दिन मुझे हर लाया गया उस दिन ११ तारीख थी । मुझे घर में देखकर बच्चों को बहुत ख़ुशी हुई । छोटा बेटा संदीप दौड़ते हुए मेरे पास आया । तीनों बच्चे माँ आयी है, माँ आयी है कहते हुए ख़ुशी के मारे नाच रहे थे । जिस तरह चातक पक्षी को बारिश (स्वाति नक्षत्र) की पहली बूँद में आनंद की अनुभूति होती है, उसी तरह मेरे बच्चें भी प्रसन्न थे और उनके चहरे गुलाब की फूलों की तरह खिल गए थे ।

मैं घर में पलंग पर लेटी रहती थी । बच्चे मेरे आस-पास खेलते रहते थे । कहीं बच्चे खेलते हुए मेरे ऊपर न गिर पड़ें, इस डर से मैं उन्हें अपने पास नहीं आने देती थी । बच्चे दूर से ही मुझसे बातें करते थे ।

जब तक मैं अस्पताल में थी मेरा सारा ध्यान घर पर ही लगा था । मेरी हालत ऐसी थी की मैं कुछ भी करने में सक्षम नहीं थी । घर पर खाने-पीने में मेरी सहायता मेरे बच्चे करते थे । वे तीनों एक-एक कर अपने हाथों से मुझे खाना खिलाते थे और मैं अपने हाथों से निवाला बनाकर उन्हें खिलाती थी । एक महीने तक यही चर्या चलती रही ।

डॉक्टर ने मुझे दो पैरों के स्टैंड के सहारे चलने की इजाजत दे दी थी मगर स्टैंड के सहारे चलना नहीं हो पा रहा था । ऑपरेशन के दो महीने बाद मै रोज सुबह पाँच बजे उठकर स्टैंड के सहारे चलने का अभ्यास करती थी । इस कार्य में मेरे पति मेरी सहायता करते थे । ऑपरेशन

होने के कारण पैरों में चप्पल पहनना संभव नहीं था । बारिश के कारण रास्ते में छोटे-छोटे कंकड़ निकल आये थे जो मेरे पैरों में सुई की तरह चुभते थे,इसके बावजूद मैं नित्य चलने का अभ्यास करती थी । सुबह जल्दी उठकर चलने का अभ्यास करने का कारण यह था कि, पहले मैं दौड़-भाग वाले काम करती थी और अब स्थिति यह थी कि मैं बिना बैसाखी की सहायता के चल भी नहीं पाती थी ।इस बात की मुझे बहुत शर्म आती थी। मेरे पति को मेरी वजह से बहुत ज्यादा कष्ट झेलन पड़ रहे थे ।

जून महीने में स्कूल का नया सत्र प्रारंभ हुआ । सत्र प्रारंभ होने से पहले ही हमारे खानदान के सारे लोग मिलकर गए थे। इस बार मैं स्कूल जाने में सक्षम नहीं थी । शिवराई के स्कूल में जाना तो मेरे लिए बिलकुल ही असंभव था । मैंने जून-जुलाई माह की छुटियाँ स्कूल से ले ली थी ।

एक अगस्त को मैं डेपुटेशन के सिलसिले में छावनी के स्कूल में हाज़िर हुई थी । छावनी का यह स्कूल लड़कियों का स्कूल था । अभी तक वहीं पर ही कार्यरत हूँ । मैं बिना बैसाखियों की सहायता के चल नहीं सकती थी । बैसाखियों के सहारे ही मैं छः माह तक स्कूल गयी । प्रत्येक कक्षा में जाने के लिए मुझे बैसाखियों का सहारा लेना पड़ता था । ऐसा करने में मुझे बहुत शर्म आती थी । इसी शर्म के कारण मैं रास्ते में चलते समय कभी ऊपर नहीं देखती थी । घर से स्कूल जाने क लिए जब मैं तैयार होती तो मेरे बच्चे मुझे तैयार होने में सहायता करते थे । कोई स्टैंड (बैसाखी) लाकर हाथ में देता था, कोई चप्पल,तो कोई पर्स लेकर खड़ा होताथा और जब तक कि मैं उनकी आँखों से ओझल न हो जाऊं तब तक वे मुझे देखते ही रहते थे । मेरी अवस्था देखकर स्कूल के सारे शिक्षक और बच्चे मेरा बहुत ख़याल रखते थे ।स्कूल के हेडमास्टर

और जादव सर कभी मुझे ज्यादा काम नहीं देते थे । कुल मिलाकर स्कूल के सारे स्टाफ का व्यवहार मेरे प्रति बहुत ही अच्छा था ।

अभी भी मेरे पैरों में रॉड पड़ी हुई है । उसी रॉड के आधार पर मैं चलने में सक्षम हो पा रही हूँ । जिस समय मेरा एक्सीडेंट हुआ था उस समय हमारी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी । उस विपत्ति के समय में रामू मामा और देवा भाई ने हमारी बहुत मदद की थी । उन्होंने हमें पैसे की दिक्कत कभी नहीं होने दी । वे हमेशा हमें अपने स्वास्थ्य की बेहतर देखभाल केलिए प्रेरित करते रहते थे । इस एक्सीडेंट के बाद मेरा पुनर्जन्म हुआ था । रामू मामा ने अपनी बेटी के समान मेरी देखभाल की थी । मेरे दु:खों पर सुख की फुहारें उनके ही कारण पड़ीं थीं । उनके इस एहसान के लिए मैं जीवन भर उनकी कृतज्ञ रहूँगी ।

मेरे पति जब छोटे थे तभी मेरे ससुर की मृत्यु हो गयी थी । उनका क्रिया-कर्म नासिक के पास की नदी के किनारे बने एक रेलवे पुल के पास किया गया था । मेरे मन में इच्छा हुई कि मेरे ससुर तो जीवित नहीं है तो कम से कम मैं उस मिट्टी के ही दर्शन कर लूँ जहाँ उनका अंतिम संस्कार किया गया था । परिवार में इस ओर कभी किसी का ध्यान ही नहीं गया था । काफी दिनों से मैं यह सोच रही थी । अंतत: वह दिन आ ही गया जब हम दोनों (पति-पत्नी) नासिक गए । परंतु वहाँ एक नयी समस्या खड़ी हो गयी- जिस स्थान पर मेरे ससुर का अंतिम संस्कार किया गया था, मेरे पति को वह स्थान ही विस्मृत हो गया । उनको वहाँ पर सब कुछ बदला-बदला लग रहा था । उस जगह के आस-पास के बाग़ वालों से पूछताछ करते हुए हम पास के गोपालों के डेरे पर पहुँच गए । वहाँ जाकर पता चला कि वे हमारे ही दूर के सगे-संबंधी थे और उन्हें पता था कि मेरे ससुर का अंतिम संस्कार किस जगह पर किया गया था ।

जब हम उनके डेरे पर पहुँचे तो वहाँ कोई दिख नहीं रहा था । वहाँ केवल एक आठ दिन की सूतिका और दस-बारह वर्ष का एक लड़का था । वे दोनों हमें देखकर घबरा गए । वह सूतिका झोपड़ी में छुप गयी । लड़का भी आश्चर्यचकित था । डेरे का कुत्ता हम पर भौंक रहा था । वह बच्चा उस कुते को चुप भी नहीं करा रहा था ।

वे इस बात से आश्चर्यचकित थे कि अचानक से यह कौन स्त्री-पुरुष हमारे डेरे पर आ गए हैं । उनको यह लग रहा था कि हम दोनों (पति-पत्नी) साथ में आये हैं इसका मतलब कुछ न कुछ गड़बड़ है । उन्हें लग रहा था कि अब हमारी खैर नहीं । अब हम उन पर झूठे इल्जाम लगाकर उनके घर की तलाशी लेंगे । उन्होंने हमें वहाँ से भगाने का प्रयास किया; परंतु हमें यह सारा माजरा समझ में आ गया था ।

मेरे पति आगे आये और उन्होंने उनको समझाने का प्रयास करते हुए कहा कि- हम भी गोपाल ही हैं । हमे पता चला है कि यहाँ गोपाल रहते हैं इसीलिए हम यहाँ आये हैं ।

यहाँ रहने वाले लालमन नाम के गोपाल मेरे चाचा हैं । यहाँ मेरे पिताजी की समाधि है । उनका नाम ओंकार था । वह समाधि कहाँ है यह मुझे नहीं पता है । इसीलिए मैं लालमन चाचा से उस समाधि के बारे में पता करने के लिए आया हूँ । यह सुनकर उस महिला ने झोपड़ी के किनारे एक फटी चादर बिछाकर हमें बैठने के लिए कहा । उस महिला ने हमें पीने के लिए पानी भी दिया । डेरे पर जो लड़का था वह पास के बगायतदार के खेत में काम कर रहे डेरे के सभी लोगों को बुला लाया । उन लोगों ने हमें पहचानते ही गले से लगा लिया । वे कहने लगे 'बेटा तुम्हारी पिताजी की मृत्यु के बाद कभी हमारी मुलाकात नहीं हुई ।' उन्हें हमसे मिलकर बहुत ख़ुशी हुई । उन्होंने हमें चाय-पानी करवाया ।उसके बाद वे गोपाल हमें पिताजी की समाधि दिखाने ले गए ।

जिस तरह हम खेतों से चलते हुए डेरे पर पहुँचे थे, उसी प्रकार हम खेतों से होकर समाधि ढूँढने के लिए निकले । समाधि के पास पहुँचकर हमने देखा कि समाधि के पास चार-पाँच सिन्दूर लगाए हुए पत्थर थे । उनमें से कौन सा पत्थर मेरे ससुर का है यह उन्हें भी समझ नहीं आ रहा था । आखिर में किसी तरह उन लोगों ने एक पत्थर को बताया की यह तुम्हारे ससुर की समाधि है ।उनमें से रामचंद्र गायकवाड़ नाम का एक गोपाल जोर से चिल्लाया- 'अरे ओंकार, उठ ना, देख कौन आया है, तेरा बड़ा बेटा और उसकी पत्नी तुझसे मिलने और बात करने आए हैं । उठ ना ओंकार उठ बात कर उन से ।' वह गोपाल जोर से चिल्लाते हुए उस समाधि के पास बैठ गया । यह सारा मंजर मैं चुप-चाप देख रही थी । मैं यह जानती थी कि मिट्टी में मिला हुआ शरीर बात नहीं कर सकता और न ही देख सकता है । परंतु उस गोपाल की बातों से मेरा मन भर आया और मेरी आँखों से आंसुओं की धार बहने लगी । यह सब देखकर मेरी पुरानी स्मृतियाँ चैतन्य हो रहीं थीं ।गोपालों की जहाँ मृत्यु होती थी, उनका वहीं अंतिम-संस्कार कर दिया जाता था । समाज को उनकी कोई परवाह नहीं होती थी । उस समय मुझे अपने दादाजी की मृत्यु का स्मरण हो आया ।

तृतीय अध्याय :- अनूदित पाठ का विश्लेषण

3.1 आत्मकथा का महत्व

3.2 सामाजिक स्तर पर शोषण

3.3 धार्मिक स्तर पर शोषण

3.4 आर्थिक समस्या

3.5 असमानता की समस्या

3.6 स्त्री के प्रति तुच्छ भाव

3.7 भाषा शैली

अनूदित पाठ का विश्लेषण

आदिवासी साहित्य सन् 1960 से लिखित रूप में आगे आ रहा है । आदिवासी साहित्य की मौखिक परंपरा हजारों वर्षों से चली आ रही है । इस आधुनिक युग में भी आदिवासी समाज अत्यंत भयानक जीवन जी रहा है । इसलिए उनके जीवन का यथार्थ चित्रण करते हुए आदिवासी लेखक अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से उस भयावहता को जनता के सामने लाने का प्रयास कर रहे हैं । इसलिए आत्मकथाओं को जानना अत्यंत आवश्यक है ।

मराठी आदिवासी साहित्य में अनेक आत्मकथाएँलिखी गई हैं, उनमें बाबूराव मडावी की 'आकांत' (1997),नंजूबाई गावीत की 'तृष्णा' (1999), संतोष पवार की 'चोरटा' (2007) आदि तीन आत्मकथाएँ मराठी साहित्य में महत्वपूर्ण मानी जाती हैं । आदिवासी, दलिततथा घुमन्तू जनजातियों में परिवर्तन लाने का कार्य पहले आत्मकथाकार बाबूराम मडावी नेकिया है । आदिवासी रचनाकार जनाबाई गिरहे लेखन कार्य के अलावा समाज सुधारक के रूप में भी कार्यरत हैं । जनाबाई गिरहे आदिवासी समाज सुधारक के रूप में जानी जाती हैं । इन्होंनेघुमन्तू जनजाति के समाज को जागृत करने का बहुत प्रयास किया है । इन्होंने कई साहित्यिक कृतियों जैसेकहानी संग्रह, कविता संग्रह आदि का लेखन किया है । इनकी आत्मकथा 'मरणकला' महत्वपूर्ण मानी जाती है । मरणकला का हिंदी पर्याय मृत्युवेदना, मृत्युयातना आदि ।इस आत्मकथा में उन्होंने घुमन्तू जनजातियों की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है ।

3.1 आत्मकथा का महत्व

घुमन्तू जनजाति का साहित्य दलित साहित्य का ही स्त्रोत है । समाज व्यवस्था में घुमन्तू जनजाति उपेक्षित रही है, इसलिए वह मानव सभ्यता के विकास क्रम में पिछड़ गई । महाराष्ट्र

की घुमन्तू जनजाति सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि स्थानों पर अन्य जातियों की तुलना में बहुत निचले स्तर पर है । यह जनजाति पशु पक्षियों का शिकार करके अपना जीवन चलाती है जंगलों में शिकार करना, फल भोज कर जीवन बिताना और इसके अलावा इनका कोई ध्येय नहीं है । जनाबाई गिरहें द्वारा लिखी गई आत्मकथा "मरणकला" मेरे प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध का आधार ग्रंथ है। इसका अनुवाद और विश्लेषण करना ही मेरा अभिप्रेत रहा है । जनाबाई गिरहे की आत्मकथा महाराष्ट्र की घुमन्तू जनजाति की जीवन शैली एवं खास कर घुमन्तू जनजातियों में स्त्री की दयनीय स्थिति पर रची गई एक महत्वपूर्ण रचना है । जनाबाई गिरहे ने इस आत्मकथा में घुमन्तू जनजाति के समाज का विस्तृत रूप में वर्णन किया है । जैसे आदिवासी समाज का रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पान, पर्व-त्यौहार, परंपरागत रूप से चले आ रहेअंधविश्वास का विस्तृत वर्णन इन्होंने अपनी आत्मकथा के जरिए प्रस्तुत किया है।

3.2 सामाजिक स्तर पर शोषण

सामाजिक तौर पर आदिवासियों का शोषण होना कोई नई बात नहीं है । मनुष्य-मनुष्य में भेद करना, मनुष्य को जानवरों से भी तुच्छ समझना उन्हें सार्वजनिक कुओं से पानी ना भरने देना आदि सब आदिवासियों की वास्तविक स्थितियां हैं । 'मरणकला' इस आत्मकथा में लेखिका ने अपने बाल्यकाल में उन्हें और उनके बिरादरी के समाज को तथाकथित उच्च वर्गों के लोगों ने किस तरह तुच्छ नजर से देखा है,इस आत्मकथा के जरिए उन्होंने अपना अनुभव व्यक्त किया है । अपने स्कूली शिक्षा के शुरुआती दौर में पहली कक्षा में जब उन्होंने प्रवेश किया तो उनको कक्षा की अंतिम पंक्ति में बैठाया गया और उच्च वर्गों के छात्रों को आगे की पंक्तियों में बिठाया गया।एक बार गलती से उन्हें आगे पंक्ति में बैठने पर उच्च वर्गों के छात्रों के माता-पिताओं ने अध्यापक के साथ और लेखिका के साथ दुर्व्यवहार करते हुए कहा है कि अगर तुम इस लड़की

को इसी कक्षा में हमारे बच्चों के साथ बिठा ओगे तो हम हमारे बच्चों को स्कूल नहीं भेजेंगे । इसी तरह पाथर्डी नामक गाँव में एक शादी के दौरान गाँव के जमींदार के बेटी की शादी में गाँव के सभी लोगों को न्यौता मिला था और सब लोग आकर खाने लगे, लेकिन घुमन्तू समाज के लोगों को किसी ने नहीं बुलाया और वहां जाने पर खाने के लिए भी नहीं दिया गया तब जाकर कुछ बच्चे मिलकर फेंकी हुई थालियों के ढेर पर जाकर उसमें से चावल, बची हुई मिठाई सब निकाल कर एक थाली में इकट्ठा करने लगे । थाली एक तरफ कुत्ते खींच रहे थे तो दूसरी ओर उसी थाली को घुमन्तू समाज के बच्चे खींच रहे थे । बचा हुआ खाना उसी ढेर पर डाला जाता था, परंतु घुमन्तू समाज को खाने के लिए नहीं दिया जाता था ।

3.3 धार्मिक एवम् अंधश्रध्दा

धार्मिक एवं अंधश्रद्धाग्रस्त लोगों को झूठा भविष्य और इलाज के नाम पर लोगों से अनाज व पैसे वसूलने वाले यह लोग स्वयं धार्मिक एवं अन्याय ग्रस्त हैं । इस आत्मकथा में लेखिका ने एक दृश्य के जरिए इसे चित्रित किया है । बिरादरी के लोग एक बार एक गाँव से दूसरे गाँव जा रहे होते हैं, जाते समय रात हो जाती है इनके पास कुछ और सहारा नहीं था । एक गाँव के किनारे एक बड़ा पेड़ था उस पेड़ के नीचे उनको रात गुजारनी थी।उन्होंने जैसे ही अपना सारा सामान उस पेड़ के नीचे उतारा तभी गाँव से कुछ लोग आकर उनसे कहने लगे किइस पेड़ के नीचे मत रुकिए इस पेड़ के ऊपर एक भूत है, जो किसी को नहीं छोड़ेगा सबको मार डालेगा । बिरादरी के सभी लोग भूत को उतार देना कबूल करते हैं । लोगों पर चढ़े हुए भूत को उतारना और काले जादू के नाम पर लोगों से पैसे हड़पना भी इनका एक जीवन कार्य ही बन गया था।भीख मांग कर जीवन जीने वाले यह लोग हर साल अपने कुल देव को आषाढ़ महीने में

बकरे की बलि देते हैं ऐसे ना करने से देवी की अवकृपा होगी ऐसी इनकी अंधश्रद्धा है।घुमन्तू जीवन की असुरक्षा के कारण यह लोग अंधश्रद्धाग्रस्त बने हुए हैं ।

3.4 आर्थिक समस्याएँ

भारतीय परंपरागत सामाजिक व्यवस्था में सदियों से दलित जाति एवं जनजातियों पर सामाजिक शोषण के साथ-साथ आर्थिक निर्योग्यताएं थोपी गई हैं । घुमन्तू जनजातियों को खेती करने के लिए जमीन नहीं मिली और सिर्फ व्यापार के लिए पूंजी तथा मानसिक स्तर से योग्य नहीं हो पाए हैं । इसका कारण इन सब लोगों का लोगों का शिक्षा से वंचित रहना भी है । इस कारण से उन्हें नौकरी अभी नहीं मिल पाई है । दलित जीवन का दयनीय चित्रण हम इस आत्मकथा के जरिए देख सकते हैं । घुमन्तू लोगों को मजदूरी, शिकार भी आधी कभी-कभी मिलती तो कभी नहीं मिलती थी । इस कारण इनको भोजन करने के लिए भी ना जाने कितने आँगन पार करने होते थे। इसलिए यह लोग गाँव-गाँव वन-वन भटकते रहते हैं । किसी एक जगह पर तीन दिन से ज्यादा नहीं गुजारा कर सकते थे । क्योंकि तीन दिन से ज्यादा किसी भी गाँव में इन्हें खाने के लिए कोई नहीं देता था और काम करने के लिए इन्हें काम भी नहीं दिया जाता था क्योंकि इनको सब लोग चोरी करने वाले भी कहते थे । आत्मकथा में गाँव के एक पटेल के पास लेखिका के पिताजी काम मांगने जाते थे तब उस पटेल ने पिताजी को लालच दिखाकर उन्हें दो भैंसो को देता है और पिताजी उसकी देखभाल करने लगते हैं कुछ दिनों बाद पटेल कहते हैं कि चलो अब तुम्हारा कर्ज माफ हुआ है जा सकते हो । इस तरह इनका गलत फायदा भी बहुत लोगों ने अपने दोनों तरीकों से लिया है । यह स्पष्ट है कि घुमन्तू जनजाति की आर्थिक एवं जीवन की स्थिति बहुत दयनीय है, कभी माल मजदूरी करके, कभी भीख मांग कर तो कभी चोरी कर के पैसे कमाते थे इनका कोई व्यापार या काम नहीं रहा है।

3.5 शैक्षिक समस्याएँ

शिक्षा निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है । मानव सभ्यता के विकास में शिक्षा एक महत्वपूर्ण अंग है । शिक्षा से मनुष्य की सोच में परिवर्तन एवं विकास होता है । आदिकाल से ही दलित जाति एवं जनजातियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था । भारतीय समाज व्यवस्था में सिर्फ उच्च जाति वर्गों को ही शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था । घुमन्तू जनजाति इसी परंपरागत समाज व्यवस्था के बंधन और घुमन्तू जीवनयापन के कारण शिक्षा प्राप्ति से वंचित रह गई । हमारे संविधान में एस.टी और एस.सी के आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक आदि विकास के लिए विशेष प्रावधान रखे गए हैं । परंतु घुमन्तू जाति एवं जनजातियाँ इससे बहुत दूर रह गई हैं । इसलिए आजाद भारत में भी घुमन्तू जनजातियों का शैक्षिक स्तर पर विकास नहीं हो पाया है । घुमन्तू जनजातियों के समाज के लोग खराब आर्थिक स्थिति के कारण शिक्षा से दूर रहे हैं । इस आत्मकथा में लेखिका के पिताजी ने बेटी के भविष्य के लिए उनको अध्यापिका बनाने के लिए बेटी को स्कूल भेजने का निर्णय लिया था । लेकिन लेखिका का पढ़ाई में मन नहीं लगता था क्योंकि इनकी बिरादरी में कोई पढ़ा-लिखा नहीं था; खासकर महिलाएँ । अगर पुरुष भी होते तो केवल पढ़ने लायक ही कोई नौकरी-पेशे वाला नहीं था । जब लेखिका का पढ़ाई में मन लगने लगा तब वह पांचवी कक्षा में थी । तब बिरादरी के लोग बिरादरी की पंचायतों में उनके परिवार से सामाजिक बहिष्कार की माँग कर रहे थे, क्योंकि बिरादरी के लोगों का मानना था कि पढ़ाई करने से हमारे समाज की बदनामी होगी और खासकर बेटियों को पढ़ना भी नहीं चाहिए। पढने

से लड़की हाथ से निकल जाएगी ऐसा बिरादरी के लोगों का मानना था । इन सब लोगों का शैक्षिक जीवन से कोई अधिक संबंध नहीं था।इस बात को लेकर लेखिका ने अपनी आत्मकथा में अपने संघर्ष में शैक्षिक जीवन का अभूतपूर्व वर्णन किया है । घुमन्तू जनजातियों के लिए ही नहीं; अन्य जातियों के लिए भी प्रेरणादायक है, क्योंकि लेखिका ने अपने स्कूली जीवन में सुबह उठ कर भीख मांग कर पुनः स्कूल में पढ़ाई के लिए जाती थी उसके बाद स्कूल छोड़ने के बाद जानवरों को चराना पड़ता था इन कठिनाइयों का सामना करते हुए लेखिका ने पढ़ाई की, दसवीं तक आ गई अब शादी की उम्र हो चुकी थी । लेखिका शादी के बाद भी पढ़ना चाहती थी ससुराल वालों ने इस बात को नहीं नकारा उन्होंने लेखिका का बहुत साथ दिया, खासकर गिरहेजी (पति) ने उनका बहुत साथ दिया । लेखिका ने कभी हार नहीं मानी और अपनी बिरादरी के लोगों और अन्य समाज के लोगों को प्रेरणादायक बनने के लिए अंतर में अध्यापिका बनकर उनके सामने खड़ी थी ।

3.6 स्त्री के प्रति तुच्छ भावना

आज से नहीं आदिकाल से ही स्त्री समाज द्वारा शोषित है । उसकी स्थिति जानवर से भी बदतर है, इसका चित्रण घुमन्तू रचनाओं में अधिकतर मिलताहै । घुमन्तू जनजाति की अधिकतर स्त्रियाँ अशिक्षित ही होती हैं । घुमन्तू जनजातियों की स्त्री का उनकी बिरादरी में ही शोषण किया जाता है । हम इस आत्मकथा में देख सकते हैं किइस तरह स्कूल जाने के नाम पर लेखिका और उनकी माँ को एक नाजायज बेटी कहते हैं । बेटी के स्कूल जाने से रोकने पर बेटी की माँ को किस तरह पीटा जाता है, उसे कुछ ना समझ के बराबर ही देखा जाता है । उसे तुच्छ नजर से भी देखते हैं ।

लेखिका स्कूल के समय में पढाई के लिए उनके डेरों से दूर एक मैदान में पेड़ के नीचे बैठ कर पढ़ने लगती है एक लड़का जानवर चराते हुए उसके पास आता है । और पूछता है कि कुछ यहाँ पर और भी चक्कर है यहाँ पढाई के लिए आती है या कोई तुझे मिलने आता है ? सही बोल मैं किसी को कुछ नहीं बोलूँगा ! तब लड़की को उस पर संशय होता है उसकी नियत बदल जाती है । लड़की यह सब समझते ही वहाँ से अपनी किताबे लेकर निकल जाती है ।

इस तरह इस आत्माकथा में और भी कई घटनाएँ हैं, जो स्त्री जीवन पर समाज की तुच्छ व संदिग्ध नजर से देखने के कई सारे नज़ारे दिखाती है ।

3.7 भाषा शैली

अनुवाद करते समय भाषा का विशेष महत्व होता है । भाषा के प्रयोग में सबसे पहले उसकी संरचना महत्वपूर्ण होती है । लेखक अपनी मूल रचना में जिन शब्दों, वाक्यों का प्रयोग करता है उनके माध्यम से रचना का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक विवेचन किया जाता है ।

जनाबाई गिऱ्हे ने अपनी आत्मकथा 'मरणकला' में सरल एवं सहज भाषा शैली को अपनाया है । आत्मकथा की भाषा ऐसी है कि जिसे पाठक सरल रूप से समझ सकता है । लेखिका ने अपने अनुभव से घुमन्तु जनजाति को प्रचलित रूप से लिखा है । इसी स्थिति को लेखिका ने साहित्य के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया है । इस कृति में गाँवों में प्रचलित भाषा का अधिकतम प्रयोग किया है।

चतुर्थ अध्याय

अनुवाद का महत्व एवं अनुवाद की समस्याएँ

- **4.1 व्याकरण संबंधी समस्याएँ**
- **4.2 लिंगबद्ध समस्याएँ**
- **4.3 वचनबद्ध समस्याएँ**
- **4.4 कारकबद्ध समस्याएँ**
- **4.5 शब्दार्थ एवं अर्थ भिन्नता**
- **4.6 लिप्यांतरण की समस्याएँ**
- **4.7 वाक्यगत समस्याएँ**
- **4.8 सांस्कृतिक समस्याएँ**
- **4.9 मुहावरों का प्रयोग**

चतुर्थ अध्याय :- अनुवाद का महत्व एवं अनुवाद की समस्याएँ

आज के दौर में मानव जीवन के लिए अनुवाद की उपयोगिता अत्यधिक बढ़ गई है । सभी देशों की भाषा जनसामान्य तक पहुंचाने का एक ही माध्यम अनुवाद है । आज का मानव किसी भी देश काल और भाषा विशेष की रचना को अत्यल्प समय में पढ़ने का आकांक्षी हो गया है । इसलिए अनुवाद की जरूरत मनुष्य के ज्ञान की भूख के समानांतर बढ़ी है । अनुवाद को एक महत्वपूर्ण कर्म के रूप में स्वीकार किया जा रहा है । भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है ।

मराठी से हिंदी में अनुवाद करते समय अनुवादकको सामाजिक, धार्मिक संस्कृतिगत परिस्थिति को व्यक्त करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है । पाद टिप्पणियों के द्वारा विस्तार से भाव प्रकट करने पर भी कुछ कमी जरूर रह जाती है । विशेषकर साहित्य का अनुवाद करते समय । साहित्य की विधाओं में कविता, लघुकथा, कहानी, उपन्यास, एकांकी, नाटक, निबंध, आलोचना, रिपोर्ताज, डायरी लेखन, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, रेखाचित्र पुस्तक समीक्षा, साक्षात्कार आदि शामिल हैं । साहित्यिक कृतियों का अनुवाद सामान्य अनुवाद से उच्चतर माना जाता है । साहित्यिक अनुवाद कार्य के सभी रूप जैसे भावनाओं, सांस्कृतिक बारीकियों स्वभाव और अन्य सूक्ष्म तत्वों का अनुवाद करने में भी सक्षम होना चाहिए ।कुछ लोग कहते हैं किसाहित्य का अनुवाद वास्तव में संभव नहीं है, साहित्य का और साहित्येतर अनुवाद में मूल अंतर यह है कि साहित्येतर बात करते समय मूल, स्त्रोत भाषा के साथ-साथ संबद्ध विषय का भी पर्याप्त ज्ञान आवश्यक होता है ।

परंपरागत भारतीय समाज व्यवस्था में शिक्षा से वंचित कई तबके हैं । घुमन्तू जनजाति आधुनिक युग में शिक्षा के संपर्क में थोड़ी बहुत अब आ गई है । महाराष्ट्र की घुमन्तू जनजाति

के शिक्षित लेखक देखने को मिलते है । मराठी में स्वकथन लिखकर अपने एवं अपने समाज, जीवन की संघर्ष गाथा को वाणी देने की कोशिश की है ।

घुमन्तू जनजीवन की विविधता एवं बोली भाषा की विशेषता के कारण इसका अनुवाद करना बहुत कठिन होता है । इसके अनुवाद की निम्नलिखित समस्याएँ उभर कर आती हैं -

4.1 व्याकरण संबंधी समस्याएँ

घुमन्तू जनजाति की बोली भाषा में व्याकरणिक संगति नहीं होती है । लिंग और वचन को लेकर मराठी में और हिंदी भाषा में काफी अलग-अलग तरह के विचार हैं । लिपि लगभग समान होते हुए भी लिंग, वचन, वाक्य रचना, कारक वर्तनी के नियमों के भिन्नता के कारण इन दो भाषाओं में काफी अंतर है, उसमें समन्वय करके अनुवाद करने में समस्या आती है ।

4.2 लिंगबद्ध समस्याएँ

मराठी में संस्कृत की तरह ही 3 लिंग हैं तो हिंदी में केवल दो ही लिंग हैं ।मराठी के कई नपुंसकलिंग शब्द ही नहीं पुल्लिंग शब्द हिंदी में स्त्रीलिंग है । जैसे अग्नि, सरकार, आत्मा, देह, आवाजआदि। इसके विपरीत मराठी में कुछ स्त्रीलिंग शब्द हिंदी में पुलिंग है, जैसे; छतरी, मजा आदि। साथ ही साथ कई मराठी के नपुंसकलिंग शब्द हिंदी में पुल्लिंगहो जाते हैं । जैसे; झाड़, रूप, ध्यान, कपड़ा आदि।

4.3 वचनबद्ध समस्याएँ

दोनों भाषाओं के एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए अलग-अलग नियम हैं ।

मराठी	हिंदी
कथा	कथा-कथाएँ
वक्ता- वक्ते	वक्ता- अनेक वक्ता
चर्चा	चर्चा- चर्चाएँ
बालिका- अनेक बालिका	बालिका- बालिकाएँ

4.4 कारकबद्ध समस्याएँ

कारक को लेकर दोनों भाषाओं में काफी अंतर है । साथ ही साथ अवयव, रिश्ते, संस्थान आदि मराठी के संबंध में कारक के रूप में लिए जाते हैं । हिंदी में 'के' का प्रयोग होता है । मराठी में'ला' का प्रयोग मिलता है ।

उदाहरण ;

हिंदी :- शंकर के दो बेटे थे।

मराठी :- शंकरला दोन मुले होती।

4.5 शब्द एवं अर्थ में भिन्नता

घुमन्तू जनजातियों के स्वकथनों में ऐसे अनेक शब्द एवं संकल्प आए हैं जिन्हें मराठी में भी पर्याय शब्द मिलना कठिन है । उस शब्द को हिंदी में लाना और भी कठिन है । घुमन्तू जनजाति विशेष की शब्दावली एवं संकल्पनाओं के मूल तक पहुंचकर उसमें निहित अर्थ को पकड़ना अनुवादक के लिए कठिन होता है । मराठी के घुमन्तू स्वकथन में हीर, फुकनी, चर्वी, खपला आदि से सैकड़ों शब्द मिलते हैं जिनका हिंदी अनुवाद करना कठिन है।

सामान्य शब्द	**हिंदी अर्थ**	**मराठी अर्थ**
यात्रा	स्थित	तीर्थ यात्रा
संसार	दुनिया	गृहस्थी
शिक्षा	शिक्षण	दंड

4.6 लिप्यांतरण की समस्या

लिप्यांतरण करते समय मूल भाषा के ध्वनि नियमों का कहाँ तक अनुसरण किया जाए यह एक विवादास्पद विषय है । इस संदर्भ में व्यवहारिक सिद्धांत यही सही लगता है कि लिप्यांतरण से भी अधिक वर्तनी पर अधिक ध्यान दिया जाए। उच्चारण की विशेषताओं के लिए सूचनाएं चाहे तो दे सकते हैं । उदाहरण के लिए मराठी में '**ळ**' उच्चारण हिंदी का 'ल' जैसे होता है । परंतु लिप्यंतरण में '**बाळ** 'को बालक, '**बाल**' या 'बाळ'नहीं लिख सकते हैं । उच्चारण के अनुसार लिप्यंतरण करने में कुछ गड़बड़ियाँ भी हो सकती हैं । दूसरी ओर मूल मराठी नहीं जानने वाले को दिक्कत होती है ऐसी स्थिति में वह शब्द का अर्थ नहीं निकाल पाता है ।

लिप्यंतरण में मूल को ठीक तरह से पढ़ना है तो लिप्यांतरण के कुछ निश्चित नियमों का पालन अनुवादक को करना ही पड़ेगा । अभी तो इस दिशा में एकरूपता का अभाव है ।

4.7 वाक्यगत समस्याएँ

वाक्य भाषा की इकाई होता है । प्रत्येक भाषा का अपना एक वाक्य विन्यास रहता है । अनुवाद के कारण कुछ सीमा तक स्रोत भाषा की वाक्य रचना का प्रभाव लक्ष्य भाषा की वाक्य रचना पर संभव होता है । अनुवाद करते समय शब्द के स्थान पर शब्द रख देने से रचना अव्यवस्थित और अनर्थकारी हो जाती है । घुमन्तू जनजातियों की आत्मकथा में ऐसे अनेक शब्द एवं संकल्पनाएँ आई हैं, जिनका मराठी में भी पर्याय शब्द मिलना कठिन है और उसे हिंदी में लाना और भी मुश्किल है । घुमन्तू जनजाति विशेष की शब्दावली एवं संकल्पना उनके मूल तक पहुंचकर उसमें निहित अर्थ को पकड़ना अनुवादक के लिए बहुत कठिन होता है।

4.8 सांस्कृतिक समस्याएँ

अपनी-अपनी भाषा के रीति-रिवाज तथा पहनावा अलग होने के कारण उनका अनुवाद करना मुश्किल हो जाता है । अनुवाद करते समय मूल कृति के कुछ ऐसे शब्द सामने आते हैं जिसका हिंदी में सही अर्थ देने वाला समानांतर शब्द नहीं मिल पाता है । अनुवाद करते समय उन शब्दों के साथ पर्यायवाची शब्दों को भी नहीं रख सकते हैं, क्योंकि वहां सही भाव व्यक्त नहीं कर सकते । घुमन्तू जनजाति विविध परंपराओं के चलते वे हमेशा प्रदेश में भटकती रहती हैं । इसी कारण प्रस्तुत आत्मकथा में विभिन्न भौगोलिक परिवेश का वर्णन मिलता है । घुमन्तू जनजाति के विभिन्न छोटे-छोटे व्यवसाय, खान-पान, देवी देवता, रूढ़ि-परंपरा पर्व-त्यौहार मेले आदि का

वर्णन इस तरह के लेखनों में हमें देखने को मिलता है । इन सभी का अनुवाद करना कठिन कार्य है । इसलिए कुछ शब्दों को उसी तरह रख कर नीचे पाद टिप्पणियां देनी पड़ती हैं । जिससे शब्द के अर्थ को समझने में आसानी हो और साथ ही भाव भी व्यक्त हो जाएं ।

०१) लुगड़े - साड़ी

०२) कोड्यास - एक विशिष्ट प्रकार की सब्जी

03) गोधडी- ओढ़ने के लिए साड़ियों से बनाया गया चादर ।

4.9 मुहावरे का प्रयोग

आत्मकथा में मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग के कारण रचना आकर्षक बन जाती है। उनका अनुवाद करना बहुत मुश्किल हो जाता है । ऐसी स्थिति में अनुवादक को लक्ष्य भाषा में वैसे ही अर्थ देने वाले मुहावरे का चयन करना पड़ता है जो मूल पाठ का न्याय कर सके ।

जनजातीय विशेष के मुहावरों, कहावतों के हिंदी पर्याय सहज संभव नहीं है। क्योंकि घुमन्तू जनजाति की जीवन शैली एवं संस्कृति से जुड़े मुहावरे, कहावतों का प्रयोग होता है । उसे मराठी में पर्याय उपलब्ध नहीं होते तो हिंदी में लाना और भी कठिन रहता है । इसी तरह कुछ उदाहरण हम नीचे देख सकते हैं ।जिसका प्रयोग आत्मकथा में किया गया है ।

०१) आतडे तुटणे - कलेजा फटना

०२) कंकण हातात भांधणे- किसी काम के लिए प्रतिज्ञा लेना

4.10 गीत एवं काव्य के अनुवाद की समस्याएँ

घुमन्तू जनजातियों की आत्मकथाओं में जनजाति विशेष के लोकगीत एवं काव्य पंक्तियां मिलती हैं । यह गीत अलग-अलग भाव एवं शैलियों में होते हैं । इसमें जनजाति विशेष की जीवन-पद्धति, पीड़ा, दर्द, भाव, लोक-संस्कृति आदि अंतर्भूत रहती हैं । उस भाव और शैली को पकड़ना अनुवादक के लिए कठिन कार्य है । गीतों का प्रयोग भी मूल रचना में मिलता है ।जिसे अपने मूल की गरिमा के साथ लाना श्रम साध्य कार्य है । गीत की ध्वनि आदि स्थानों पर अनुवाद करना कठिन कार्य है । मेले में लोकगीत गाए जाते हैं इसमें सांकेतिक भाषा प्रयोग रहता है । इसका अनुवाद करने में समस्याएं आती हैं । इसलिए अनुवादक के लिए यही बेहतर होगा कि अनुवाद मूल भाषा से लक्ष्य भाषा में लोकगीत एवं काव्य को जैसे के तैसे ही मूल भाषा में रखें और नीचे पाद टिप्पणियों के माध्यम से उसका अर्थ दें ।

उपसंहार

साहित्य और समाज का परस्पर घनिष्ठ संबंध रहा है । समाज में घटित घटनाएं तथा सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन के विविध पहलुओं का चित्रण साहित्य में होता है । साहित्य का भी प्रभाव समाज पर रहता है । इस प्रकार साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध है । साहित्य का आधार मानवतावाद है । साहित्य लेखन की यह मनुष्य सापेक्ष क्रिया है, इसीलिए मानवतावाद के दृष्टिकोण से साहित्य का अध्ययन होना चाहिए । हमें 'साहित्य समाज का दर्पण है' यह वक्तव्य सुनने में बार-बार आता है, लेकिन साहित्य समाज का किस तरह का दर्पण है जिसमें अक्सर बहुजन (दलित, आदिवासी आदि) समाज का चित्रण अस्पष्ट व धुंधला ही होता है । आदिकाल से पूंजीवादी ताकतों का वर्चस्व आदिवासी समाज पर रहा है । ये ताकतें हमेशा आदिवासी समाज के लिए खतरा बन रही हैं । आधुनिक कालमें भी ये ताकतें अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए प्रभुत्व कायम कर रही हैं । यह पूंजीवादी ताकतें आदिवासी समाज के लिए खतरा ही नहीं बल्कि उनके अस्तित्व एवं अस्मिता को मिटाने के लिए भी तत्पर हैं । इस तरह के अपने समाज पर आने वाले गहरे संकटों के प्रतिशोध में, अस्मिता की तलाश में, प्रतिरोध के सशक्त तेवर के साथ आदिवासी साहित्य इस आधुनिक युग में अपनी अलग पहचान बना रहा है । इसी के चलते साहित्य में आत्मकथाओं का लेखन काफी जोरों से चल रहा है ।

कथेतर गद्य साहित्य में आत्मकथा एक महत्वपूर्ण विधा है । इसमें अन्य विधाओं की तरह काल्पनिकता ना होकर लेखक के यथार्थ जीवन का चित्रण अधिक होता है । परंपरागत 'आत्मकथा' शब्द के बजाय अम्बेडकरी साहित्य प्रेरणा से 'स्वकथन' कहा गया । 'स्वकथन' का अर्थ है - स्वयं का अपना 'कथन' । अपने और अपने समाज के बारे में जो अनुभव होते हैं , उसे कथन करना ही 'स्वकथन' है ।

आदिवासी आत्मकथाएक साथ कई वर्चस्वशाली अस्मिताओं पर कड़े सवाल करती है और शोषण करने वाली व्यवस्था की जटिलताओं को उभारती है । इसमें दलित जीवन की त्रासदी मुख्य रूप से चित्रित होती है । भारतीय साहित्य में दलित स्वकथन लेखन की शुरुआत मराठी से हुई है । स्वकथनों में समाज जीवन के विविध पहलुओं का यथार्थ चित्रण होता है । दलित,घुमन्तू स्वकथन की प्रेरणा अम्बेडकरवादी विचारधारा है । दलित साहित्य समाज परिवर्तन के आन्दोलन का सशक्त माध्यम है । घुमन्तू जनजातियों के लेखकों ने स्व-कथनों के माध्यम से घुमन्तू समाज जीवन की वास्तविकता दुनिया के सामने रखी है । इनकी व्याख्या व्यक्तिगत जीवन के साक्ष्य और यथार्थ के रूप में की गयी है, जिसमें पीड़ा, प्रतिशोध, अपमान, घृणा, गरीबी जैसे आदि को सहन करने वाली अनेक रोजमर्रा में घटित होने वाली घटनाओं का वर्णन है । इसके अलावा लेखिका ने भूख की त्रासदी, रोजगार की समस्याओं, सामजिक समुदाय का यथार्थ वर्णन इस आत्मकथा किया है । इन सबके बावजूद आत्मकथा में अंतिम लक्ष्य अवसाद नहीं है । इस आत्मकथा में विरोध और सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा है । पाठक इस आत्मकथा को पढ़ते हुए अभिव्यक्त अवसाद व पीड़ा की बेचैनी से गुजरता है और उसे यह आभास होता है कि यह व्यक्तिगत पीड़ा का आख्यान न होकर यह सामाजिक जीवन का साक्ष्य है ।

महाराष्ट्र में करीब 350 घुमन्तू जनजातियाँ हैं और जनसंख्या में इनकी मात्रा लगभग 15 प्रतिशत हैं । घुमन्तू विषम सामाजिक व्यवस्था के कारण शिक्षा-दीक्षा से दूर रहे हैं । यह जनजाति सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक आदि स्तरों पर पिछड़ गयी है । इन जनजातियों के लगभग 35 स्वकथन लिखे गए हैं । इनमें से कुछ स्वकथनों का हिंदी में अनुवाद हुआ है । मराठी से हिंदी में अनूदित इन स्वकथनों में घुमन्तू की अलग-अलग जनजातियों का जनजीवन चित्रित हुआ है । इसके अंतर्गत उठाईगिरी, कैकाडी, कोल्हाटी, डुग्गी जोशी, बेरड, नाथपंथी, डवरी

गोस्वामी और पोतराज की मार्मिक जीवन कहानी चित्रित हुई है । यह जनजातियाँ उपेक्षित समाज जीवन, भयावह दारिद्र्य और अंधश्रद्धाओं की शिकार हुई है । मेरे इस अनुवाद और विश्लेषण के लघु शोध कार्य द्वारा “मरणकला” आत्मकथा का समाजशास्त्रीय अध्ययन करना प्रस्तुत शोध कार्य का लक्ष्य रहा है ।

अन्य भाषा साहित्य के साथ-साथ मराठी के आदिवासी साहित्य में प्रत्येक विधा का विकास हुआ है । जैसे कहानी, आत्मकथा, उपन्यास, कविता, नाटक आदि का विकास देखने को मिलता है । इन सभी विधाओं में आत्मकथाओं की लेखन की प्रक्रिया ज्यादा हो रही है । इसी तरह जनाबाई गिरहे ने भी अपनी आत्मकथा के माध्यम से जीवन में घटित यथार्थ और उनके समाज के प्रति होने वाले शोषण, अन्याय, जातिभेद, छुआछूत आदि का चित्रण किया है ।

जनाबाई गिरहे अंबेडकर के विचारों से बहुत प्रभावित है । डॉ.अम्बेडकर ने नया संविधान रचा, जिसके तहत समता, स्वतंत्रताऔर बंधुत्व का प्रकाश सभी को समान रूप में प्राप्त हो, शिक्षा, न्याय, सुरक्षाके द्वार उनके लिए भी खुले । इन्हीं विचारों से जगी उनकी सामाजिक चेतना ने एक ऐसे साहित्य सृजन किया जो दलित-आदिवासी और घुमन्तू जनजाति के महिलाओं से संकीर्णता दूर करके उनमें स्वाभिमान जागृत कर सके । इन सभी विचारधाराओं को लेकर ही इस आत्मकथा के माध्यम से जनाबाई गिरहे ने अपने समाज में परिवर्तन लाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया ।

महाराष्ट्र की आदिवासी लेखिकाओं में से इनका भी नाम महत्वपूर्ण रहा है । इनकी आत्मकथा ‘मरणकला’ पढ़ने का अवसर जब मिला, तब मुझे अवगत हुआ कि समाज वंचित घुमन्तू जनजाति (आदिवासी) समाज की स्थिति क्या है ? किस तरह से सारी कठिनाइयों को झेलते हुए अपना जीवन गुजारा करते हुए अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष दिन-रात करते रहते हैं

। गाँवों के किनारे बसने वालेबेरोजगार लोग, विस्थापन से ग्रसित लोग, भूख से तिलमिलाए लोगों का सजीव चित्रण के साथ लेखिका के भी यथार्थ जीवन का सजीव चित्रण देखने को मिलता है । इस आत्मकथा को पढ़कर ऐसा लगता है कि हम स्वयं आदिवासी समाज से जुड़े हुए हैं । इस आत्माकथा के विचारों और संवेदना ने मुझे काफी हद तक प्रभावित किया है ।

इस तरह मराठी आदिवासी साहित्य में जनाबाई गिरहे उभरते हुए रचनाकारों में से एक हैं । इस आत्मकथा का मूल उद्देश्य आदिवासियों की स्थिति को सामने लाकर आदिवासियों में चेतना लाना, उनके अधिकारों को जागृत करना रहा है । साथ ही साथ मराठी आदिवासी समाज की स्थिति, उनकी संस्कृति, रहन-सहन, रीति-रिवाज, घुमन्तु समाज में स्त्री जीवन की त्रासदीको पाठकों के सामने लाना है । इसलिए यह आत्मकथा मराठी के महिला साहित्यकारों में अपना अलग स्थान बना पाई है और पाठकों को बहुत हद तक पसंद भी आयी है । मैं आशा करता हूँ कि हिन्दी साहित्य के पाठकों को भी कुछ हद तक पसंद आएगी और यह अनूदित आत्मकथा साहित्य के पाठकों में भी अपना महत्वपूर्ण स्थान बना पाएगी ।

अंततः यह कह सकते हैं कि घुमन्तू जनजातियों में सुधार लाने के लिए इन्हें शिक्षित करने तथा खेती के लिये जमीन, स्थिर व्यवसाय आदि उत्पादन के स्थिर साधन मिलने की आवश्यकता है । इन्हें राज्य एवं केंद्र सरकार द्वारा अनुसूचित जनजाति घोषित कर इनके विकास के लिए नयी योजनाओं का शुभारंभ करना चाहिए । तभी इन्हें सरकारी योजनाओं का लाभ मिल सकता है । इनके प्रति स्थिर समाज तथा पुलिस प्रशासन व्यवस्था का दृष्ठिकोण सकारात्मक होना जरुरी है । साथ ही साथ इनकी परंपरागत मानसिकता बदलने हेतु विशेष मार्गदर्शन की आवश्यकता है ।

संदर्भग्रंथ सूची

▪ आधार ग्रंथ

अ.क्र	पुस्तक का नाम	लेखक	प्रकाशन	प्रकाशन वर्ष
०१.	मरणकला (आत्मकथा)	जनाबाई गिरहें	गिरहें प्रकाशन, औरंगाबाद	१९९२

▪ सहायक ग्रंथ

अ.क्र	पुस्तक का नाम	लेखक	प्रकाशन	प्रकाशन वर्ष
०१.	उगद्यावरचं	जनाबाई गिरहें	गिरहें प्रकाशन, औरंगाबाद	
०२.	पहाटगणी	जनाबाई गिरहें	गिरहें प्रकाशन, औरंगाबाद	
०३.	हिंदी शब्दकोश	डॉ. हरदेव बिहारी,	राजपाल प्रकाशन	२०११
०४.	अनुवाद विज्ञान	डॉ. भोलानाथ तिवारी	किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली	२०११

AS PER THE UNIVERSITY POLICY, ANTI-PLAGIARISM SCREENING IS NOT REQUIRED FOR THE REGIONAL LANGUAGES

Librarian
Indira Gandhi Memorial Library
UNIVERSITY OF HYDERABAD
Central University P.O.
HYDERABAD-500 046.